Bachelor of Arts

(B.A.)

BECO-101

(Principles of Micro-Economics-I)

Semester-I

Directorate of Distance Education

Guru Jambheshwar University of Science & Technology

HISAR-12500

CONTENTS

(BECO-101)

Semester I

No.	Title	Author	Editor	Page
Semester I				
1	अर्थशास्त्र का अर्थ, क्षेत्र एवं स्वभाव	डॉ. सोमनाथ परूथी	डॉ. सोमनाथ परूथी	3-17
2	आर्थिक प्रणाली का अर्थ, परिभाषा एवं प्रकार	डॉ. सोमनाथ परूथी	---do---	18-30
3	मांग तथा पूर्ति विश्लेषण	डॉ. सोमनाथ परूथी	---do---	31-94
4	उपयोगिता और उपयोगिता सिद्धांत	डॉ. सोमनाथ परूथी	---do--	95-124
5	उपभोक्ता का व्यवहार	डॉ. सोमनाथ परूथी	---do---	125-149
6	लागत एवं आगम विश्लेषण	डॉ. सोमनाथ परूथी	--do---	150-184

Programme Coordinator (BA)

Dr. Shakuntla Devi

DDE, GJUST, Hisar

विषय: अर्थशास्त्र (व्यष्टिगत अर्थशास्त्र के सिद्धांत)	
विषय क्रमांक: बीए BECO-101	**लेखक: डॉ. सोमनाथ परूथी**
अध्याय: 1	**वेट्टर:**
अर्थशास्त्र का अर्थ, क्षेत्र एवं स्वभाव	

संरचना (Structure)

1.0 सीखने के उद्देश्य (Learning Objectives)
1.1 परिचय (Introduction)
1.2 अर्थशास्त्र का अर्थ (Meaning of Economics)
1.2.1 अर्थशास्त्र की परिभाषाएं (Definitions of Economics)
1.3अर्थशास्त्र का क्षेत्र एवं स्वभाव (Scope and Nature of Economics)
1.3.1 अर्थशास्त्र का क्षेत्र (Scope of Economics)
1.3.2 अर्थशास्त्र का स्वभाव (Nature of Economics)
1.4 दुर्लभता और चयन की समस्या (The Problem of Scarcity and Choice)
1.4.1 पहला सिद्धांत (First Principle): लोगों को ट्रेड-ऑफ/समझौताकारी-तालमेल का सामना करना पड़ता है (People Face Trade-offs)
1.4.2 दूसरा नियम (Second Principle): किसी चीज़ की कीमत वह है जो आप उसे पाने के लिए छोड़ देते हैं (The Cost of Something Is What You Give Up to Get It)
1.5 अवसर लागत क्या है? (What is Opportunity Cost?)
1.5.1 उत्पादन संभावना वक्र से अवसर लागत की व्याख्या (Production Possibility Curve Interpretation):
1.5.2 उत्पादन-संभावना वक्र (Production-Possibility Frontier)
1.5.3 अवसर लागत का महत्व (Importance of Opportunity Cost):
1.5.4 अवसर लागत की सीमाएँ (Opportunity Cost Limitations):
1.6 अपनी प्रगति की जाँच करें (Check Your Progress)
1.7 सारांश (Summary)
1.8 कीवर्ड (Keywords)
1.9 स्व-मूल्यांकन परीक्षण (Self-Assessment Test)
1.10 उत्तर आपकी प्रगति की जांच करने के लिए (Answers to check your progress)
1.11 संदर्भ/सुझाई गई पुस्तकें (References/ Suggested Readings)

1.0 सीखने के उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय के अध्ययन के बाद आप निम्नलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति करने में सफल होंगे

1. अर्थशास्त्र से संबंधित विभिन्न परिभाषाएं से अवगत होंगे।
2. अर्थशास्त्र के क्षेत्र एवं उसके स्वभाव से परिचित होंगे।
3. अर्थशास्त्री किन-किन समस्याओं का समाधान ढूंढने का प्रयास करते हैं।
4. आर्थिक सिद्धांत की प्रकृति उसके उपयोग एवं सीमाओं का अध्ययन करेंगे।
5. दुर्लभता और चयन की समस्या के विषय में जानेंगे।
6. अवसर लागत क्या होती है तथा इसे उत्पादन संभावना वक्र की सहायता से कैसे समझा जाता है।

1.1 परिचय (Introduction)

आर्थिक सिद्धांत के स्वरूप को समझने से पहले यह जरूरी है कि अर्थशास्त्र की परिभाषा, विषय वस्तु और इसके क्षेत्र का अध्ययन किया जाए। इसकी परिभाषा के संबंध में अर्थशास्त्रियों में विवाद है। सुविधा के लिए इसे चार भागों में बांटा गया है; धन संबंधी, कल्याण संबंधी, दुर्लभता संबंधी और आर्थिक विकास संबंधी। साथ में जे.के. मेहता द्वारा प्रतिपादित आवश्यकता विहीनता संबंधी परिभाषा की भी चर्चा इस अध्याय में की गई है। विभिन्न परिभाषाओं के अध्ययन से अर्थशास्त्र के क्षेत्र एवं उसके स्वभाव पर बहुत प्रकाश पड़ता है। अर्थशास्त्र का क्षेत्र परिस्थितियों तथा समस्याओं के अनुसार बदलता रहता है तथा यह लोचपूर्ण होता है। अर्थशास्त्र में अध्ययन की जाने वाली मानवीय आर्थिक कल्याण से संबंधित आर्थिक क्रियाओं को दो भागों में बांटा जा सकता है, वर्तमान साधनों के आवंटन की समस्या तथा उत्पादन के साधनों की वृद्धि की समस्या। एक अर्थशास्त्री का कार्य इनके समाधान ढूंढना और यही अर्थशास्त्र की विषय सामग्री है। अर्थशास्त्र के स्वभाव के संबंध में हम जानने की कोशिश करते हैं कि अर्थशास्त्र विज्ञान है या कला है? अर्थशास्त्र वास्तविक विज्ञान है अथवा आदर्श विज्ञान है? अंत में हम अध्ययन करेंगे कि आर्थिक सिद्धांत की प्रकृति क्या है इसके उपयोग और सीमाओं पर दृष्टि डालेंगे।

1.2 अर्थशास्त्र का अर्थ (Meaning of Economics)

अर्थव्यवस्था (*economy*) शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द ओइकोनोमोस (*oikonomos*) से हुई है, जिसका अर्थ है "वह जो घर का प्रबंधन करता है (one who manages a household)।" शुरू शुरू में देखने पर यह अजीब लग सकता है। लेकिन वास्तव में, घरों और अर्थव्यवस्थाओं में बहुत सी समानताएं है।

एक परिवार के मुखिया को कई निर्णय लेने पड़ते हैं। उसे यह तय करना होता है कि घर का कौन सा सदस्य क्या काम करेगा और बदले में उसे क्या मिलना चाहिए; जैसे रात का खाना कौन बनाएगा ? कपड़ों की धुलाई कौन करेगा? रात के खाने में अतिरिक्त मिठाई किसे मिलेगी? कार कौन चलाएगा इत्यादि? संक्षेप में, प्रत्येक सदस्य की क्षमताओं, प्रयासों और इच्छाओं को ध्यान में रखते हुए, एक परिवार के मुखिया को अपने विभिन्न सदस्यों के बीच अपने दुर्लभ संसाधनों (समय, मिठाई, कार का माइलेज) को आवंटित करना होता है ।

एक परिवार के मुखिया की तरह, एक समाज को कई फैसलों का सामना करना पड़ता है। जैसे कि कौन से काम किए जाएंगे और कौन करेगा। उदाहरण के तौर पर कुछ लोगों की जरूरत भोजन उगाने के लिए, अन्य लोगों की जरूरत

कपड़े बनाने के लिए, कंप्यूटर सॉफ्टवेयर डिजाइन करने के लिए और अभी भी अन्य काम करने के लिए होती है। जब एक बार समाज में सभी के काम निर्धारित हो जाते हैं तो यह भी निर्धारित करना होता है कि वस्तुओं और सेवाओं का आवंटन किस प्रकार से होगा। इसी से निर्धारित होता है कि कैवियार (एक प्रकार की मछली) कौन खाएगा और आलू कौन खाएगा । फेरारी से सफर कौन करेगा और बस से सफर कौन करेगा।

समाज के संसाधनों का प्रबंधन बहुत जरूरी है क्योंकि संसाधन दुर्लभ है। **दुर्लभता का अर्थ** है कि समाज के पास सीमित संसाधन हैं और इसलिए वह उन सभी वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन नहीं कर सकता जो लोग चाहते हैं। जिस प्रकार एक घर के प्रत्येक सदस्य को वह सब कुछ नहीं मिल सकता जो वह चाहता है, ठीक उसी प्रकार समाज में प्रत्येक व्यक्ति उच्चतम जीवन स्तर प्राप्त नहीं कर सकता है जिसकी वह आकांक्षा कर सकता है।

1.2.1 अर्थशास्त्र की परिभाषाएं (Definitions of Economics)

अर्थशास्त्र इस बात का अध्ययन है कि समाज अपने दुर्लभ संसाधनों का प्रबंधन कैसे करता है। अधिकांश देशों में/ अर्थव्यवस्थाओं में/ समाजों में, संसाधनों का आवंटन एक सर्वशक्तिमान तानाशाह द्वारा नहीं बल्कि लाखों परिवारों और फर्मों की संयुक्त पसंद (choices) के द्वारा किया जाता है। इसलिए, अर्थशास्त्री इस बात का अध्ययन करते हैं कि लोग निर्णय कैसे लेते हैं: वे कितना काम करते हैं, क्या खरीदते हैं, कितना बचत करते हैं और अपनी बचत का निवेश कैसे करते हैं। अर्थशास्त्री यह भी अध्ययन करते हैं कि लोग एक दूसरे के साथ कैसे बातचीत/व्यवहार करते हैं। उदाहरण के लिए, अर्थशास्त्री इस बात की जांच करते हैं कि कैसे एक वस्तु के क्रेताओं और विक्रेताओं की भीड़ मिलकर किसी वस्तु की कीमत और मात्रा का निर्धारण करती है। अंत में, अर्थशास्त्री उन शक्तियों और प्रवृत्तियों का विश्लेषण करते हैं जो समग्र रूप से अर्थव्यवस्था को प्रभावित करती हैं, जिसमें औसत आय में वृद्धि, आबादी का वह हिस्सा जिसे काम नहीं मिल सकता है, और जिस दर पर कीमतें बढ़ रही हैं।

अर्थशास्त्र से संबंधित अनेक परिभाषाएं हैं परंतु इनमें से कोई भी पूर्णतया दोषमुक्त नहीं है मुख्य रूप से हम इन्हें चार शीर्षकों के अंतर्गत करेंगे

1. धन प्रधान परिभाषाएं

परंपरावादी अर्थशास्त्री विशेष रूप से एडम स्मिथ ने अर्थशास्त्र को धन का विज्ञान कहा है। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक An Enquiry into The Nature and Causes of the Wealth of Nations (1776) में उन्होंने बताया है किअर्थशास्त्र का मुख्य उद्देश्य राष्ट्र की भौतिक संपत्ति में वृद्धि करना है। जे.बी. से के अनुसार अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जो धन का अध्ययन करता है. वाकर के अनुसार अर्थशास्त्र ज्ञान की वह शाखा है जो धन से संबंधित है। जॉन स्टूअर्ट मिल के अनुसार राजनीतिक अर्थशास्त्र का संबंध धन के स्वभाव उनके उत्पादन और वितरण के नियम से है।

2. कल्याण संबंधी नव परंपरावादी दृष्टिकोण

मार्शल ने धन की परिभाषा के दोषों को दूर करने के उद्देश्य से अर्थशास्त्र की अपनी परिभाषा में मनुष्य पर बल दिया धन साथ देने बनकर मानवीय कल्याण के साधन के रूप में सामने आया उन्होंने अपनी पुस्तक The Principles of Economics में अर्थशास्त्र को इस प्रकार परिभाषित किया कि राजनीतिक अर्थशास्त्र अथवा अर्थशास्त्र मानव जाति के साधारण व्यापार का अध्ययन है यह व्यक्तिगत सामाजिक क्रियाओं के उस भाग का परीक्षण करता है जिसका विशेष संबंध जीवन में कल्याण अथवा सुख से संबंधित भौतिक साधनों की प्राप्ति एवं उपभोक्ता है।

इस परिभाषा में मानव कल्याण पर बल दिया गया है तथा यह परिभाषा जीवन के साधारण व्यवसाय संबंधी क्रियाओं का अध्ययन करती है जो भौतिक साधनों की प्राप्ति तथा उनके उपयोग पर बल देती है। इसके अतिरिक्त यह परिभाषा समाज में रहने वाले मनुष्यों की भौतिक कल्याण से संबंधित क्रियाओं का अध्ययन करती है तथा व्यक्तिगत एवं सामाजिक दोनों कार्यों पर बल देती है।

3. दुर्लभता संबंधी रॉबिंस का दृष्टिकोण

रॉबिंस की 1932 में प्रकाशित पुस्तक An Essay on the Nature and Significance of Economic Science से पहले अर्थशास्त्रियों ने अर्थशास्त्र की परिभाषा तथा विषय सामग्री से संबंधित कोई क्रमबद्ध तथा निश्चित विवेचना नहीं की परंतु रॉबिंस के अनुसार अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जो साधुओं तथा वैकल्पिक उपयोग वाले सीमित साधनों के संबंध के रूप में मानव व्यवहार का अध्ययन करती है।

इस परिभाषा में साध्य से मतलब आवश्यकताओं से है जोकि अनंत है तथा एक की संतुष्टि के बाद दूसरी पैदा हो जाती है सभी आवश्यकताएं एक समान महत्व की नहीं होती। कम महत्व की आवश्यकताओं का त्याग करना पड़ता है आवश्यकताएं की पूर्ति के लिए साधन सीमित है। साधनों के वैकल्पिक उपयोग भी संभव है। यह चुनाव की क्रिया ही आर्थिक समस्या है और इस प्रकार की समस्याओं का अध्ययन ही अर्थशास्त्र का विषय है।

4. विकास केंद्रित परिभाषा

रॉबिंस की परिभाषा विकास की समस्या को सम्मिलित नहीं करती तथा पूर्णतया स्थैतिक प्रवृत्ति की है। इन दोषों को दूर करने के लिए सैमुएलसन ने परिभाषा दी, जो कालांतर में साधनों एवं आवश्यकताओं/साध्यों में होने वाले गतिशील परिवर्तनों को शामिल करती है इसीलिए इसे विकास संबंधी परिभाषा कहते हैं। उनके अनुसार *अर्थशास्त्र इस बात का अध्ययन करता है कि मनुष्य और समाज अनेक प्रयोगों में लाए जा सकने वाले उत्पादन के सीमित साधनों का चुनाव एक समय अवधि में विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन में लगने एवं उनको समाज में विभिन्न व्यक्तियों और समूहों में उपभोग हेतु वर्तमान तथा भविष्य में बांटने के लिए किस प्रकार करते हैं*। ऐसा वे चाहे मुद्रा का प्रयोग करके करें अथवा इसके बिना करें।

सैमुएलसन भी असीमित आवश्यकताओं के प्रति सीमित साधन जिनका विभिन्न प्रकार से प्रयोग हो सकता है पर बल देते हैं किंतु सैमुएलसन समय तत्वों को शामिल करके अपनी अपनी भाषा को प्रायोगिक बना दिया है। सैमुएलसन की परिभाषा का क्षेत्र रॉबिंस की परिभाषा से अधिक विस्तृत है। यह ऐसी अर्थव्यवस्था पर भी लागू होती है जिसमें वस्तु विनिमय प्रणाली को भी शामिल किया जाता है।

5. जे के मेहता की आवश्यकता विहीनता संबंधी परिभाषा

जेके मेहता को भारतीय दार्शनिक सन्यासी और अर्थशास्त्रि कहा जाता है। इनका दृष्टिकोण पाश्चात्य अर्थशास्त्रियों से सर्वथा भिन्न है जिसमें भारतीय संस्कृति, धर्म तथा नैतिकता का प्रतिनिधित्व हुआ है। वह रॉबिंस से इस विषय में सहमत नजर आते हैं कि अर्थशास्त्र मानव व्यवहार का अध्ययन है जिसका लक्ष्य अधिकतम संतुष्टि की प्राप्ति है किंतु इस अभीष्ट लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए दो रास्ते अपनाए जा सकते हैं। पहला अधिकतम संतुष्टि के लिए इच्छाओं में वृद्धि और उसे प्राप्त करने के लिए संतुष्टि के साधनों में वृद्धि लाई जाए। यह भौतिकवादी पक्ष है जो पाश्चात्य अर्थशास्त्री अर्थशास्त्रियों द्वारा समर्थित है। दूसरा रास्ता भारतीय और अध्यात्मिक है जिसके अनुसार अधिकतम संतुष्टि की प्राप्ति इच्छा में कमी करके प्राप्त की जा सकती है क्योंकि जितनी इच्छाएं अधिक होगी संतुष्टि के अभाव में

उनसे असंतुष्टि भी उतनी अधिक होगी। वास्तविक सुख की प्राप्ति के लिए इच्छाओं को न्यूनतम करना होगा अर्थात इच्छाओं से मुक्ति पाना ही आर्थिक समस्या है।

1.3 अर्थशास्त्र का क्षेत्र एवं स्वभाव (Scope and Nature of Economics)

1.3.1 अर्थशास्त्र का क्षेत्र (Scope of Economics)

पहली बार अर्थशास्त्र विषय लेने वाले अधिकांश विद्यार्थी अपने अध्ययन के क्षेत्र से हैरान हो सकते हैं। कुछ विद्यार्थी सोचते होंगे हैं कि अर्थशास्त्र उन्हें शेयर बाजार के बारे में सिखाएगा या उनके पैसे का उपयोग कैसे करना है। कुछ को लगता होगा है कि अर्थशास्त्र विशेष रूप से मुद्रास्फीति और बेरोजगारी जैसी समस्याओं से संबंधित है। वास्तव में, यह उन सभी विषयों से संबंधित है, लेकिन वे एक बहुत बड़ी पहेली के छोटे-छोटे भाग हैं। अर्थशास्त्री विषयों की एक विस्तृत श्रृंखला का अध्ययन करने के लिए अपने उपकरणों का उपयोग करते हैं।

वह विषय वस्तु जिसका अध्ययन हम अर्थशास्त्र में करते हैं उसे अर्थशास्त्र का क्षेत्र कहा जाता है। अर्थशास्त्र की विषय वस्तु एक कठिन प्रशन है। इस संबंध में अर्थशास्त्रियों में काफी मतभेद पाया जाता है। केन्ज के नाम लिखे गए अपने एक पत्र में मार्शल ने इसका तथ्य पूर्ण उत्तर दिया है। मार्शल ने कहा है यह लगभग हर विज्ञान के बारे में सच है कि हम उसका जितना अधिक अध्ययन करते हैं हमें उसका क्षेत्र उतना ही विशाल प्रतीत होता है, चाहे वास्तव में उसका क्षेत्र करीब-करीब अपरिवर्तित रहा हो परंतु अर्थशास्त्र के विषय-वस्तु में तेजी से बढ़ोतरी हुई है। मोटे तौर पर एडम स्मिथ से लेकर पीगू तक अर्थशास्त्र के अधिकांश विचाकों ने अर्थशास्त्र की विषय वस्तु की या तो यह परिभाषा दी है कि यह ऐसा विज्ञान है जो भौतिक कल्याण के कारणों का अध्ययन करता है। या फिर यह धन का विज्ञान है। विशेष रूप से मार्शल ने इसे जीवन के सामान्य व्यापार में लगे हुए व्यक्तियों के द्वारा धन के उपयोग, उपभोग, उत्पादन, विनिमय तथा वितरण तक सीमित रखा जो विचारशील है, और वर्तमान सामाजिक, वैधानिक तथा संस्थानिक व्यवस्था के अंतर्गत कार्य करते हैं। यह सामाजिक दृष्टि से अवंचित या असाधारण व्यक्तियों जैसे शराबियों कंजूसों चोरों इत्यादि के व्यवहार तथा क्रियाओं का बहिष्कार कर देता है।

अर्थशास्त्र की विभिन्न परिभाषाओं के अध्ययन से हमें काफी कुछ उसके क्षेत्र एवं स्वभाव के बारे में पता चलता है। वाइनर के अनुसार "वही अर्थशास्त्र की विषय वस्तु है एवं उसका क्षेत्र है जिसका अध्ययन एक अर्थशास्त्री करता है" अर्थशास्त्र का क्षेत्र परिस्थितियों एवं समस्याओं के अनुसार परिवर्तनशील है। मानवीय आर्थिक कल्याण से संबंधित आर्थिक क्रियाओं को दो भागों में बांटा जा सकता है। वर्तमान साधनों के आवंटन की समस्या तथा उत्पादन के साधनों की वृद्धि की समस्या। इस उद्देश्य से एक अर्थशास्त्री विभिन्न प्रश्नों के समाधान ढूंढने की कोशिश करता है जैसे कि:

1. अर्थव्यवस्था में उपलब्ध सभी साधनों का क्या पूर्ण उपयोग हो चुका है? इसके अंतर्गत यह देखा जाता है कि सीमित अथवा दुर्लभ साधनों का पूर्ण उपयोग हो रहा है या नहीं।
2. साधनों के आवंटन की समस्या अर्थात उपलब्ध साधनों से किन वस्तुओं का उत्पादन किया जाए? क्योंकि साधन सीमित है।
3. वस्तुओं के उत्पादन की प्रविधि क्या है अर्थात वस्तुओं का उत्पादन कैसे करें?
4. राष्ट्रीय उत्पादन का समाज के विभिन्न वर्गों के बीच वितरण कैसे हो? अर्थात किसके लिए उत्पादन किया जाए?
5. साधनों के अनुकूलतम प्रयोग की समस्या इसका अर्थ यह है कि अर्थव्यवस्था को सदैव कुछ वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन का त्याग करके कुछ अन्य का उत्पादन बढ़ाना चाहिए।

6. अर्थव्यवस्था की उत्पादन क्षमता में वृद्धि हो या कमी हो है इसके अंतर्गत आर्थिक विकास एवं समृद्धि का अध्ययन किया जाता है। वृद्धि को तेज करने के लिए पूंजी निर्माण की दर को ऊंचा करना एवं नवप्रवर्तन और अधिक दक्ष तकनीक के माध्यम से उत्पादन को बढ़ाने पर बल देना चाहिए।

आप जो पढ़ रहे हैं उसकी व्यापकता और गहराई को महसूस करने का सबसे आसान तरीका यह है कि अर्थशास्त्र को व्यवस्थित करने के तरीके का संक्षेप में पता लगाया जाए। सबसे पहले, अर्थशास्त्र के दो प्रमुख भाग हैं: व्यष्टि अर्थशास्त्र (Microeconomics) और समष्टि अर्थशास्त्र (Macroeconomics)।

व्यष्टिअर्थशास्त्र (Microeconomics) व्यक्तिगत उद्योगों के कामकाज और व्यक्तिगत आर्थिक निर्णय लेने वाली इकाइयों अर्थात फर्म (firms) और घर (households) के व्यवहार से संबंधित है। क्या उत्पादन करना है और कितना चार्ज करना है, इस बारे में फर्मों की पसंद क्या है, और कितना खरीदना है इसके बारे में परिवारों की पसंद, यह समझाने में मदद करती है कि अर्थव्यवस्था वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन क्यों करती है?

सूक्ष्मअर्थशास्त्र का एक और बड़ा प्रश्न यह है कि उत्पादित वस्तुओं और सेवाओं को कौन प्राप्त करता है? उत्पादन के वितरण को निर्धारित करने वाली शक्तियों को समझना सूक्ष्मअर्थशास्त्र का क्षेत्र है। सूक्ष्मअर्थशास्त्र हमें यह समझने में मदद करता है कि घरों (households) में संसाधनों का वितरण कैसे किया जाता है। कौन तय करता है कि कौन अमीर है और कौन गरीब?

समष्टि अर्थशास्त्र (Macroeconomics)अर्थव्यवस्था को समग्र रूप से देखता है। यह समझने की कोशिश करने के बजाय कि एक फर्म या उद्योग का उत्पादन कैसे निर्धारित होता है या एक एकल परिवार या परिवारों के समूह के उपभोग पैटर्न क्या हैं, **समष्टि अर्थशास्त्र** उन कारकों की जांच करता है जो राष्ट्रीय उत्पादन या राष्ट्रीय उत्पाद निर्धारित करते हैं। व्यष्टि अर्थशास्त्र का संबंध *घरेलू आय* से है; समष्टि अर्थशास्त्र *राष्ट्रीय आय* से संबंधित है। व्यष्टिअर्थशास्त्र व्यक्तिगत उत्पाद की कीमतों और सापेक्ष कीमतों पर केंद्रित है, समष्टि अर्थशास्त्र समग्र मूल्य स्तर को देखता है और यह कितनी जल्दी (या धीरे-धीरे) बढ़ रहा है (या गिर रहा है)। व्यष्टिअर्थशास्त्र प्रश्न करता है कि इस वर्ष किसी विशेष उद्योग या एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में कितने लोगों को काम पर रखा जाएगा (या निकाल दिया जाएगा) और उन कारकों पर ध्यान केंद्रित करता है जो यह निर्धारित करते हैं कि एक फर्म या उद्योग कितना श्रम किराए पर लेगा। समष्टि अर्थशास्त्र सकल रोजगार और बेरोजगारी से संबंधित है: अर्थव्यवस्था में कुल कितनी नौकरियां मौजूद हैं और कितने लोग काम करने के इच्छुक हैं, उन्हें काम नहीं मिल रहा है।

1.3.2 अर्थशास्त्र का स्वभाव (Nature of Economics)

सबसे पहले कि हम यह विचार करें कि अर्थशास्त्र कला है या विज्ञान वास्तविक विज्ञान या आदर्श विज्ञान हम यह जाने की विज्ञान तथा कला का क्या अर्थ है।

विज्ञान (Science): विज्ञान किसी विषय के ज्ञान का व्यवस्थित तथा क्रमबद्ध अध्ययन है। पोइनकेअर के अनुसार जिस प्रकार एक मकान का निर्माण ईटों द्वारा होता है उसी प्रकार विज्ञान तथ्य द्वारा निर्मित है। पर जिस प्रकार ईटों का ढेर मकान नहीं है उसी प्रकार से मात्र तथ्यों का एकत्रित करना विज्ञान नहीं है। उद्देश्य, पर्यविक्षण (observation) प्रयोग तथा विश्लेषण के द्वारा सत्य की खोज करना विज्ञान है।

अर्थशास्त्र विज्ञान के रूप में (Economics as Science): अर्थशास्त्र विज्ञान भी है क्योंकि इसके अध्ययन में वैज्ञानिक विधियों का पालन किया जाता है। पर्यविक्षण, तथ्यों का एकत्रित करना, विश्लेषण, वर्गीकरण तथा उसके

आधार पर नियम का निर्देशन अर्थशास्त्र में किया जाता है। अन्य प्राकृतिक विज्ञानों की तरह इसमें भी नियम है। किंतु यह उतने सत्य नहीं होते जितने प्राकृतिक विज्ञानों के नियम होते हैं। अर्थशास्त्र के नियम कुछ मान्यताओं पर आधारित है। अगर यह मान्यताएं अपरिवर्तित रहे तो नियम लागू होगा इसलिए अर्थशास्त्र को विज्ञान मानना ठीक होगा।

अर्थशास्त्र कला के रूप में (Economics as Art): कला विज्ञान का व्यावहारिक पहलू है। अर्थात कला विज्ञान का क्रियात्मक रूप है। कला एवं विज्ञान एक दूसरे के पूरक है। किसी विषय का यदि क्रमबद्ध ज्ञान प्राप्त करते हैं तो वह विज्ञान है। परंतु उसका क्रमबद्ध तथा उत्तम प्रयोग कला है। अर्थशास्त्र का अपना व्यावहारिक पहलू भी है। इसलिए अर्थशास्त्र का कला पक्ष भी है। क्लासिक अर्थशास्त्रियों ने नियमों का निर्देशन करना ही अर्थशास्त्री का कार्य माना है। अतः इन्होंने अर्थशास्त्र को अन्य प्राकृतिक विज्ञानों की श्रेणी में रखा है। समाजवाद के समर्थकों ने सिद्धांत पक्ष की उपेक्षा, व्यवहार पक्ष पर विशेष बल दिया है। और विज्ञान के ऊपर कला की प्रभुसत्ता स्थापित की। क्योंकि अर्थव्यवस्था में कई सुधार लाने थे। नव परंपरावादी अर्थशास्त्री मार्शल ने दोनों के बीच का रास्ता अपनाया। मार्शल का विचार था कि अर्थशास्त्र को विज्ञान एवं कला कहने से उत्तम होगा कि इसे विशुद्ध एवं व्यावहारिक विज्ञान कहें। रॉबिन्स अर्थशास्त्र को विज्ञान मानते थे। पर आजकल अर्थशास्त्र का व्यावहारिक महत्व बढ़ता जा रहा है। अतः अर्थशास्त्र का कला पक्ष पुणे प्रभावपूर्ण हो गया है। हम कह सकते हैं कि अर्थशास्त्र एक विज्ञान है जिसके व्यवहारिक पक्ष अथवा कला पक्ष की अवहेलना नहीं की जा सकती।

1.4 दुर्लभता और चयन की समस्या (The Problem of Scarcity and Choice)

इस बात में कोई रहस्य नहीं है कि अर्थव्यवस्था क्या है चाहे हम भारत की अर्थव्यवस्था की बात, करें संयुक्त राज्य अमेरिका की अर्थव्यवस्था की बात करें, या पूरे विश्व की अर्थव्यवस्था की बात करें. **एक अर्थव्यवस्था** सिर्फ लोगों का एक समूह है जो एक दूसरे के साथ व्यवहार करते हैं जो अपने आर्थिक निर्णयों के बारे में सोचते हैं. क्योंकि एक अर्थव्यवस्था का व्यवहार इन्हीं व्यक्तियों के व्यवहार को दर्शाता है जिनसे अर्थव्यवस्था बनी है.

एक अर्थव्यवस्था दो बुनियादी तथ्यों के कारण मौजूद है। पहला, वस्तुओं और सेवाओं के लिए मानव की इच्छाएं असीमित हैं, और दूसरा, उत्पादन के साधन जिनके द्वारा वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन करना **दुर्लभ** है। हमारी आवश्यकताएँ वस्तुतः असीमित होने के कारण और संसाधनों के दुर्लभ होने के कारण, हम अपनी इच्छा की सभी चीज़ों का उत्पादन नहीं कर सकते। इसलिए एक समाज को अपने सदस्यों की अधिकतम संभव संतुष्टि प्राप्त करने के लिए अपने दुर्लभ संसाधनों का उपयोग करने का निर्णय लेना होता है। वस्तुएं दुर्लभ हैं क्योंकि उत्पादन के साधन दुर्लभ हैं

अर्थव्यवस्था में जब लोग निर्णय लेते हैं तो उनके निर्णय कुछ नियमों पर आधारित होते हैं जिनमें से दो नियमों का यहां पर हम जिक्र करेंगे

1.4.1 पहला सिद्धांत (First Principle)

लोगों को ट्रेड-ऑफ/समझौताकारी-तालमेल का सामना करना पड़ता है (People Face Trade-offs): आपने पुरानी कहावत सुनी होगी, "मुफ्त लंच जैसी कोई चीज नहीं होती है।" व्याकरण के अलावा, इस कहावत में बहुत सच्चाई है। हमें जो पसंद है उसे पाने के लिए हमें आमतौर पर कुछ और, जो हमें पसंद है छोड़ना पड़ता है। निर्णय लेने के लिए एक लक्ष्य को दूसरे के विरुद्ध समझौताकारी तालमेल/समन्वयन स्थापित करना आवश्यक है।

एक विद्यार्थी के बारे में सोचें, जिसे यह तय करना होगा कि उसे अपने सबसे मूल्यवान संसाधन-अपने समय को कैसे आवंटित करना है। वह अपना सारा समय अर्थशास्त्र विषय का अध्ययन करने में बिता सकती है, मनोविज्ञान विषय का अध्ययन करने में अपना सारा समय व्यतीत कर सकती है, या दोनों विषयों के बीच विभाजित कर सकती है। हर घंटे के लिए वह एक विषय (अर्थशास्त्र) का अध्ययन करती है, परंतु वह हर एक घंटा जिसमें वह दूसरे विषय (मनोविज्ञान) का अध्ययन कर सकती थी, छोड़ देती है। और हर एक घंटा जो वह पढ़ाई में बिताती है, उसका उपयोग वह झपकी, बाइक की सवारी, टीवी देखने, या अपनी अंशकालिक नौकरी (part-time job) पर काम करने में बिता सकती है। या माता-पिता पर विचार करें कि वे अपनी पारिवारिक आय को कैसे खर्च करते हैं। वे परिवार के लिए भोजन, कपड़े खरीद सकते या छुट्टियां बिताने पर खर्च कर सकते हैं। या वे सेवानिवृत्ति के लिए या बच्चों की कॉलेज शिक्षा के लिए परिवार की कुछ आय बचा सकते हैं। जब वे इनमें से किसी एक वस्तु पर अतिरिक्त रुपया खर्च करना चुनते हैं, तो उनके पास किसी अन्य वस्तु पर खर्च करने के लिए एक रुपया कम होता है।

जब समाज में लोगों के विभिन्न समूह बनते हैं, तो उन्हें विभिन्न प्रकार के व्यापार-बंदों (समझौताकारी तालमेल/समन्वयन) का सामना करना पड़ता है। एक क्लासिक ट्रेड-ऑफ "बंदूकें और मक्खन" के बीच है। एक समाज जितना अधिक विदेशी आक्रमणकारियों से अपने तटों की रक्षा के लिए राष्ट्रीय रक्षा (बंदूकों) पर खर्च करता है, उतना ही कम वह घर पर जीवन स्तर को बढ़ाने के लिए अर्थात उपभोक्ता वस्तुओं (मक्खन) पर खर्च कर कर पाता है। आधुनिक समाज में भी स्वच्छ पर्यावरण और उच्च स्तर की आय के बीच महत्वपूर्ण व्यापार बंद (समझौताकारी तालमेल/समन्वयन) पाया जाता है। जो कानून फर्मों को प्रदूषण कम करने का आदेश देते हैं उनसे वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन की लागत बढ़ती है क्योंकि इन उच्च लागतों के कारण, फर्में कम लाभ अर्जित करती हैं, कम मजदूरी का भुगतान करती हैं, उच्च मूल्य वसूलती हैं, या इन तीनों का कुछ संयोजन करती हैं। इस प्रकार, जबकि प्रदूषण नियम एक स्वच्छ वातावरण और इसके साथ आने वाले बेहतर स्वास्थ्य का लाभ देते हैं, इन नियमों का पालन फर्मों के मालिकों, श्रमिकों और ग्राहकों की आय को कम करने की कीमत पर होता हैं।

समाज एक और व्यापार बंद का सामना करता है जो कि दक्षता और समानता के बीच है **दक्षता** (efficiency) का अर्थ है कि समाज अपने दुर्लभ संसाधनों से अधिकतम लाभ प्राप्त कर रहा है। **समानता** (equality) का अर्थ है कि उन लाभों को समाज के सदस्यों के बीच समान रूप से वितरित किया जाता है। दूसरे शब्दों में, दक्षता आर्थिक पाई के आकार को संदर्भित करती है, और समानता यह दर्शाती है कि पाई को अलग-अलग स्लाइस में कैसे विभाजित किया जाता है।

जब सरकारी नीतियां तैयार की जाती हैं, तो ये दो लक्ष्य अक्सर परस्पर विरोधी होते हैं। उदाहरण के लिए, आर्थिक कल्याण के वितरण को समान करने के उद्देश्य से नीतियों पर विचार करें। इनमें से कुछ नीतियां, जैसे कल्याण प्रणाली या बेरोजगारी बीमा, समाज के उन सदस्यों की मदद करने का प्रयास करती हैं जिन्हें सबसे ज्यादा जरूरत है। अन्य, जैसे कि व्यक्तिगत आयकर, आर्थिक रूप से सफल लोगों को सरकार का समर्थन करने के लिए दूसरों की तुलना में अधिक योगदान करने के लिए कहते हैं। हालांकि वे अधिक समानता प्राप्त करते हैं, ये नीतियां दक्षता को कम करती हैं। जब सरकार अमीरों से गरीबों को आय का पुनर्वितरण करती है, तो यह कड़ी मेहनत के प्रतिफल को कम कर देती है; परिणामस्वरूप, लोग कम काम करते हैं और कम वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन करते हैं। दूसरे शब्दों में, जब सरकार आर्थिक पाई को अधिक समान टुकड़ों में काटने की कोशिश करती है, तो पाई छोटी हो जाती है।

जब सरकार नीतियां बनाती है तो यह दो लक्ष्य अक्सर परस्पर विरोधाभासी होते हैं। उदाहरण के तौर पर इनमें से कुछ नीतियां कल्याणकारी हो सकती है। जिससे गरीब लोगों की मदद की जा सके जैसे कि बेरोजगारी भत्ता,

प्रगतिशील आयकर अर्थात जिन लोगों की आय कम है उनके ऊपर कम दर से कर लगाना और जिन लोगों की आय अधिक है उन पर अधिक दर से कर लगाना इत्यादि। हालांकि इन नीतियों से आर्थिक समानता प्राप्त की जा सकती है परंतु यह असर दक्षता को कम करती है। जब सरकार आय का पुनर वितरण अमीरों से गरीबों की तरफ करती है तो इसका असर यह होता है कि जो अधिक मेहनत करने वाले हैं वह मेहनत से मन चुराना शुरू कर देते हैं जिसका परिणाम यह होता है कि वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन कम हो जाता है। यदि अन्य शब्दों में बात करें जब सरकार आर्थिक पाई को छोटे-छोटे हिस्सों में काटने की कोशिश करती है तो पाई का आकार छोटा हो जाता है।

इस बात को स्वीकार करते हुए कि लोग समझौताकारी-तालमेल का सामना करते हैं हमें यह बात अपने आप से पता नहीं लगती कि उन्हें क्या निर्णय लेने चाहिए अर्थात होने क्या करना चाहिए। एक छात्र को मनोविज्ञान विषय के अध्ययन को सिर्फ इसलिए नहीं छोड़ना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से और शास्त्र के अध्ययन के लिए उपलब्ध समय में वृद्धि हो जाएगी। समाज को पर्यावरण की रक्षा करना इसलिए बंद नहीं कर देना चाहिए क्योंकि पर्यावरण के नियमों का पालन करने से हमारे जीवन स्तर कम हो जाएगा। गरीबों को सिर्फ इसलिए नजरअंदाज नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि उनकी मदद करने से कार्य प्रोत्साहन विकृत हो जाता है। फिर भी लोगों के अच्छे निर्णय लेने की संभावना तभी होती है जब उन विकल्पों को समझ लेते हैं जो उनके लिए उपलब्ध है। इसलिए अर्थशास्त्र का हमारा अध्ययन जीवन के उतार-चढ़ाव को स्वीकार करके शुरू होता है।

1.4.2 दूसरा नियम (Second Principle)

किसी चीज़ की कीमत वह है जो आप उसे पाने के लिए छोड़ देते हैं (The Cost of Something Is What You Give Up to Get It):

जैसा कि हम पढ़ चुके हैं कि लोगों को निर्णय लेते वक्त व्यापारकारी-तालमेलों का सामना करना पड़ता है तो ऐसे ऐसी स्थिति में लोग विभिन्न विकल्पों से प्राप्त होने वाले लाभ और हानियों की तुलना करते हैं। अर्थशास्त्र दुर्लभता का अध्ययन है अर्थात मानव की जरूरतों को पूरा करने के लिए दुर्लभ संसाधनों के आवंटन का अध्ययन। क्योंकि लोगों की भौतिक आवश्यकताएं असीमित हैं। अर्थशास्त्र तीन महत्वपूर्ण प्रश्नों को हल करने में मदद करता है कि क्या उत्पादन करना है, कैसे उत्पादन करना है और किसके लिए उत्पादन करना है। क्या उत्पादन करना है इसमें उत्पादन के लिए वस्तुओं और सेवाओं के प्रकार और मात्रा के बारे में निर्णय शामिल हैं। उत्पादन कैसे किया जाए, इस बारे में निर्णय लेने की आवश्यकता है कि किस तकनीक का उपयोग किया जाए और उत्पादन में आर्थिक संसाधनों (या उत्पादन के कारकों- भूमि, श्रम और पूंजी) को कैसे लगाया जाए। किसके लिए उत्पादन करना है, इसमें समाज के सदस्यों के बीच उत्पादन के वितरण पर निर्णय शामिल हैं। इन निर्णयों में अवसर लागत शामिल है। किसी वस्तु की अवसर लागत वह है जो आप उस वस्तु को प्राप्त करने के लिए छोड़ देते हैं।उदाहरण के लिए, किसी देश के सैन्य शस्त्रागार के विस्तार की अवसर लागत गैर-सैन्य वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन में कमी है। अवसर लागत हर उस स्थिति में पाई जाती है जिसमें दुर्लभता के कारण निर्णय लेना आवश्यक हो जाता है। अवसर लागत अगले सर्वोत्तम विकल्प का मूल्य (मौद्रिक या अन्यथा) है, अर्थात जो छोड़ दिया गया है। इस अवधारणा का उपयोग मैक्रोइकॉनॉमिक्स और माइक्रोइकॉनॉमिक्स दोनों में किया जाता है।

किसी भी अर्थव्यवस्था में उत्पादन के साधन सीमित होते हैं हालांकि उनके वैकल्पिक प्रयोग अवश्य होते हैं। इन्हीं सीमित साधनों एवं वैकल्पिक प्रयोगों के चलते उत्पादक को इस बात का चुनाव करना पड़ता है कि वह किसी एक वस्तु का उत्पादन बढ़ाने के लिए दूसरी वस्तु का त्याग करने का निर्णय ले।

1.5 अवसर लागत क्या है? (What is Opportunity Cost?)

उत्पादन के क्षेत्र में बात करें तो उत्पादन की प्रत्येक इकाई के लिए चाहे वह एक साधारण किसान हो, कोई फर्म हो, उद्योग हो अथवा सरकार ही क्यों न हो। कोई भी निर्णय लेते समय इन सभी को अवसर लागत पर विचार करना अत्यंत आवश्यक होता है।

उत्पादक जब किसी साधन विशेष का प्रयोग किसी वस्तु विशेष के उत्पादन के लिए करता है तब वह दूसरी वस्तु के उत्पादन का त्याग कर देता है, जिसका उत्पादन वह उस साधन विशेष से कर सकता था। इसका प्रमुख कारण यही है कि वह एक ही समय में उस साधन विशेष से दोनों वस्तुओं का उत्पादन एक साथ नहीं कर सकता। इस प्रकार साधन विशेष के वैकल्पिक प्रयोग के अवसर के त्याग को ही अर्थशास्त्र में अवसर लागत (Opportunity Cost) कहा जाता है।

अर्थात "अर्थव्यवस्था की दृष्टि से किसी एक वस्तु की अतिरिक्त मात्रा की अवसर लागत, दूसरी वस्तु की त्याग की गई मात्रा होती है।"

वास्तव में अवसर लागत का विचार साधनों की सीमितता से उत्पन्न चयन की समस्या पर आधारित है। जैसा कि हम जानते हैं आवश्यकताएं असीमित होती हैं जिनके लिए संतुष्टि के साधन सीमित होते हैं। इसीलिये अधिकांश साधनों का वैकल्पिक प्रयोग ही होता है।

आइये इसे एक उदाहरण द्वारा समझने का प्रयास करते हैं।मान लीजिए कोई ड्राइवर है जो टैक्सी, कार, ट्रेक्टर, जीप, बस, ट्रक, यहां तक कि बुलडोज़र भी चला सकता है। लेकिन आप उसे किसी एक समय में इन सभी कार्यों के लिए नियुक्त नहीं कर सकते। यानि कि अगर वह जीप चलाने के लिए नियुक्त किया जाता है तो निश्चित रूप से उसे बस (अन्य दूसरे विकल्पों) चलाने का अवसर त्याग करना होगा। अर्थात बस चलाने के अवसर का त्याग ही उसके लिए जीप चलाने के लिए अवसर लागत (Opportunity cost) कहलाएगी। क्योंकि उसके साधन सीमित होते हैं। इसलिए कोई व्यक्ति A वस्तु प्राप्त करना चाहता है तो उसे वस्तु B को छोड़नी पड़ेगी। यानी कि एक आवश्यकता की संतुष्टि के लिए दूसरी आवश्यकता की संतुष्टि छोड़ना पड़ता है। कोल के अनुसार- "एक कार्य के चयन द्वारा विकल्प अवसर के त्याग का, मूल्य कार्य विशेष की विकल्प लागत या अवसर लागत है।" अवसर लागत को हम उत्पादन संभावना वक्र की सहायता से आसानी से समझ सकते हैं। आइये हम अवसर लागत की अवधारणा को उत्पादन संभावना वक्र की सहायता से समझने का प्रयास करेंगे।

1.5.1 उत्पादन संभावना वक्र से अवसर लागत की व्याख्या (Production Possibility Curve Interpretation):

चलिए हम अवसर लागत की धारणा को उत्पादन संभावना वक्र की सहायता से और भी सरलतम रूप में समझने का प्रयास करते हैं लेकिन इसे समझने से पहले उत्पादन संभावना वक्र क्या है? यह जानना आवश्यक है। आइये हम उत्पादन संभावना वक्र के बारे में थोड़ा सा जानने का प्रयास करते हैं।

उत्पादन संभावना वक्र की मान्यताएं (Assumptions of Production Possibility Curve):

अवसर लागत की धारणा को रेखाचित्र की सहायता से स्पष्ट करने से पहले निम्न मान्यताओं को आधार माना जाता है-

(1) निश्चित समयावधि में उत्पादन के साधनों की मात्रा निश्चित मानी जाती है।

(2) दी हुई अर्थव्यवस्था में केवल दो ही वस्तुएँ होती हैं जिन्हें उत्पादन के लिए प्रयोग किया जाता है।

(3) दी हुई अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोज़गार एवं पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति निर्मित मानी जाती है।

(4) अर्थव्यवस्था में उपलब्ध उत्पादन के साधनों की मात्रा एवं किस्म स्थिर हैं। उत्पादन के साधनों की मात्रा बढ़ जाने पर इनकी क़िस्म में सुधार हो जाता है। फलस्वरूप संभावना वक्र दाहिनी ओर खिसक जाता है। यानी कि नये उत्पादन सम्भावना वक्र से दोनों ही वस्तुओं का अधिक उत्पादन किया जा सकता है।

(5) तकनीकी ज्ञान का स्तर सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था में प्रयुक्त होता है। तकनीकी ज्ञान के स्तर में बढ़ोत्तरी के साथ उत्पादन संभावना वक्र दाहिनी ओर खिसक जाता है। अर्थात नये संभावना वक्र की सहायता से दोनों ही वस्तुओं का अधिक उत्पादन किया जा सकता है।

(6) इस बात का ध्यान रखा जाता है कि उत्पादन के साधनों का प्रयोग पूर्ण कुशलता के साथ किया जाए ।

उपरोक्त बिंदुओं में आपने जाना कि उत्पादन संभावना वक्र की मान्यता क्या है? सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था में उपलब्ध साधनों और अपनी आवश्यकताओं पर नज़र डालें तो हम देखते हैं कि जब किसी विशिष्ट साधन को एक वस्तु के उत्पादन में प्रयुक्त किया जाता है तो वह साधन किसी अन्य वस्तु के उत्पादन के लिए उपयोग में लाये जाने का अवसर खो देता है।

1.5.2 उत्पादन-संभावना वक्र (Production-Possibility Frontier)

जिन देशों में उपजाऊ भूमि, खनिज संपदा, कुशल श्रमिक, तकनीक व पूँजी की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध होती है। ऐसे देशों में वस्तुओं एवं सेवाओं की बड़ी मात्रा उत्पादित करने की अपार संभावनाएं होती है। किन्तु जिन देशों में उपरोक्त साधनों की मात्रा कम होती है अथवा सीमित होती है उन देशों में वस्तुओं को उत्पादित करने की संभावनाएं ना के बराबर होती हैं। लेकिन ऐसे देश इन्हीं सीमित साधनों के विभिन्न संयोगों (अनुपातों) का प्रयोग करके वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन करते हैं। ऐसे में यदि किसी देश को उपभोग वस्तुओं का अधिक मात्रा में उत्पादन करना हो तो उसे अन्य पूँजीगत वस्तुओं के उत्पादन को त्यागना होगा या मात्रा में कमी करनी होगी। इसी तरह यदि उसे पूँजीगत या विलासिता पूर्ण वस्तुओं की बड़ी मात्रा उत्पादित करनी हो तो उसे आधारभूत आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन का त्याग या कमी करनी होगी।

इस प्रकार उस देश को वैकल्पिक रूप से अपने साधनों का प्रयोग विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन के लिए करना होगा। ऐसे ही वैकल्पिक संयोगों को उत्पादन संभावना वक्र में स्पष्ट रूप से प्रदर्शित किया जाता है। जैसे कि हम आपको निम्न संभावना वक्र तालिका में कुछ संयोगों को प्रदर्शित कर रहे हैं ताकि आप इन संयोगों को समझ सकें।

Table 1.1 उत्पादन संभावना तालिका

Combinations	Commodity X	Commodity Y
A	25	0
B	20	50
C	15	100
D	10	130
E	5	150
F	0	160

इस तालिका में आप देख सकते हैं कि किस प्रकार कोई देश विभिन्न संयोगों में वस्तुओं का उत्पादन कर सकता है। इन विभिन्न संयोगों में कुछ वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाता है तो कुछ वस्तुओं के उत्पादन में कमी अथवा त्याग करता है। उपरोक्त तालिका में X व Y वस्तु के उत्पादन संबंधी 6 संयोग दिए गए हैं। इन विभिन्न संयोगों में से किसी भी संयोग के अंतर्गत एक देश आवश्यकतानुसार वस्तु का उत्पादन कर सकता है। यदि वह A संयोग का चुनाव करता है तब वह X वस्तु की 25 इकाइयाँ एवं Y वस्तु की 0 (शून्य) इकाइयाँ उत्पादित करेगा। इसी तरह यदि वह आखिर के F संयोग का चुनाव करता है तब X वस्तु की शून्य इकाइयाँ और Y वस्तु की 160 इकाइयों का उत्पादन करना चाहेगा। उत्पादन संभावनाओं के ये दोनों ही चरम स्थितियां कहलाती हैं। यानी कि कोई देश संयोगों A और F के बीच X और Y वस्तुओं की विभिन्न मात्राओं का उत्पादन करता है। वैसे इन विभिन्न संयोगों में से किसी संयोग विशेष के चुनाव की स्थिति, माँग की दशा पर भी निर्भर करती है। उत्पादन संभावना तालिका की सहायता से आप निम्न रूप से उत्पादन संभावना वक्र पर इन संयोगों का चित्र रूप में प्रदर्शन देख सकते हैं।

उत्पादन संभावना वक्र का चित्रण (Illustration of Production Possibility Curve):

उत्पादन संभावना वक्र पर आप देख पा रहे होंगे कि प्रत्येक बिंदु दो वस्तुओं की उन विभिन्न मात्राओं के संयोगों को प्रदर्शित कर रहा है जिन्हें कोई देश अपने उपलब्ध सीमित साधनों का प्रयोग करते हुए उत्पादन कर सकता है।

चित्र 1.1

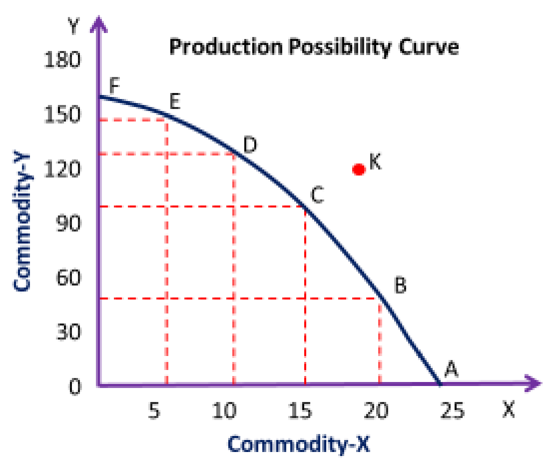

उपरोक्त उत्पादन संभावना वक्र से निम्न बातें स्पष्ट होती हैं-

(1) इस चित्र 1.1 में OX- अक्ष आधार रेखा में X-वस्तु की मात्रा को एवं OY- अक्ष रेखा में Y-वस्तु की मात्राओं को दर्शाया गया है।

(2) AF वक्र जहां उत्पादन संभावना वक्र है। इस वक्र में स्थित ABCDEF वे बिंदु हैं जो यह दर्शाते हैं कि कोई भी देश अपने सीमित साधनों का कुशलतम प्रयोग करके X और Y वस्तुओं की कितनी-कितनी मात्राएँ उत्पादित कर सकता है।

(3) यदि कोई देश अपने सभी साधनों को X-वस्तु के उत्पादन में लगा दे तो वह OA मात्रा का उत्पादन करेगा जहाँ Y-वस्तु की मात्रा 0 (शून्य) होगी।

(4) इसके विपरीत यदि वह देश अपने सभी सीमित साधनों का प्रयोग Y-वस्तु के उत्पादन पर लगा दे। तब वह Y-वस्तु की OF मात्रा का उत्पादन करेगा जबकि X-वस्तु की मात्रा 0 (शून्य) होगी।

(5) कोई देश AF उत्पादन संभावना वक्र के अंतर्गत किसी अन्य संयोग जैसे BCD या E का चुनाव कर X व Y वस्तुओं का उत्पादन कर सकता है।

उत्पादन संभावना वक्र से संबंधित उक्त बिंदुओं के आधार पर हम संक्षिप्त रूप में यह कह सकते हैं कि- "उत्पादन संभावना वक्र वह सीमा है जिसके अंतर्गत कोई देश अपने साधनों का प्रयोग करके दोनों ही वस्तुओं (X और Y) के विभिन्न संयोगों का उत्पादन कर सकता है।"

वह चाहे भी तो इस वक्र से बाहर के किसी भी बिंदु जैसे- K पर वह X और Y वस्तु की किसी भी मात्रा का उत्पादन नहीं कर सकता। क्योंकि वह बिंदु उसके उपलब्ध साधनों की मात्रा के प्रयोग एवं देश में उपलब्ध तकनीक की सीमा से बाहर है।

1.5.3 अवसर लागत का महत्व (Importance of Opportunity Cost):

अर्थशास्त्र में अर्थात किसी भी अर्थव्यवस्था में अवसर लागत का सिद्धांत अत्यंत ही महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आइये हम कुछ प्रमुख महत्व को जानते है:

(1) उत्पत्ति के साधनों के वितरण में सहायक: अवसर लागत के इस सिद्धांत का प्रयोग उत्पादन के विभिन्न साधनों के वितरण में प्रमुखता से किया जाता है। किसी भी साधन को उपयोग करने के लिए यह माना जाता है कि उस साधन को कम से कम उतना मूल्य अवश्य मिलना चाहिए जितना कि उसे अन्य वैकल्पिक प्रयोगों में मिलना संभव हो सकता था। इस दुविधा का निराकरण अवसर लागत बड़ी ही आसानी से कर देता है।

(2) लागत में परिवर्तन की स्पष्ट व्याख्या: किसी भी उद्योग की लागत को किस सीमा तक अपने उत्पादन के साथ परिवर्तन कर सकते हैं? अवसर लागत सिद्धांत इस तथ्य को स्पष्ट कर देता है। उदाहरणार्थः कोई उद्योग यदि किन्ही विशेष साधनों को अल्पकाल में ही आकर्षित करके अपने उत्पादन को बढ़ाना चाहता है तब तो उसे उन विशेष साधनों की ऊँची कीमतें देनी ही होगी। परिणाम स्वरूप उद्योग की औसत व सीमांत लागतें बढ़ जायेंगी।

(3) लगान का आंकलन करने में सहायक: लगान के आधुनिक सिद्धान्त के अनुसार बात करें तो लगान को अवसर लागत के ऊपर के अतिरेक के रूप में माना जा सकता है। उदाहरणार्थः किसी साधन का पुरस्कार ₹ 2000 है और उसकी अवसर लागत ₹ 1500 है। तो साधन का लगान ₹2000-₹1500=₹500 होगा। इस प्रकार हम अवसर लागत की सहायता से साधन का लगान ज्ञात कर सकते हैं।

1.5.4 अवसर लागत की सीमाएँ (Opportunity Cost Limitations):

अवसर लागत की आलोचनाएँ अथवा सीमाएँ प्रमुख रूप से निम्नलिखित हैं

(1) ऐसे विशिष्ट साधन जिन्हें केवल एक ही प्रयोग में लाया जा सकता हो। ऐसे साधनों के साथ अवसर लागत का विचार निरर्थक साबित होता है। क्योंकि इन साधनों की अवसर लागत शून्य होती है।

(2) अवसर लागत के विचार से यह मान लिया जाता है कि उत्पत्ति के साधन की कोई रुचि नहीं होती, उनमें पूर्ण गतिशीलता होती है। चूंकि वास्तव में यह मानना ग़लत है। किसी भी साधन की किसी कार्य विशेष के प्रति अपनी रुचि भी हो सकती है। अतः उसकी हस्तांतरण करने की लागत उसकी वास्तविक अवसर लागत से अधिक होनी चाहिए।

(3) अवसर लागत का विचार पूर्ण प्रतियोगिता की मान्यता पर आधारित है। लेकिन असल में देखा जाए तो वास्तविक जीवन में यह संभव ही नहीं है। अतः ऐसी स्थिति में अवसर लागत का विचार पूर्णतः लागू होना असंभव है।

1.6 अपनी प्रगति की जाँच करें (Check Your Progress)

रिक्त स्थान भरिए

1. अर्थव्यवस्था (*economy*) शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द ओइकोनोमोस (*oikonomos*) से हुई है, जिसका अर्थ है "......................"
2. अर्थशास्त्र इस बात का अध्ययन है कि समाज अपने ....संसाधनों का प्रबंधन कैसे करता है।
3. एडम स्मिथ की प्रसिद्ध पुस्तक का नाम......................... है
4. अर्थशास्त्र विज्ञान भी है क्योंकि इसके अध्ययन में .... का पालन किया जाता है।
5. क्या उत्पादन करना है इसमें उत्पादन के लिए वस्तुओं और सेवाओं के ....के बारे में निर्णय शामिल हैं।
6. उत्पादन कैसे किया जाए, इस बारे में निर्णय लेने की आवश्यकता है कि किस .... का उपयोग किया जाए।
7. किसके लिए उत्पादन करना है, इसमें समाज के सदस्यों के बीच उत्पादन के .... पर निर्णय शामिल हैं।
8. वास्तव में अवसर लागत का विचार साधनों की .... से उत्पन्न चयन की समस्या पर आधारित है।

1.7 सारांश (Summary)

इस अध्याय में हमने अर्थशास्त्र की विभिन्न परिभाषाओं के माध्यम से उसके विषय क्षेत्र के बारे में जानकारी प्राप्त की। परंपरावादी अर्थशास्त्री धन पर, नव परंपरावादी मानव कल्याण पर, रोबिन संसाधनों की दुर्लभता पर, आधुनिक अर्थशास्त्री विकास पर तथा जे के मेहता आवश्यकता विहीनता पर बल देते हुए अपनी परिभाषाएं देते हैं। हमने जानने की कोशिश की है कि अर्थशास्त्र विज्ञान है या कला है? और हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि यह एक विज्ञान है परंतु इसके व्यावहारिक पक्ष अथवा कला पक्ष की अवहेलना नहीं की जा सकती। फिर हमने अर्थशास्त्र की दुर्लभता एवं चयन संबंधी विषय वस्तु का विस्तार से अध्ययन किया और इसे हमने अवसर लागत एवं उत्पादन संभावना वक्र की सहायता से विस्तार पूर्वक समझा।

1.8 कीवर्ड (Keywords)

दुर्लभता- दुर्लभता का अर्थ है कि समाज के पास सीमित संसाधन हैं और इसलिए वह उन सभी वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन नहीं कर सकता जो लोग चाहते हैं।

अर्थव्यवस्था- एक अर्थव्यवस्था लोगों का एक समूह है जो एक दूसरे के साथ व्यवहार करते हैं जो अपने आर्थिक निर्णयों के बारे में सोचते हैं. क्योंकि एक अर्थव्यवस्था का व्यवहार इन्हीं व्यक्तियों के व्यवहार को दर्शाता है जिनसे अर्थव्यवस्था बनी है

दक्षता- दक्षता (efficiency) का अर्थ है कि समाज अपने दुर्लभ संसाधनों से अधिकतम लाभ प्राप्त कर रहा है।

समानता- समानता (equality) का अर्थ है कि उन लाभों को समाज के सदस्यों के बीच समान रूप से वितरित किया जाता है।

अवसर लागत- अर्थव्यवस्था की दृष्टि से किसी एक वस्तु की अतिरिक्त मात्रा की अवसर लागत, दूसरी वस्तु की त्याग की गई मात्रा होती है।

व्यष्टिअर्थशास्त्र- व्यष्टिअर्थशास्त्र (Microeconomics) व्यक्तिगत उद्योगों के कामकाज और व्यक्तिगत आर्थिक निर्णय लेने वाली इकाइयों अर्थात फर्म (firms) और घर (households) के व्यवहार से संबंधित है।

1.9 स्व-मूल्यांकन परीक्षण (Self-Assessment Test)

1. अर्थशास्त्र कला और विज्ञान दोनों है क्या आप इस कथन से सहमत हैं?

2. अर्थशास्त्र की विषय सामग्री की व्याख्या कीजिए

3. आर्थिक सिद्धांत की प्रकृति और सीमाओं की विवेचना कीजिए

4. अर्थशास्त्र दुर्लभता और चयन की समस्या से संबंधित विषय है की व्याख्या कीजिए

5. अवसर लागत क्या है इसे उत्पादन संभावना तालिका तथा उत्पादन संभावना वक्र की सहायता से समझाइए

6. अवसर लागत की विस्तारपूर्वक व्याख्या करते हुए इसके महत्व पर प्रकाश डालिए

1.10 उत्तर आपकी प्रगति की जांच करने के लिए (Answers to check your progress)

1. वह जो घर का प्रबंधन करता है (one who manages a household), 2. दुर्लभ, 3. An Enquiry into the Nature and Causes of the Wealth of Nations (1776), 4. वैज्ञानिक विधियों, 5. प्रकार और मात्रा, 6. तकनीक, 7. वितरण, 8. दुर्लभता

1.11 संदर्भ/सुझाई गई पुस्तकें (References/ Suggested Readings)

आहूजा, एच. एल. उच्चतर आर्थिक सिद्धांत (व्यष्टि पर आर्थिक विश्लेषण) एस चांद पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली

झिंगन, एम. एल. (2015) व्यष्टि अर्थशास्त्र वृंदा पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली

मैनकीव, एन. ग्रेगरी व्यष्टि अर्थशास्त्र के सिद्धांत सेनगेज लर्निंग, अमेरीका

कौट्सोयियनिस, ए. आधुनिक व्यष्टि अर्थशास्त्र मैकमिलन प्रेस लिमिटेड, दिल्ली

विषय: अर्थशास्त्र (व्यष्टिगत अर्थशास्त्र के सिद्धांत)	
विषय क्रमांक: बीए BECO-101	लेखक: डॉ. सोमनाथ परूथी
अध्याय: 2	वेट्टर:
आर्थिक प्रणाली का अर्थ, परिभाषा एवं प्रकार	

संरचना (Structure)

2.0 सीखने के उद्देश्य (Learning Objectives)

2.1 परिचय (Introduction)

2.2 आर्थिक प्रणाली का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definitions of Economic System)

2.2.1 आर्थिक प्रणाली के मूल तत्व (Basic Elements of Economic System)

2.2.2 आर्थिक प्रणाली के महत्वपूर्ण कार्य (Important Functions of Economic System)

2.3 आर्थिक प्रणाली के प्रकार (Types of Economic System)

2.3.1 पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली (Capitalistic Economic System)

2.3.1.1 पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली की महत्वपूर्ण विशेषताएं (Characteristics of Capitalistic Economic System)

2.3.2 समाजवादी आर्थिक प्रणाली (Socialistic Economic System)

2.3.2.1 समाजवादी आर्थिक प्रणाली की महत्वपूर्ण विशेषताएँ (Characteristics of Socialistic Economic System)

2.3.3 मिश्रित आर्थिक प्रणाली (Mixed Economic System)

2.3.3.1 मिश्रित आर्थिक प्रणाली का अर्थ एवं परिभाषाएं (Meaning and Definitions of Mixed Economic System)

2.3.3.2 मिश्रित आर्थिक प्रणाली अपनाने के कारण (Reasons for Adopting Mixed Economic System)

2.3.3.3 मिश्रित आर्थिक प्रणाली की विशेषताएं (Features of Mixed Economic System)

2.4 अपनी प्रगति की जाँच करें (Check Your Progress)

2.5 सारांश (Summary)

2.6 कीवर्ड (Keywords)

2.7 स्व-मूल्यांकन परीक्षण (Self-Assessment Test)

2.8 उत्तर आपकी प्रगति की जांच करने के लिए (Answers to Check Your Progress)

2.9 संदर्भ/सुझाई गई पुस्तकें (References/ Suggested Readings)

2.0 सीखने के उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय के अध्ययन के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि;

1. आर्थिक प्रणाली का आशय एवं इसके मूल तत्वों के बारे में बता सके
2. आर्थिक प्रणाली के विभिन्न प्रकारों की जानकारी दे सके
3. पूंजीवादी, समाजवादी तथा मिश्रित आर्थिक प्रणालियों की विशेषताएं तथा उनके गुण दोष की जानकारी दे सके
4. भारत में मिश्रित आर्थिक प्रणाली अपनाई जाने के कारणों की जानकारी दे सके

2.1 परिचय (Introduction)

आर्थिक प्रणाली (Economic System) किसी भी देश में आर्थिक क्रियाओं के संगठन पर प्रकाश डालती है। उत्पादन के साधनों का स्वामित्व निजी व्यक्तियों के हाथों में, सरकार के पास या फिर दोनों के हाथों में होता है। अब स्वामित्व अधिकतर निजी व्यक्तियों के हाथों में हो तो ऐसी आर्थिक व्यवस्था को पूंजीवादी आर्थिक व्यवस्था कहते है। यदि सरकार के हाथ में हो तो इसे समाजवादी अर्थव्यवस्था कहते हे। इंग्लैण्ड, संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी फ्रांस पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के उदाहरण कहे जा सकते है। चीन, दक्षिणकोरिया आदि समाजवादी अर्थव्यवस्था के उदाहरण कहे जाते है। जब निजी व्यक्तियों और सरकार दोनो बड़ी मात्रा में साधनों के स्वामी हो तो इसे मिश्रित आर्थिक प्रणाली कहते है। वास्तव में, एक मिश्रित अर्थव्यवस्था में उत्पादन के साधनों का अनुपात अधिकतर निजी क्षेत्र के पास रहता है जबकि कम लेकिन काफी महत्वपूर्ण, भाग सरकार के हाथ में रहता है। इसीलिये मिश्रित अर्थव्यवस्था को मिश्रित पूंजीवादी अर्थव्यवस्था भी कहते है। एशिया के अधिकतर देश एवं विश्व के अन्य देश भी इसी वर्ग में आते है। भारत ने भी मिश्रित आर्थिक प्रणाली अपनाई है।

2.2 आर्थिक प्रणाली का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definitions of Economic System)

आर्थिक प्रणाली समाज की आर्थिक क्रियाओं के संगठन पर प्रकाश डालती है तथा इसमें उपभोग, उत्पादन, वितरण एवं विनिमय के तरीकों का अध्ययन किया जाता है। निजी व्यवसाय का क्षेत्र तथा आर्थिक क्रियाओं में सरकार के हस्तक्षेप की सीमा प्रमुख रूप से आर्थिक प्रणाली की प्रकृति पर निर्भर करती है। आर्थिक प्रणाली के अन्तर्गत वे संस्थाएँ सम्मिलित की जा सकती है, जिन्हें देश या देश का समूह, अपने निवासियों की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए विभिन्न साधनों के प्रयोग हेतु अपनाता है। दूसरे शब्दों में, आर्थिक प्रणाली का अर्थ वैधानिक तथा संस्थागत ढांचे से हैं, जिसके अन्तर्गत आर्थिक क्रियाएँ संचालित की जाती है। प्रत्येक देश में मानव के आर्थिक जीवन में कम या अधिक राज्य हस्तक्षेप भी पाया जाता है। इसलिए आर्थिक प्रणाली का रूप राज्य के हस्तक्षेप की मात्रा या सीमा पर निर्भर करता है।

आर्थिक प्रणाली की एक उचित परिभाषा निम्न प्रकार से दी जा सकती है- "आर्थिक प्रणाली संस्थाओं का एक ढाँचा है, जिसके द्वारा उत्पत्ति के साधनों तथा उनके द्वारा उत्पादित वस्तुओं के प्रयोग पर सामाजिक नियन्त्रण किया जाता है।"

2.2.1 आर्थिक प्रणाली के मूल तत्व (Basic Elements of Economic System)

किसी भी देश की आर्थिक प्रणाली देश के सम्पूर्ण घटकों द्वारा निर्धारित होती है, जिसमें तत्त्व शामिल होते हैं-

1. **लोग (People)** - इसमें देश के भीतर लोगो की विभिन्न भूि मकाओं जैसे- ऋणदाता, ग्राहक, नियोक्ता, कर्मचारी, स्वामी, पूर्तिकर्ता आदि के सहयोग एवं सम्बन्धों से आर्थिक प्रणाली का निर्माण होता है, परन्तु यह प्रश्न महत्वपूर्ण है कि कौन-कौन से व्यक्ति विद्यमान आर्थिक प्रणाली में शामिल हैं।
2. **संसाधन (Resources)** - आर्थिक प्रणाली का संचालन उत्पादन एवं वितरण के विभिन्न साधनों जैसे- भूमि, श्रम, पूँजी, साहस, संगठन तथा बाजार आदि से होता है। ये साधन किसी देश की दशा एवं दिशानिर्धारित करने में महत्वपूर्ण तत्व के रूप में शामिल होते हैं।
3. **प्रतिफल (Returns)-** उत्पादन एवं वितरण के साधन किस प्रेरणा से कार्‌य करते हैं? साहसी इन्हें कार्य पर क्यों लगाता है? प्रतिफल प्राप्त करने की आशा में ही उत्पादन के समस्त साधन अपने प्रयासों का योगदान करते हैं। इस प्रकार लाभ एवं सामाजिक कल्याण समस्त आर्थिक प्रणालियों का प्रमुख आधार है।
4. **नियमन (Regulation)-** समस्त आर्थिक प्रणाली कुछ व्यक्तियों, संस्थाओं अथवा घटकों से नियमित एवं नियन्त्रित होती है। व्यावसायिक एवं औद्योगिक क्रियाओं का नियमन करने वाले प्रमुख घटक प्रतिस्पर्धी (competitor), माँग एवं पूर्ति (demand and supply), सरकार आदि हैं।

2.2.2 आर्थिक प्रणाली के महत्वपूर्ण कार्य (Important Functions of Economic System)

किसी भी राष्ट्र की आर्थिक प्रणाली द्वारा महत्वपूर्ण निर्णय या कार्य के माध्यम से मानवीय एवं प्राकृतिक संसाधनों का राष्ट्रहित में प्रयोग किया जाता है। इनके द्वारा राष्ट्र की उत्पादन एवं उपभोग की क्रियाओं से सम्बन्धित निर्णय लिये जाते हैं-

1. **कौन सी वस्तु उत्पादित की जाय तथा उत्पादन कितनी मात्रा में हो** - किसी देश का सर्वप्रथम कार्य इस बात का निर्धारण करना है कि कौन सी वस्तु का उत्पादन किया जाय ताकि समाज में व्यक्तियों की आवश्यकताएँ पूरी हो सकें, अर्थात प्रत्येक अर्थव्यवस्था को उत्पादन की संरचना का निर्धारण करना पड़ता है। जिन वस्तुओं के उत्पादन का निर्णय लिया जाता है, उसके अनुसार ही अर्थव्यवस्था में सीमित साधनों का वितरण करना होता है, तत्पश्चात् यह निश्चित करना होता है कि उपभोक्ता या पूँजीगत वस्तुओं की कितनी मात्राओं का उत्पादन किया जाय, ताकि माँग एवं पूर्ति में उचित सामंजस्य बना रहे।
2. **वस्तु का उत्पादन कैसे किया जाय** - आर्थिक प्रणाली का दूसरा प्रमुख कार्य है कि, "निर्धारित वस्तुओं का उत्पादन कैसे किया जाय? अर्थात् किन विधियों द्वारा उत्पादन किया जाय? दूसरे शब्दों में, उत्पादन का संगठन कैसे किया जाय? इस कार्य से अभिप्राय है कि विभिन्न उद्योगों में किन फर्मों को उत्पादन करना है तथा वे आवश्यक साधनों को कैसे प्राप्त करेंगी। उत्पादन के लिए सर्वोत्तम तकनीक कौन सी है? आदि का निर्धारण किया जाता है।"
3. **वस्तुओं का वितरण कैसे किया जाय** - उत्पादन प्राप्त कर लेने के पश्चात यह प्रश्न उठता है कि उत्पादित वस्तुओं एवं सेवाओं को उत्पादकों तथा व्यापारियों, उत्पादकों, सरकार, उपभोक्ताओं तथा परिवारों में किस प्रकार वितरित किया जाय। अर्थात उत्पादित वस्तुओं एवं सेवाओं का समाज के विभिन्न जरूरतमन्द वर्गों में वितरण कैसे किया जाय। उपरोक्त तीनों प्रश्नों का हल निकालने के लिए आर्थिक प्रणाली महत्वपूर्ण निर्णय लेती है तथा इस सम्बन्ध में आवश्यक कार्य करती हैं।

2.3 आर्थिक प्रणाली के प्रकार (Types of Economic System)

आर्थिक प्रणाली के प्रकार - स्वामित्व के आधार पर आर्थिक प्रणालियों को मोटे तौर पर तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है-

2.3.1 पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली (Capitalistic Economic System)

2.3.2 समाजवादी आर्थिक प्रणाली (Socialistic Economic System)

2.3.3 मिश्रित आर्थिक प्रणाली (Mixed Economic System)

2.3.1 पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली (Capitalistic Economic System)

1. **लूक्स एवं हूट-** "पूँजीवादी अर्थव्यवस्था वह अर्थव्यवस्था है जिसमें प्राकृतिक एवं मनुष्यगत पूँजी पर व्यक्तियों का निजी अधिकार होता है तथा इनका उपयोग वे अपने लाभ के लिए करते हैं।"
2. **ए0सी0 पीगू :** "पूँजीवादी अर्थव्यवस्था अथवा पूँजीवादी व्यवस्था वह है जिसमें उत्पत्ति के संसाधनों का मुख्य भाग पूँजीवादी उद्योगों में लगा होता है- एक पूँजीवादी उद्योग वह है जिसमें उत्पादन के भौतिक साधन निजी व्यक्ति के अधिकार में होते हैं अथवा वे उनको किराये के रूप में ले लेते हैं तथा उनका उपयोग उनकी आज्ञानुसार इस भाँति होता है कि उनकी सहायता से उत्पन्न वस्तुयें या सेवायें लाभ पर बेची जायें।

पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली के दो प्रकार हो सकते हैं-

1. प्राचीन, स्वतंत्र पूँजीवाद जिसमें सरकार का हस्तक्षेप नगण्य होता है अथवा अनुपस्थित रहता है, तथा
2. नवीन नियमित या मिश्रित पूँजीवाद जिसमें सरकारी हस्तक्षेप पर्याप्त मात्रा में होता है।

2.3.1.1 पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली की महत्वपूर्ण विशेषताएं (Characteristics of Capitalistic Economic System)

1. **निजी स्वामित्व (Private ownership)-** पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में प्रत्यके व्यक्ति अपनी सम्पत्ति का स्वयं मालिक होता है। उसे उत्पादन के विभिन्न साधनों को अपने पास रखने की पूर्ण स्वतंत्रता होती है। प्रत्येक व्यक्ति सम्पत्ति रख सकता है, बेच सकता है या अपनी इच्छानुसार उपयोग कर सकता है।
2. **उपभोक्ता की प्रभुसत्ता (Consumers' Sovereignty)-**पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में उपभोक्ता सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है। उत्पादक उपभोक्ता की माँग व रूचि के अनुसार उत्पादन करता है। उपभोक्ता की स्वतंत्रता में किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न नहीं होती है, इसीलिए बेन्हम ने पूँजीवाद अर्थव्यवस्था में उपभोक्ता की तुलना राजा से की है।
3. **उत्तराधिकार (Inheritance)-** पूँजीवादी अर्थव्यवस्था की एक महत्वपण्ूर् ा विशेषता इसमें उत्तराधिकार के अधिकार का पाया जाना है। इस अर्थव्यवस्था में पिता की मृत्यु के पश्चात् उसकी सम्पत्ति का स्वामी उसका पुत्र हो जाता है। पूँजीवाद को जीवित रखने हेतु उत्तराधिकार का अत्तिाकार बनाये रखना आवश्यक होता है।
4. **बचत एवं विनियोग की स्वतंत्रता (Freedom to save and invest)-** उत्तराधिकार का अधिकार लोगों में बचत करने तथा पूँजी संचय को प्रोत्साहन देता है। अपने परिवार की सुख-सुविधा के लिए लोग बचत करते हैं तथा यही बचत पूँजी संचय में वृद्धि करती है। इस पूँजी को अपनी इच्छानुसार विनियोग करने की स्वतंत्रता होती है।

5. **मूल्य यंत्र (Price Mechanism)-** मूल्य-यत्रं सम्पूर्ण पूँजीवादी अर्थव्यवस्था का संचालन करता है। इसकी सहायता से ही एक उत्पादक यह निध्र्धारित करता है कि किस वस्तु का कितना उत्पादन किया जाय। दूसरी ओर उपभोक्ता भी इस यंत्र को ध्यान में रखते हुए यह निर्णय लेता है कि किस वस्तु के कहाँ से और कितनी मात्रा में खरीदा जाय।

6. **प्रतियोगिता (Competition)-** प्रतियोगिता पूँजीवादी अर्थव्यवस्था की महत्वपूर्ण विशेषता है। जो उत्पादक अन्य उत्पादकों की तुलना में अद्धिाक कुशल, अनुभवी एवं शक्तिशाली होता है, वह प्रतियोगिता में सफल होता है। अकुशल उत्पादकों द्वारा उत्पादित वस्तुओं की उत्पादन लागत अधिक होती है। कुशल उत्पादकों द्वारा निर्मित वस्तुओं की लागत कम आती है। अत: वे सस्ते मूल्य पर उपभोक्ताओं को वस्तुएं उपलब्ध करा पाने में सफल रहते हैं जिससे उनकी मांग बढ़ती है।

7. **आर्थिक कार्य की स्वतंत्रता (Freedom of Economic Activities)-** पूँजीवाद में प्रत्येक व्यक्ति को आर्थिक कार्य करने की पूर्ण स्वतंत्रता रहती है। वह अपनी इच्छानुसार उत्पादन प्रारम्भ एवं बंद कर सकता है। अपना लाभ बढ़ाने के लिए वह उत्पादन प्रणाली में भी परिवर्तन कर सकता है।

8. **साहसी की महत्वपूर्ण भूमिका (Important Role of Entrepreneur)-** पूँजीवाद में साहसी की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। साहसी द्वारा उत्पादन के साधनों को संगठित करके वस्तुओं व सेवाओं के उत्पादन को सम्भव बनाया जाता है। वह सदैव ऐसा निर्णय लेने की कोशिश करता है ताकि उसके लाभ में वृद्धि हो सके।

9. **व्यवसाय चुनने की स्वतंत्रता (Freedom of Choice of Occupation)-** एक पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यतानुसार व्यवसाय चुनने के लिए स्वतंत्र होता है। इस स्वतंत्रता से कर्मचारी अपने श्रम के लिए सौदेबाजी करने योग्य बनता है।

10. **आय की असमानता (Inequality of Income)-** पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में सदैव आय की असमानता पायी जाती है। इस अर्थव्यवस्था में समाज दो वर्गों-पूँजीपति तथा श्रमिक में बँट जाता है जिनमें सदैव आपसी संघर्ष चलता रहता है। नियोक्ता अपने श्रमिकों को न्यूनतम भुगतान करके अपने लाभ को अधिकतम करना चाहते हैं। दूसरी ओर, श्रमिक अधिक से अधिक मजदूरी प्राप्त करने की चेष्टा करता है। इस प्रकार दोनो वर्गों में संघर्ष होता है।

11. **केन्द्रीय नियोजन का अभाव (Absence of Central Planning)-** पूँजीवादी अर्थव्यवस्था एक स्वतंत्र अर्थव्यवस्था है, अत: इसमें केन्द्रीय नियोजन का अभाव रहता है। दूसरे शब्दों में, पूँजीवादी प्रणाली की विभिन्न आर्थिक इकाइयाँ किसी केन्द्रीय योजना से निर्देशित समन्वित अथवा नियंत्रित नहीं होती हैं। इसमें समस्त कार्य स्वतंत्रतापूर्वक मूल्य-यंत्र की सहायता द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं। यह एक स्वत:शासित अर्थव्यवस्था है।

12. **सरकार की सीमित भूमिका (Limited Role of Government)-** केन्द्रीय नियोजन के अभाव से यह तात्पर्य नहीं है कि पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में सरकार की बिल्कुल भूमिका नहीं होती है। पूँजीवादी प्रणाली को सुव्यवस्थित रूप से संचालित करने हेतु कहीं-कहीं सरकारी हस्तक्षेप की नितान्त आवश्यकता पड़ती है। उदाहरणार्थ-सम्पत्ति के अधिकारों को परिभाषित करना, समुदाय विशेष की आवश्यकताओं की संतुष्टि को सुनिश्चित करना, इत्यादि। इसके बावजूद सरकारी हस्तक्षेप अत्यन्त सीमित होता है।

व्यवहार में विशुद्ध पूँजीवादी अर्थव्यवस्था का कोई उदाहरण नहीं मिलता है। वर्तमान में पायी जाने वाली पूँजीवादी अर्थव्यवस्थाओं में पर्याप्त मात्रा में सरकारी हस्तक्षेप होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा, स्विटजरलैण्ड, न्यूजीलैण्ड, ब्रिटेन, इटली, फ्रांस, स्वीडन, डेन्मार्क, बेल्जियम, इत्यादि ऐसे राष्ट्र हैं जहां आधुनिक पूँजीवाद अथवा मिश्रित प्रणाली पायी जाती है। अनियमित अथवा **विशुद्ध पूँजीवाद में निम्नलिखित महत्वपूर्ण दोष हैं** जिनकी वजह से पूँजीवाद का आधुनिक स्वरूप सामने आया है।

1. विनियोग सदैव लाभ को ध्यान में रखकर किया जाता है। उच्च वर्ग हेतु उत्पादित वस्तुओं में लाभ का मार्जिन अधिक होता है। अत: उद्योगपति उन्हीं वस्तुओं का उत्पान करेंगे। इस प्रकार विशुद्ध पूँजीवाद में उत्पादन के संसाधनों का आवंटन सर्वश्रेष्ठ विधि से नहीं हो पाता है।
2. स्वतंत्र प्रतियोगिता होने के कारण बड़ी फर्मों द्वारा एकाधिकार प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार एकाधिकार के समस्त दोष इसमें आ जाते हैं।
3. सम्पत्ति रखने के अधिकार तथा व्यवसाय की स्वतंत्रता से आय तथा धन के केन्द्रीयकरण का संकट उत्पन्न हो जाता है तथा अमीरों तथा श्रमिकों के बीच की खाई और चौड़ी हो जाती है।

2.3.2 समाजवादी आर्थिक प्रणाली (Socialistic Economic System)

समाजवाद के बारे में इतना अधिक लिखा तथा कहा गया है कि इसकी एक उपयुक्त परिभाषा देना अत्यन्त कठिन कार्य है। लूक्स एवं हूट (Loucks and Hoot) ने सही कहा है कि 'बहुत सी वस्तुओं को समाजवाद कहा गया है तथा समाजवाद के सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा गया है।'सरल शब्दों में, समाजवाद से तात्पर्य ऐसी आर्थिक प्रणाली से है जिसमें उत्पादन के साधनों पर सरकार का या तो अधिकार रहता है या उसके नियंत्रण में रहते हैं। इसमें विनियोग, संसाधनों को आवंटन, उत्पादन, वितरण, उपभोग, आय, इत्यादि सरकार द्वारा निर्देशित एवं नियमित किये जाते हैं।

लूक्स एवं हूट ने सही लिखा है, "समाजवाद एक आन्दोलन है जिसका उद्देश्य सभी प्रकार के प्राकृतिक एवं मनुष्यकृत उत्पादन की वस्तुओं का जो कि बड़े पैमाने के उत्पादन में प्रयोग की जाती है, स्वामित्व एवं प्रबंध व्यक्तियों के स्थान पर सम्पूर्ण समाज के हाथ में देना होता है और उद्देश्य यह होता है कि राष्ट्रीय आय में हुई वृद्धि का इस प्रकार समान वितरण किया जाय कि व्यक्ति के आर्थिक उत्साह, आर्थिक स्वतंत्रता एवं उपभोग के चुनाव में कोई विशेष हानि न होने पाये।"

2.3.2.1 समाजवादी आर्थिक प्रणाली की महत्वपूर्ण विशेषताएँ (Characteristics of Socialistic Economic System)

1. **सरकार का स्वामित्व एवं नियंत्रण (Government Ownership and Control)-** समाजवादी व्यवस्था में उत्पत्ति के प्रमुख साधनों पर सरकार का अधिकार होता है, अर्थात् इस अर्थव्यवस्था में सम्पत्ति किसी व्यक्ति की न होकर सम्पूर्ण समाज की होती है। कुछ समाजवादी अर्थव्यवस्थाओं में निजी क्षेत्र की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है, लेकिन उस अवस्था में राष्ट्रीय प्राथमिकताओं को ध्यान में रखते हुए सरकार विनियोग का आवंटन एवं उत्पादन-संरचना का निर्देशन एवं नियमन करती है।
2. **आर्थिक नियोजन (Economic Planning)-** समाजवादी व्यवस्था की एक महत्वपूर्ण विशेषता आर्थिक नियोजन होती है जो इसे पूँजीवादी अर्थव्यवस्था से एकदम अलग करती है। समाजवाद में मूल्य-यंत्र नहीं पाया जाता है। इसमें अर्थव्यवस्था में स्थायित्व लाने के लिए, आर्थिक विकास के लिए आर्थिक नियोजन का

व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता है। इसमें उत्पादन, वितरण आदि से सम्बन्धित निर्णय एक केन्द्रीय योजना के अन्तर्गत किये जाते हैं।

3. **आय का समान वितरण (Equal Distribution of Income)-** समाजवाद का उदय समाज में धन के असमान वितरण को दूर करने हेतु हुआ। धनी एवं निर्धन के मध्य व्याप्त आर्थिक असमानता समाप्त करना ही समाजवाद का प्रमुख लक्ष्य होता है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए मजदूरी दर का निर्धारण, प्रशुल्क नीति, विभिन्न आर्थिक उपायों इत्यादि कदमों को सरकार द्वारा उठाया जाता है। समाजवादी अर्थव्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति को अपनी योग्यतानुसार कार्य करने का अवसर प्राप्त होता है। आर्थिक दृष्टि से इसमें वैसा भेद-भाव नहीं होता जैसा कि पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में होता है।
4. **प्रतियोगिता का अभाव (Lack of Competition)** चँूकि इसमें उत्पादन, वितरण आदि से सम्बन्धित निर्णय एक केन्द्रीय संस्था द्वारा लिये जाते हैं इसलिए इसमें विक्रेताओं एवं उत्पादकों की अधिक संख्या नहीं होती। इसके परिणामस्वरूप समाजवाद में प्रतियोगिता की अनुपस्थिति रहती है। प्रतियोगिता न होने से साधनों का अपव्यय, विज्ञापन एवं प्रचार-प्रसार पर होने वाले व्यय इत्यादि में महत्वपूर्ण कमी आती है तथा पूँजी के दुरूपयोग पर अंकुश लगता है।
5. **व्यवसाय की स्वतंत्रता की अनुपस्थित (Freedom of Occupation is Absent)-** इसमें व्यवसाय चुनने की स्वतंत्रता नहीं होती है अथवा सरकार द्वारा प्रतिबन्धित होती है। एक व्यक्तिगत व्यवसायिक इकाई अपनी इच्छानुसार व्यवसाय करने के लिए स्वतंत्र नहीं होती है।
6. **शोषण न होना (No Explotitation)-** समाजवादी अर्थव्यवस्था में पूँजीपति एवं श्रमिकों के वर्ग-भेद को मिटा दिया जाता है। श्रमिकों का शोषण समाप्त हो जाता है। इस अर्थव्यवस्था में लाभ-उद्देश्य के स्थान पर समाज कल्याण या सेवा उद्देश्य से कार्य सम्पादित किये जाते हैं।

समाजवाद की महत्वपूर्ण विशेषताओं का उल्लेख ऊपर किया गया है। व्यवहार में आज कई प्रकार के समाजवाद पाये जाते हैं- जैसे वैज्ञानिक समाजवाद, राजकीय समाजवाद, साम्यवाद इत्यादि। किन्तु इन विभिन्न प्रकार के समाजवाद में एक विशेषता समान रूप से सभी में पायी जाती है- पूंजीवादी व्यवस्था की तुलना में उत्पादन के साधनों पर सरकार का कहीं अधिक नियंत्रण होना। **उपरोक्त विशेषताओं के बावजूद समाजवादी अर्थव्यवस्था अनेक दोषों से ग्रसित है**। कुछ प्रमुख दोष हैं:

1. समाजवाद में उपभोक्ताओं को वस्तुएँ चुनने की स्वतंत्रता नहीं होती है। राज्य द्वारा जिन वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है, उपभोक्ता द्वारा उन्हीं वस्तुओं का उपयोग किया जाता है।
2. समाजवादी अर्थव्यवस्था में पूँजीवाद की तरह ऐसा कोई यंत्र नहीं होता है जिससे यह ज्ञात हो सके कि उपभोक्ता किस वस्तु की अधिक मांग कर रहे हैं तथा किन साधनों का अनुकूलतम उपयोग हो रहा है। पूँजीवाद में जो लाभ मूल्य-यंत्र प्रणाली से प्राप्त किये जा सकते हैं, वे लाभ समाजवाद की केन्द्रीय नियोजन प्रणाली से प्राप्त नहीं किये जा सकते हैं।
3. चूँकि समाजवाद में निजी व्यवसाय की स्वतंत्रता नहीं होती है, इसलिए योग्य व अनुभवी लोगों की सेवाओं से राष्ट्र वंचित रहता है।

4. समाजवादी व्यवस्था में लाभ भावना एवं प्रतियोगिता का अभाव, उत्तराक्तिाकार की समाप्ति, आदि के कारण व्यक्ति को कार्य करने की आर्थिक प्रेरणा नहीं मिलती है। समाजवाद के प्रत्येक श्रमिक एक सरकारी कर्मचारी होता है, इसलिए उसे अधिक कार्य करने हेतु प्रोत्साहन नहीं मिलता है।
5. समाजवादी अर्थव्यवस्था में नौकरशाही का प्रभुत्व होता है जिसमें अक्सर महत्वपूर्ण निर्णयों को टाल दिया जाता है। कभी-कभी किसी कार्य हेतु उच्च अधिकारियों की स्वीकृति की आवश्यकता होती है, इसमें काफी समय लग जाता है, जिससे समस्या समाप्त होने के स्थान पर ज्यों-कि-त्यों बनी रहती है।
6. समाजवाद की प्रकृति केन्द्रीयकरण की होती है। इसमें सभी शक्ति व अधिकार राज्य में केन्द्रित हो जाते हैं। शक्ति का केन्द्रीयकरण धन के केन्द्रीयकरण से कम खतरनाक नहीं होता है।

2.3.3 मिश्रित आर्थिक प्रणाली (Mixed Economic System)

पूँजीवादी की कमियों को दूर करने के लिए समाजवाद का जन्म हुआ। समाजवादी अर्थव्यथ्था पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के विपरीत कार्य करती है। लेकिन इसमें पूँजीवाद के लाभों से भी वंचित रहना पड़ता है। इस प्रकार हमारे समक्ष दो अर्थव्यव्स्थाओं में से एक चुनाव करना होता है। दोनों की ही अपनी-अपनी विशेषताएं एवं लाभ-हानि हैं। इन दोनों अर्थव्यवस्थाओं को सबसे बड़ा दोष यह है कि एक के लाभ-दूसरे से प्राप्त नहीं किये जा सकते।

अत: एक ऐसी अर्थव्यवस्था की आवश्यकता महसूस की गयी जो दोनों अर्थव्यवस्थाओं के लाभों को एक साथ प्राप्त कर सके। इस आवश्यकता को पूरा करने हेतु मिश्रित अर्थव्यवस्था का उदय हुआ। इसमें पूँजीवाद तथा समाजवाद दोनों के लाभों का मिश्रण होता है। इस व्यवस्था में निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र का सह-अस्तित्व रहता है।

इस अर्थव्यवस्था में उत्पादन, वितरण तथा राष्ट्र के आर्थिक विकास के कार्यक्रम न तो पूरी तरह से सरकार के हाथ में रहते हैं और न ही निजी उद्यमियों के हाथ में।

2.3.3.1 मिश्रित आर्थिक प्रणाली का अर्थ एवं परिभाषाएं (Meaning and Definitions of Mixed Economic System)

मिश्रित अर्थव्यवस्था पूंजीवाद एवं समाजवाद के बीच की व्यवस्था है। इसमें निजी तथा सार्वजनिक दोनों क्षेत्र साथ साथ चलते हैं। इस प्रकार की अर्थव्यवस्था में देश आर्थिक विकास के लिए निजी क्षेत्र को विशेष महत्व देते हुए आवश्यक सामाजिक नियंत्रण भी रखता है। इस प्रकार की अर्थव्यवस्था में कुछ उद्योग पूरी तरह सरकारी क्षेत्र में होते हैं तो कुछ पूरी तरह निजी क्षेत्र में होते हैं तथा कुछ उद्योगों में निजी तथा सार्वजनिक दोनों ही भाग ले सकते हैं। दोनों के कार्य करने का क्षेत्र निर्धारित कर दिया जाता है। परंतु इसमें निजी क्षेत्र की प्राथमिकता रहती है। दोनों अपने अपने क्षेत्र में इस प्रकार मिलकर कार्य करते हैं कि बिना शोषण के सभी वर्गों के आर्थिक कल्याण में वृद्धि हो सके तथा तीव्र आर्थिक विकास प्राप्त हो सके।

प्रमुख विद्वानों द्वारा दी गई मिश्रित अर्थव्यवस्था की परिभाषाओं का विवेचन इस प्रकार है:

प्रोफेसर जेडी खत्री के अनुसार "मिश्रित अर्थव्यवस्था एक ऐसी आर्थिक व्यवस्था है जिसमें समुदाय के सभी वर्गों के आर्थिक कल्याण में संवर्धन के लिए सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र को विशेष भूमिका दी जाती है।"

मुंड एवं रोनाल्डो गोल्स के अनुसार "मिश्रित अर्थव्यवस्था को निजी व सरकारी स्वामित्व या नियंत्रित उपक्रमों की एक मिली-जुली व्यवस्था के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह एक ऐसी प्रणाली है जिसमें व्यवसायिक क्रिया अनेक व्यवसायिक स्वरूपों अथवा व्यवस्थाओं द्वारा संचालित की जाती है न कि केवल एक के द्वारा।"

एमसी वैश्य के अनुसार "मिश्रित अर्थव्यवस्था दो विरोधी विचारधाराओं के मध्य का मार्ग है। इनमें एक तो उत्पादन एवं अन्य आर्थिक क्रियाओं के समाजीकरण के पक्ष में तर्क देती है तथा दूसरी और पूर्ण आर्थिक स्वतंत्रता एवं आस्था रखती है।"

जेडब्ल्यू ग्रो के अनुसार "मिश्रित अर्थव्यवस्था की पूर्व धारणाओं में से एक धारणा यह है कि मिश्रित अर्थव्यवस्था के अंतर्गत उत्पादन एवं उपभोग से संबंधित मुख्य निर्णयों को प्रभावित करने में निजी संस्थानों को स्वतंत्र पूंजीवादी व्यवस्था के अधीन प्राप्त स्वतंत्रता से कम स्वतंत्रता प्राप्त होती है तथा सार्वजनिक उद्योग के कठोर नियंत्रण से मुक्त होते हैं।"

उपरोक्त परिभाषाओं के अध्ययन एवं विश्लेषण से यह पता चलता है कि मिश्रित अर्थव्यवस्था एक ऐसी आर्थिक प्रणाली है जिसमें निजी एवं सार्वजनिक उद्यमों का सह-अस्तित्व होता है तथा मानवीय मूल्यों आर्थिक विकास एवं सामाजिक कल्याण को संबोधित किया जाता है। इस प्रकार से मिश्रित अर्थव्यवस्था के अंतर्गत राज्य विभिन्न आर्थिक क्रियाओं का आवंटन विभिन्न क्षेत्रों में उनके महत्व, प्रभाव, क्षेत्र, शोषण तत्व, कल्याण तत्व एवं अर्थव्यवस्था में उसकी स्थिति के आधार पर करता है जिससे साधनों का अधिकतम उपयोग समाज के कल्याण के लिए करना संभव हो।

2.3.3.2 मिश्रित आर्थिक प्रणाली अपनाने के कारण (Reasons for Adopting Mixed Economic System)

वैश्विक अर्थव्यवस्था के जिन देशों ने मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया है वहां इसके अपनाने के पक्ष में निम्नलिखित तर्क दिए जाते हैं:

1. **पूंजीवाद के दोष दूर करना (Removing the Defects of Capitalism)**: मिश्रित अर्थव्यवस्था के अंतर्गत पूंजीवादी शक्तियों पर सरकारी नियमन एवं नियंत्रण होता है जिस कारण निजी उद्योगपति जनहित के विरुद्ध कार्य नहीं कर पाते। मिश्रित अर्थव्यवस्था में ब्याज की दर, निवेश एवं रोजगार में नियोजन प्रक्रिया द्वारा व्यापार चक्र पर अंकुश लगाया जाता है। नियोजित अर्थव्यवस्था होने के कारण इसके कार्यों में दोहरेपन की अपव्ययता से भी बचा जा सकता है।
2. **पूंजीवाद के समस्त लाभ प्राप्त होना (To Get all the Benefits of Capitalism)**: मिश्रित अर्थव्यवस्था के अंतर्गत पूंजीवादी प्रणाली के समस्त दोषों को दूर करके लाभ प्राप्त किया जा सकता है इस प्रकार अर्थव्यवस्था में निजी क्षेत्र की सीमा को आवश्यकता अनुसार घटा-बढ़ा कर अधिकतम कुशलता या लाभ प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।
3. **समाजवाद के लाभ प्राप्त होना (Getting the Benefits of Socialism)**: मिश्रित अर्थव्यवस्था में समाजवादी प्रणाली के गुणों का समावेश होने तथा सरकारी नियमन नियोजन एवं नियंत्रण के द्वारा विकास प्रक्रिया अपनाए जाने के कारण आय एवं संपत्ति का समान वितरण संभव होता है। उत्पादन के साधनों का अनुकूलतम एवं विवेक पूर्ण दोहन से जन सामान्य को लाभ प्राप्त होता है।
4. **आधारभूत एवं जनहित उद्योग का विकास (Development of Basic and Public Interest Industries)**: उद्योगों मिश्रित अर्थव्यवस्था के अंतर्गत सार्वजनिक कल्याण एवं जनहित को ध्यान में रखकर सरकार ऐसी औद्योगिक इकाइयां स्थापित करती है जहां भारी मात्रा में निवेश होता है तथा लाभार्जन क्षमता कम होती है। ऐसे उद्योग देश की संरचना, सुरक्षा, विकास एवं जनकल्याण के लिए आवश्यक एवं उपयोगी होते हैं। इन उद्योगों में मुख्यतः रेलवे, बिजली, गैस, पानी, संचार, यातायात तथा सुरक्षा संबंधी सार्वजनिक उपक्रम आते हैं। दूसरी तरफ ऐसे उद्योगों में बहुत अधिक निवेश की आवश्यकता पड़ती है तथा लाभ नहीं

के बराबर होता है जिस कारण निजी क्षेत्र आकर्षित नहीं होता है। इसके लिए सरकार निजी क्षेत्र के साथ मिलकर इन उद्योगों का संचालन करती है जो मिश्रित अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण कार्य है।

2.3.3.3 मिश्रित आर्थिक प्रणाली की विशेषताएं (Features of Mixed Economic System)

मिश्रित अर्थव्यवस्था की संकल्पना का मूल तत्व सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र के मध्य कार्यों का स्पष्ट विभाजन है। तथा विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं में सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र का सापेक्षिक महत्व पृथक हो सकता है। इस प्रकार मिश्रित अर्थव्यवस्था की मुख्य विशेषताओं को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से समझा जा सकता है:

1) **विभिन्न क्षेत्रों का समावेश (Involvement of Different Areas/Sectors)**: मिश्रित अर्थव्यवस्था में विभिन्न क्षेत्रों जैसे सार्वजनिक क्षेत्र, निजी क्षेत्र, मिश्रित तथा सहकारी क्षेत्रों, की विद्यामानता रहती है जिनकी अपनी अपनी विशेषताएं होती है तथा अलग-अलग लाभ व गुण होते हैं। इसी कारण इस अर्थव्यवस्था को विभिन्न क्षेत्रों के लाभ प्राप्त हो जाते हैं। जिससे सामाजिक कल्याण का मार्ग प्रशस्त होता है।
2) **निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र का सह-अस्तित्व (Coexistence of Private and Public Sector)**: मिश्रित अर्थव्यवस्था में निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र दोनों साथ साथ कार्य करते हैं। सरकार द्वारा निजी उद्योग तथा सार्वजनिक उद्योगों का अलग-अलग क्षेत्र निश्चित कर दिया जाता है। सरकारी क्षेत्र के अंतर्गत लोहा, इस्पात, रासायनिक उद्योग, परिवहन, विद्युत, खनिज एवं संचार आदि शामिल होते हैं। जबकि निजी क्षेत्र के अंतर्गत कृषि आधारित लघु एवं मध्यम स्तरीय तथा उपभोक्ता आधारित उद्योग आदि शामिल होते हैं। दोनों ही क्षेत्र एक दूसरे पर निर्भर रहते हैं।
3) **सार्वजनिक हित सर्वोपरि (Public Interest on Priority)**: मिश्रित अर्थव्यवस्था में सार्वजनिक हित का स्थान सर्वोपरि होता है अर्थात सबसे ऊपर होता है। इसके लिए सरकार निजी क्षेत्र के साथ मिलकर कार्य करती है तथा आवश्यकता अनुसार निजी क्षेत्र को निर्देशित एवं नियंत्रित भी कर सकती है। जरूरत पड़ने पर निजी क्षेत्र को सरकार आर्थिक मदद या सुविधाएं भी प्रदान करती है।
4) **आय की समानता के लिए प्रयास (Striving for Income Equality):** समाज में आय वह संपत्ति की असमानता को कम करने के लिए सरकार नियम, नीतियों आदि के माध्यम से आवश्यक प्रयास करती रहती है; जिसके लिए विभिन्न प्रकार के कर जैसे कि आयकर, संपत्ति कर, उपहार कर, सेवा कर, इत्यादि माध्यमों द्वारा अधिक आय प्राप्त करने वाले से कर वसूल कर देश के विकास में लगाया जाता है जो कम आय प्राप्त करने वालों को अप्रत्यक्ष रूप से आय बढ़ाने में मदद करता है। साथ ही साथ एकअधिकारी प्रवृत्ति पर सरकारी नियंत्रण होता है।
5) **आर्थिक नियोजन (Economic Planning)**: आधुनिक युग में आर्थिक नियोजन से अभिप्राय केवल आर्थिक प्रगति से नहीं लगाया जाता बल्कि सामाजिक न्याय को भी शामिल किया जाता है। मिश्रित अर्थ व्यवस्था में सरकार एवं नियंत्रित निजी क्षेत्रों के द्वारा नियोजन का संचालन किया जाता है। इस प्रणाली के अंतर्गत आर्थिक नियोजन के द्वारा देश की आर्थिक एवं सामाजिक संरचना में परिवर्तन करके अर्थव्यवस्था में आर्थिक प्रगति को गतिमान किया जाता है।
6) **सरकारी नियंत्रण (Government Control)**: मिश्रित अर्थव्यवस्था में निजी क्षेत्र की सहभागिता होती है तथा देश की दशा एवं दिशा तय करने में इस क्षेत्र का महत्वपूर्ण योगदान होता है। अतः सरकार निजी क्षेत्र के साथ काम करते हुए अनेक कानूनों, नियमों, नीतियों आदि का निर्माण करती है जिससे निजी क्षेत्र भी राष्ट्रीय उद्देश्य की पूर्ति में देश एवं सरकार का सभागी बने। निजी क्षेत्र द्वारा व्यक्तिगत लाभ के लिए अधिक प्रयास किया जाता है।

7) **आर्थिक स्वतंत्रता (Economic Freedom)**: मिश्रित अर्थव्यवस्था में व्यक्ति की आवश्यक स्वतंत्रता को कम किए बिना ही केंद्रीय नियंत्रण एवं नियमन संभव होता है। आर्थिक क्षेत्र में व्यक्ति को उपभोग या व्यवसाय को चुनने की पूर्ण स्वतंत्रता रहती है। किसी भी देश के लोगों को प्राप्त आर्थिक स्वतंत्रता की विद्यामानता का मापदंड निजी, सहकारी एवं मिश्रित क्षेत्र कहे जा सकते हैं।
8) **साधनों का कुशल उपयोग (Efficient Use of Resources)**: मिश्रित अर्थव्यवस्था में आर्थिक नियोजन की पद्धति अपनाई जाने के कारण साधनों को निजी, सार्वजनिक, संयुक्त एवं सहकारी क्षेत्रों में एक पूर्व निर्धारित, सुनिश्चित योजना अनुसार बांटा जाता है। जिस कारण समस्त साधनों का कुशलतम प्रयोग सुनिश्चित होता है।
9) **नियोजन के लाभ (Benefits of Planning)**: मिश्रित अर्थव्यवस्था को एक पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार चलाया जाता है। अतः ऐसी अर्थव्यवस्था को आर्थिक नियोजन के माध्यम समस्त लाभ प्राप्त हो सकते हैं; जैसे साधनों का विवेकपूर्ण बटवारा, व्यापार चक्र से विमुक्ति, तीव्र आर्थिक विकास, कुशलता का ऊंचा स्तर इत्यादि।
10) **व्यक्तिगत उपक्रमों को महत्व (Importance of Individual Undertakings)**: मिश्रित अर्थव्यवस्था के अंतर्गत व्यक्तिगत उपक्रमों को अधिक महत्व दिया जाता है। सरकार द्वारा उद्योगों को वित्तीय सहायता, अनुदान, अनुज्ञापत्र, कर में छूट, बाजार व्यवस्था, उद्योगों का स्थानीयकरण आदि के लिए विशेष सुविधा उपलब्ध कराई जाती है। इस अर्थव्यवस्था के अंतर्गत सरकार निजी उद्यमी को मान्यता देती है तथा ऐसे अवसर प्रदान करती है करती रहती है जिनसे व्यक्तिगत उपक्रम राष्ट्रीय प्रगति में महत्वपूर्ण योगदान दे सकें।
11) **सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र का संयुक्त विकास (Joint Development of Public and Private Sector)**: सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र मिश्रित अर्थव्यवस्था के लिए समान महत्व रखते हैं। अतः सरकार का यह प्रयास रहता है कि दोनों क्षेत्र संयुक्त रूप से फले-फूले। इसके लिए सरकार निजी क्षेत्र को साथ लेकर चलने के लिए आर्थिक प्रोत्साहन व सहायता प्रदान करती है तथा उन्हें रक्षण भी देती है।

इस प्रकार मिश्रित अर्थव्यवस्था की उपरोक्त विशेषताओं का अध्ययन करने के बाद स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि मिश्रित अर्थव्यवस्था दो अन्य अर्थव्यवस्थाओं; पूंजीवादी एवं समाजवादी की तुलना में अधिक लोक कल्याणकारी विकास उन्मुख व संतुलित आर्थिक प्रणाली होती है।

आजादी से पहले भारत में पूंजीवादी अर्थव्यवस्था थी क्योंकि देश में पूरी तरह से ब्रिटिश सरकार की आर्थिक नीतियां लागू होती थी। ब्रिटिश सरकार की व्यापारिक नीतियां पूरी तरह से पूंजीवादी थी और इसमें व्यापारी गतिविधियों का वर्चस्व था। साथ ही ब्रिटेन ने जब-जब अपनी आर्थिक एवं व्यापारिक नीतियों में परिवर्तन किया तब तक भारत को भी अपने आर्थिक एवं व्यापारिक नीतियों में उसी के अनुरूप परिवर्तन करने के लिए विवश होना पड़ा। परंतु स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश की अर्थव्यवस्था को तीव्र गति से विकसित करने की अत्यधिक आवश्यकता थी। इसीलिए देश में सबसे पहले 6 अप्रैल 1948 को पहला पहली औद्योगिक नीति के लागू होने से ही मिश्रित अर्थव्यवस्था की शुरुआत हो गई थी। मिश्रित अर्थव्यवस्था के माध्यम से जहां एक और व्यक्तिगत स्वतंत्रता को स्थान मिलता है वहीं दूसरी ओर सरकारी नियंत्रण भी बना रहता है। भारत मिश्रित अर्थव्यवस्था के लक्ष्य को अपनाकर समस्त नियोजन प्रक्रिया संपन्न कर रहा है। हमारे देश की पंचवर्षीय योजनाएं देश में मिश्रित अर्थव्यवस्था का उल्लेखनीय उदाहरण है। इन योजनाओं में सार्वजनिक एवं निजी दोनों क्षेत्रों को पर्याप्त स्थान दिया गया है। देश में जहां एक और सरकार सार्वजनिक क्षेत्र का विकास कर रही है वहीं दूसरी और निजी क्षेत्र में व्यक्तिगत स्वतंत्रता व विकास को पूरा स्थान दिया जा रहा है। भारतीय संविधान के नीति निदेशक तत्व भी मिश्रित अर्थव्यवस्था की स्थापना में महत्वपूर्ण सिद्ध हुए

हैं। नीति निर्देशक सिद्धांतों में उल्लेख है कि देश में भौतिक साधनों का इस प्रकार से बंटवारा करना है कि धन एवं उत्पादन के साधनों का केंद्रीकरण न हो पाए अर्थात वह कुछ लोगों के हाथ में ही इकट्ठे होकर न रह जाए। संविधान में भौतिक साधनों को राजकीय अथवा निजी किसी भी क्षेत्र के अधिकार में रखने की चर्चा नहीं की गई। इसका निर्णय राज्य सरकार के अधिकार में है कि अर्थव्यवस्था के किस क्षेत्र का संचालन निजी क्षेत्र द्वारा किया जाए। भारतीय संविधान द्वारा नई सामाजिक व्यवस्था में स्वतंत्रता निजी प्राथमिकता प्रारंभिकता एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता के लाभों के लिए प्रावधान है। दूसरी ओर इन क्षेत्रों पर सामाजिक नियंत्रण का लाभ उठाने के लिए भी व्यवस्था है जिन पर सामाजिक नियंत्रण द्वारा जनहित संभव होता है। संविधान द्वारा निर्धारित व्यवस्था में निजी एवं सार्वजनिक दोनों क्षेत्रों को स्थान दिया गया है तथा इन दोनों को एक दूसरे के पूरक एवं सहायक के रूप में कार्य करने का आयोजन किया गया है। देश की पहली औद्योगिक नीति 1948 में लागू हुई जो भारत में मिश्रित अर्थव्यवस्था की जन्मदाता है। इस नीति में मिश्रित अर्थव्यवस्था के रूप में उद्योगों को निम्नलिखित तीन भागों में विभाजित किया गया था

1. ऐसे उद्योग जिनका संचालन केवल केंद्र सरकार ही कर सकती है।
2. ऐसे उद्योग जिनके विकास का उत्तरदायित्व राज्य सरकार पर था।
3. ऐसे उद्योग जो पूरी तरह से निजी क्षेत्र के लिए छोड़ दिए गए थे।

देश के विभिन्न औद्योगिक नीतियों एवं पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से मिश्रित अर्थव्यवस्था को और अधिक मजबूत करने पर बल दिया गया है तथा अर्थव्यवस्था के संपूर्ण क्षेत्र पर समान व न्यायपूर्ण ध्यान देकर उच्च संतुलित आर्थिक विकास के लक्ष्य प्राप्त करने का प्रयास किया गया है।

2.4 अपनी प्रगति की जाँच करें (Check Your Progress)

कथन के सत्य/असत्य होने की जांच कीजिए

1. पूँजीवादी अर्थव्यवस्था वह अर्थव्यवस्था है जिसमें प्राकृतिक एवं मनुष्यगत पूँजी पर सरकार का अधिकार होता है तथा इनका उपयोग वे जन कल्याण के लिए करते हैं। (सत्य/असत्य)
2. मिश्रित अर्थव्यवस्था की संकल्पना का मूल तत्व सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र के मध्य कार्यों का स्पष्ट विभाजन है। (सत्य/असत्य)
3. समाजवाद से तात्पर्य ऐसी आर्थिक प्रणाली से है जिसमें उत्पादन के साधनों पर सरकार का या तो अधिकार रहता है या उसके नियंत्रण में रहते हैं। (सत्य/असत्य)
4. आजादी से पहले भारत में पूंजीवादी अर्थव्यवस्था थी। (सत्य/असत्य)
5. देश की पहली औद्योगिक नीति 1948 में लागू हुई जो भारत में मिश्रित अर्थव्यवस्था की जन्मदाता है। (सत्य/असत्य)

2.5 सारांश (Summary)

आर्थिक प्रणाली के अंतर्गत वे संस्थाएं सम्मिलित की जा सकती है जिन्हें देश अपने निवासियों की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए अपना आता है। आर्थिक प्रणाली यह निश्चित करती है कि कौन सी वस्तु कैसे और कितनी उत्पादित की जाए तथा उसका वितरण कैसे किया जाए। स्वामित्व के आधार पर आर्थिक प्रणाली तीन प्रकार की होती है; पूंजीवादी आर्थिक प्रणाली, समाजवादी आर्थिक प्रणाली एवं मिश्रित आर्थिक प्रणाली। पूंजीवादी आर्थिक प्रणाली के दोषों के कारण समाजवादी आर्थिक प्रणाली अपनाई गई। परंतु समाजवादी एवं पूंजीवादी दोनों ही प्रणालियों के दोषों को दूर करने के लिए एक नई प्रणाली जिसे मिश्रित आर्थिक प्रणाली कहते हैं अपनाई जाने लगी। भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद मिश्रित आर्थिक प्रणाली अपनाई गई। मिश्रित आर्थिक प्रणाली लागू करने के लिए भारत सरकार को अपनी आर्थिक नीति एवं अधिनियम उसी के अनुरूप बनाना पड़ा।

2.6 कीवर्ड (Keywords)

आर्थिक प्रणाली- आर्थिक प्रणाली संस्थाओं का एक ढाँचा है, जिसके द्वारा उत्पत्ति के साधनों तथा उनके द्वारा उत्पादित वस्तुओं के प्रयोग पर सामाजिक नियन्त्रण किया जाता है।

पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली- पूँजीवादी अर्थव्यवस्था वह अर्थव्यवस्था है जिसमें प्राकृतिक एवं मनुष्यगत पूँजी पर व्यक्तियों का निजी अधिकार होता है तथा इनका उपयोग वे अपने लाभ के लिए करते हैं।

समाजवादी आर्थिक प्रणाली- समाजवाद से तात्पर्य ऐसी आर्थिक प्रणाली से है जिसमें उत्पादन के साधनों पर सरकार का या तो अधिकार रहता है या उसके नियंत्रण में रहते हैं।

आर्थिक प्रणाली मिश्रित- मिश्रित अर्थव्यवस्था पूंजीवाद एवं समाजवाद के बीच की व्यवस्था है। इसमें निजी तथा सार्वजनिक दोनों क्षेत्र साथ साथ चलते हैं।

2.7 स्व-मूल्यांकन परीक्षण (Self-Assessment Test)

1. आर्थिक प्रणाली के मुख्य कार्य क्या हैं?

2. पूंजीवादी आर्थिक व्यवस्था से आप क्या समझते हैं?

3. पूंजीवादी आर्थिक व्यवस्था की मुख्य विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

4. समाजवादी अर्थव्यवस्था से आप क्या समझते हैं?

5. समाजवादी आर्थिक व्यवस्था की मुख्य विशेषताओं की व्याख्या कीजिए।

6. मिश्रित अर्थव्यवस्था प्रणाली से आप क्या समझते हैं इसके मुख्य लक्षणों की व्याख्या कीजिए।

2.8 उत्तर आपकी प्रगति की जांच करने के लिए (Answers to Check Your Progress)

1.असत्य, 2.सत्य, 3.सत्य, 4.सत्य, 5.सत्य

2.9 संदर्भ/सुझाई गई पुस्तकें (References/ Suggested Readings)

अहमद, फैसल और आलम, एम. अबसर (2017) व्यावसायिक पर्यावरण भारतीय और वैश्विक परिप्रेक्ष्य पीएचआई लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली

चेरुनीलम, फ्रांसिस (2016) व्यावसायिक पर्यावरण पाठ और मामले हिमालय पब्लिशिंग हाउस प्रा. लिमिटेड, गिरगांव, मुंबई

विषय: अर्थशास्त्र (व्यष्टिगत अर्थशास्त्र के सिद्धांत)	
विषय क्रमांक: बीए BECO-101	लेखक: डॉ. सोमनाथ परूथी
अध्याय: 3	वेट्टर:
मांग तथा पूर्ति विश्लेषण	

संरचना (Structure)

3.0 सीखने के उद्देश्य (Learning Objectives)
3.1 परिचय (Introduction)
3.2 बाजार और प्रतियोगिता Markets and Competition
3.2.1 एक बाजार क्या है? What is a Market?
3.2.2 प्रतियोगिता क्या है? What is Competition?
3.3 मांग Demand
3.3.1 मांग वक्र: कीमत और मांग की गई मात्रा के बीच संबंध (The Demand Curve: The Relationship between Price and Quantity Demanded)
3.3.2 बाजार की मांग बनाम व्यक्तिगत मांग (Market Demand versus Individual Demand)
3.3.3 मांग वक्र में खिसकाओ (Shifts in the Demand Curve)
3.4 पूर्ती (Supply)
3.4.1 पूर्ति क्या है? (What is Supply?)
3.4.2 पूर्ति के प्रकार (Types of Supply)
3.4.2.1 व्यक्तिगत पूर्ति
3.4.2.2 बाज़ार पूर्ति (Market Supply)
3.4.3 पूर्ति का नियम (Law of Supply)
3.4.3.1 पूर्ति वक्र में परिवर्तन (Change in Supply Curve)
3.4.3.2 पूर्ति के नियम के अपवाद (Exceptions of Law of Supply)
3.4.3.3 पूर्ति को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affecting Supply)
3.5 Supply and Demand Together (पूर्ति और मांग एक साथ)
3.6 मांग की लोच (Elasticity of Demand)
3.6.1 मांग की कीमत लोच (Price Elasticity of Demand)
3.6.2 मांग की कीमत लोच को मापने की विधियां
3.6.2.1 प्रतिशत विधि (The Percentage Method)
3.6.2.2मांग की बिंदु लोच (Point Elasticity of Demand)
3.6.2.3 चाप कीमत लोच (Arc Elasticity)
3.6.2.4 आय विधि (Revenue Method)
3.6.2.5 कुल व्यय विधि (Total Expenditure Method): मांग की लोच मापने की विधि का प्रतिपादन
3.6.2 मांग की आय लोच (Income Elasticity of Demand)
3.6.3 मांग की आड़ी लोच (Cross Elasticity of Demand)
3.6.4 मांग की लोच को निर्धारित करने वाले तत्व या कारक (Determinants of Elasticity of Demand):
3.7 पूर्ति की लोच (Elasticity of Supply)

3.7.1 पूर्ति की लोच को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affecting the Elasticity of Supply)
3.8 मांग और पूर्ति विश्लेषण के अनुप्रयोग (Applications of Demand and Supply Analysis)
3.8.1 उपभोक्ता अधिशेष (Consumer’s Surplus)
3.8.1.1 भुगतान करने की इच्छा (Willingness to Pay)
3.8.1.2 उपभोक्ता अधिशेष को मापने के लिए मांग वक्र का उपयोग करना (Using the Demand Curve to Measure Consumer Surplus)
3.8.1.3 कम कीमत कैसे उपभोक्ता अधिशेष को बढ़ाती है (How a Lower Price Raises Consumer Surplus)
3.8.1.4 उपभोक्ता अधिशेष क्या मापता है? (What Does Consumer Surplus Measure?)
3.8.2 उत्पादक का अधिशेष (Producer's Surplus)
3.8.2.1 लागत और बेचने की इच्छा (Cost and the Willingness to Sell)
3.8.2.2 उत्पादक अधिशेष को मापने के लिए पूर्ति वक्र का उपयोग करना (Using the Supply Curve to Measure Producer Surplus)
3.8.2.3 कैसे एक उच्च कीमत निर्माता अधिशेष को बढ़ाती है (How a Higher Price Raises Producer Surplus)
3.8.3 बाज़ार की कार्यक्षमता (Market Efficiency)
3.8.3.1 एक परोपकारी सामाजिक नियोजक (The Benevolent Social Planner)
3.8.3.2 बाजार संतुलन का मूल्यांकन (Evaluating the Market Equilibrium)
3.8.4 मूल्य राशनिंग (Price Rationing)
3.8.5 न्यूनतम समर्थन मूल्य/ कीमत तल (Minimum Support Price/Price Floors)
3.9 अपनी प्रगति की जाँच करें (Check Your Progress)
3.10 सारांश (Summary)
3.11 कीवर्ड (Keywords)
3.12 स्व-मूल्यांकन परीक्षण (Self-Assessment Test)
3.13 उत्तर आपकी प्रगति की जांच करने के लिए (Answers to Check Your Progress)
3.14 संदर्भ/सुझाई गई पुस्तकें (References/ Suggested Readings)

3.0 सीखने के उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय के अध्ययन के बाद

- आप बता सकेंगे की मांग तथा पूर्ति के नियम का क्या अर्थ है।
- समझा सकेंगे की मांग एवं पूर्ति को प्रभावित करने वाले कारक कौन-कौन से हैं।
- मांग तथा पूर्ति के महत्व को समझा सकेंगे तथा मांग के विभिन्न प्रकारों का विश्लेषण भी कर सकेंगे।
- मांग तथा पूर्ति विश्लेषण के विभिन्न अनुप्रयोग क्या-क्या है।
- उपभोक्ता की बचत, उत्पादक की बचत, कीमत राशनिंग तथा कीमत तल का अर्थ समझ पाएंगे।
- बता सकेंगे की मांग तथा पूर्ति की लोच का अर्थ क्या है।
- मांग तथा पूर्ति की लोच के महत्व को समझा सकेंगे तथा मांग एवं पूर्ति की लोच का विश्लेषण भी कर सकेंगे।

3.1 परिचय (Introduction)

पूर्ति और मांग दो ऐसे शब्द हैं जिनका अर्थशास्त्री अक्सर उपयोग करते हैं। पूर्ति और मांग वे शक्तियां हैं जो बाजार अर्थव्यवस्थाओं को चलाती हैं। वे प्रत्येक उत्पादित वस्तु की मात्रा और उस कीमत का निर्धारण करती हैं जिस पर इसे बेचा जाता है। यदि आप जानना चाहते हैं कि कोई नीति अर्थव्यवस्था को कैसे प्रभावित करती है, तो आपको पहले यह समझना होगा कि यह (नीति) पूर्ति और मांग को कैसे प्रभावित करती है। यह अध्याय पूर्ति और मांग के

सिद्धांत का परिचय देता है। यह विचार करता है कि क्रेता और विक्रेता कैसे व्यवहार करते हैं और वे एक दूसरे के साथ कैसे बातचीत करते हैं। यह दर्शाता है कि कैसे पूर्ति और मांग एक बाजार अर्थव्यवस्था में कीमतों का निर्धारण करती है और कैसे कीमतें, बदले में, अर्थव्यवस्था के दुर्लभ संसाधनों को आवंटित करती हैं।

मांग एवं पूर्ति को प्रभावित करने वाले तत्व विशेष रूप से कीमत में परिवर्तन के फल स्वरुप मांग तथा पूर्ति में किस अनुपात में परिवर्तन होगा तथा किस दिशा में होगा इसका विश्लेषण मांग एवं पूर्ति की लोच के संदर्भ में किया गया है मांग तथा पूर्ति विश्लेषण के विभिन्न अनुप्रयोग अर्थात उपभोक्ता की बचत, उत्पादक की बचत, कीमत राशनिंग एवं कीमत तल में क्या-क्या है का अध्ययन हम इस अध्याय में करेंगे।

3.2 बाजार और प्रतियोगिता Markets and Competition

पूर्ति और मांग की शर्तें (terms) लोगों के व्यवहार को दर्शाती है क्योंकि वे प्रतिस्पर्धी/ प्रतियोगी बाजारों में एक दूसरे को प्रभावित करती है। क्रेता और विक्रेता कैसे व्यवहार करते हैं, इस पर चर्चा करने से पहले, आइए पहले पूरी तरह से विचार करें कि बाजार और प्रतिस्पर्धा से हमारा क्या मतलब है।

3.2.1 एक बाजार क्या है? What is a Market?

बाजार एक विशेष वस्तु या सेवा के क्रेताओं और विक्रेताओं का एक समूह है। एक समूह के रूप में खरीदार वस्तु की मांग का निर्धारण करते हैं, और विक्रेता एक समूह के रूप में वस्तु की पूर्तिका निर्धारण करते हैं।

बाजार कई प्रकार के होते हैं। कुछ बाजार अत्यधिक संगठित होते हैं, जैसे कि कई कृषि वस्तुओं के बाजार। इन बाजारों में, खरीदार और विक्रेता एक विशिष्ट समय और स्थान पर मिलते हैं जहां एक नीलामी कर्ता कीमतें निर्धारित करने और बिक्री की व्यवस्था करने में मदद करता है।

आमतौर पर, बाजार कम संगठित होते हैं। उदाहरण के लिए, किसी विशेष शहर में आइसक्रीम के बाजार पर विचार करें। आइसक्रीम के खरीदार एक साथ कभी नहीं मिलते। आइसक्रीम के विक्रेता अलग-अलग स्थानों पर हैं और कुछ अलग उत्पाद पेश करते हैं। आइसक्रीम की कीमत बताने वाला कोई नीलामकर्ता नहीं है। प्रत्येक विक्रेता एक आइसक्रीम कोन (cone) के लिए एक मूल्य निर्धारित करता है, और प्रत्येक खरीदार यह तय करता है कि प्रत्येक दुकान से कितनी आइसक्रीम खरीदनी है। बहरहाल, ये उपभोक्ता और आइसक्रीम के उत्पादक आपस में जुड़े हुए हैं। आइसक्रीम के खरीदार, विभिन्न आइसक्रीम विक्रेताओं में से अपनी इच्छाओं को पूरा करने के लिए आइसक्रीम विक्रेता चुन रहे हैं, और सभी आइसक्रीम विक्रेता उन्ही आइसक्रीम खरीदारों/ क्रेताओं से अपने व्यवसाय को सफल बनाने के लिए अपील करने की कोशिश कर रहे हैं। भले ही यह (क्रेताओं और विक्रेताओं का समूह) उतना संगठित नहीं है, आइसक्रीम खरीदारों और आइसक्रीम विक्रेताओं का समूह एक बाजार बनाता है।

3.2.2 प्रतियोगिता क्या है? What is Competition?

आइसक्रीम का बाजार, अर्थव्यवस्था के अधिकांश बाजारों की तरह, अत्यधिक प्रतिस्पर्धी है। प्रत्येक खरीदार जानता है कि कई विक्रेता हैं जिनमें से चुनना है, और प्रत्येक विक्रेता को पता है कि उसका उत्पाद अन्य विक्रेताओं द्वारा पेश किए गए उत्पाद के जैसा ही है। नतीजतन, बेची गई आइसक्रीम की कीमत और मात्रा किसी एक खरीदार या विक्रेता द्वारा निर्धारित नहीं की जाती है। बल्कि, कीमत और मात्रा सभी खरीदारों और विक्रेताओं द्वारा निर्धारित की जाती है क्योंकि वे बाज़ार में बातचीत (interact) करते हैं।

अर्थशास्त्री प्रतिस्पर्धी/ प्रतियोगी बाजार शब्द का उपयोग एक ऐसे बाजार का वर्णन करने के लिए करते हैं जिसमें इतने सारे खरीदार/क्रेता और इतने सारे विक्रेता होते हैं कि प्रत्येक का बाजार मूल्य पर ना के बराबर/नगण्य प्रभाव पड़ता है। आइसक्रीम के प्रत्येक विक्रेता का कीमत पर सीमित नियंत्रण होता है क्योंकि अन्य विक्रेता समान (एक जैसे/उसी के जैसे) उत्पादों की पेशकश कर रहे होते हैं। एक विक्रेता के पास चालू कीमत से कम लेने का कोई कारण नहीं है, और यदि वह अधिक कीमत लेता है, तो खरीदार अपनी खरीदारी कहीं और करेंगे अर्थात किसी और विक्रेता से सामान खरीदेंगे। इसी तरह, आइसक्रीम का कोई एक खरीदार आइसक्रीम की कीमत को प्रभावित नहीं कर सकता क्योंकि प्रत्येक खरीदार केवल एक छोटी मात्रा खरीदता है।

इस अध्याय में, हम मानते हैं कि बाजार पूरी तरह से प्रतिस्पर्धी हैं। प्रतिस्पर्धा के इस उच्चतम रूप तक पहुंचने के लिए, बाजार में दो विशेषताएं होनी चाहिए: (1) बिक्री के लिए पेश की गई वस्तुएं सामान बिल्कुल समान हैं, और (2) खरीदार/क्रेता और विक्रेता इतने अधिक संख्या में हैं कि किसी एक खरीदार/क्रेता या विक्रेता का इस बाजार मूल्य पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। चूंकि पूरी तरह से प्रतिस्पर्धी बाजारों में खरीदारों और विक्रेताओं को बाजार द्वारा निर्धारित कीमत को स्वीकार करना चाहिए, उन्हें मूल्य लेने वाला कहा जाता है। बाजार मूल्य पर, खरीदार वह सब कुछ खरीद सकते हैं जो वे चाहते हैं, और विक्रेता वे सब कुछ बेच सकते हैं जो वे बेचना चाहते हैं।

कुछ बाजार ऐसे हैं जिनमें पूर्ण प्रतियोगिता की धारणा पूरी तरह से लागू होती है। उदाहरण के लिए, गेहूं बाजार में, हजारों किसान हैं जो गेहूं बेचते हैं और लाखों उपभोक्ता जो गेहूं और गेहूं उत्पादों का उपयोग करते हैं। क्योंकि कोई भी खरीदार/क्रेता या विक्रेता गेहूं की कीमत को प्रभावित नहीं कर सकता है, प्रत्येक दिए गए बाजार मूल्य के अनुसार लेता है।

हालांकि, सभी सामान और सेवाएं पूरी तरह से प्रतिस्पर्धी बाजारों में नहीं बेची जाती हैं। कुछ बाजारों में केवल एक विक्रेता होता है, और यह विक्रेता कीमत निर्धारित करता है। ऐसे विक्रेता को एकाधिकारी कहा जाता है। उदाहरण के लिए, आपकी स्थानीय केबल टेलीविजन कंपनी का एकाधिकार हो सकता है। आपके शहर के निवासियों के पास केबल सेवा खरीदने के लिए शायद केवल एक ही कंपनी है। अभी भी अन्य बाजार पूर्ण प्रतिस्पर्धा और एकाधिकार की चरम सीमा के बीच आते हैं।

पूर्ण प्रतियोगिता बाजार का एक सरल रूप है। पूरी तरह से प्रतिस्पर्धी बाजार का विश्लेषण करना सबसे आसान है क्योंकि बाजार में भाग लेने वाला हर व्यक्ति बाजार की स्थितियों के अनुसार कीमत लेता है। इसके अलावा, क्योंकि अधिकांश बाजारों में कुछ हद तक प्रतिस्पर्धा मौजूद है, इसलिए कई बातें जो हम सही प्रतिस्पर्धा के तहत, पूर्ति और मांग का अध्ययन करके सीखते हैं, वे अधिक जटिल बाजारों में भी लागू होती हैं।

3.3 मांग Demand

हम खरीदारों/क्रेताओं के व्यवहार की जांच करके बाजारों का अपना अध्ययन शुरू करते हैं। अपनी बात पर ध्यान केंद्रित करने के लिए, आइए एक विशेष वस्तु -आइसक्रीम का उदाहरण लेते हैं।

3.3.1 मांग वक्र: कीमत और मांग की गई मात्रा के बीच संबंध (The Demand Curve: The Relationship between Price and Quantity Demanded)

किसी भी वस्तु की मांगी गई मात्रा उस वस्तु की मात्रा होती है जिसे खरीदार/ क्रेता खरीदने के लिए ***तैयार और सक्षम*** होते हैं। जैसा कि इस विश्लेषण में हम देखेंगे कि कई चीजें हैं जो किसी भी वस्तु की मांगी गई मात्रा निर्धारित

करती हैं, लेकिन बाजार कैसे काम करता है यह समझने के लिए यह जानना होगा कि , एक निर्धारक/कारक केंद्रीय भूमिका निभाता है - और वह है वस्तु की कीमत। यदि आइसक्रीम की कीमत बढ़कर 20 डॉलर प्रति स्कूप हो जाती है, तो आप कम आइसक्रीम खरीदेंगे। आप इसके स्थान पर रसमलाई खाना पसंद करेंगे। यदि आइसक्रीम की कीमत गिरकर $0.20 प्रति स्कूप हो जाती है, तो आप अधिक आइसक्रीम खरीदना पसंद करेंगे। कीमत और मांग की मात्रा के बीच यह संबंध अर्थव्यवस्था में अधिकांश वस्तुओं के लिए सच साबित होता है और वास्तव में, यह इतना व्यापक है कि अर्थशास्त्री इसे **मांग का नियम** कहते हैं: अन्य बातें समान होने पर, जब एक वस्तु कीमत की बढ़ती है, तो उस वस्तु की मांगी गई मात्रा गिरती है, और जब उस वस्तु की कीमत गिरती है, तो मांग की गई मात्रा बढ़ जाती है।

मांग का नियम कीमत और मात्रा के बीच एक व्युत्क्रम संबंध (Inverse Relation) का वर्णन करता है जो की किसी वस्तु के लिए होता है।

तालिका 3.1 दिखाती है कि कैथरीन हर महीने आइसक्रीम की अलग-अलग कीमतों पर कितने आइसक्रीम कोन (cones) खरीदती है। यदि आइसक्रीम की कीमत शून्य है अर्थात मुफ्त है, तो कैथरीन प्रति माह 12 शंकु (cones) आइसक्रीम के खरीदती/खाती है। $0.50 प्रति शंकु (cone) पर, कैथरीन हर महीने 10 शंकु (cones) खरीदती है। जैसे-जैसे कीमत और बढ़ती है, वह कम और कम शंकु (cones) खरीदती है। जब कीमत $ 3.00 तक पहुंच जाती है, तो कैथरीन कोई शंकु नहीं खरीदती है। यह तालिका एक **मांग अनुसूची** है। अन्य बातें समान होने पर एक तालिका जो किसी वस्तु की कीमत और मांगी गई मात्रा के बीच संबंध को दर्शाती है, एक मांग अनुसूची कहलाती है।

मैकौनल के शब्दों में, "मांग तालिका वह तालिका है जो एक वस्तु की विभिन्न कीमतों को दर्शाती है और प्रत्येक कीमत पर उस वस्तु की मांगी गई मात्रा को बतलाती है।" अन्य शब्दों में, मांग तालिका किसी वस्तु की उन विभिन्न मात्राओं को प्रकट करती है जिन्हें एक उपभोक्ता किसी निश्चित समय में विभिन्न संभव कीमतों पर खरीदने के लिए इच्छुक होता है।

चित्र 3.1

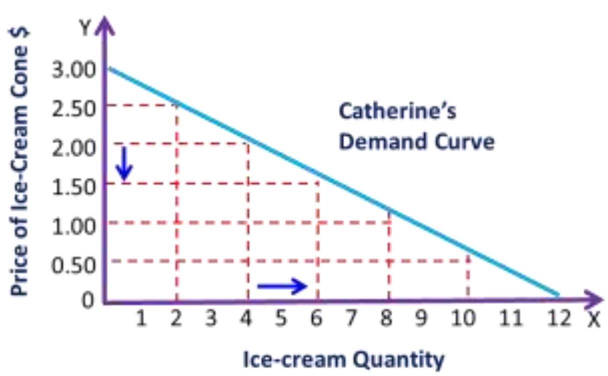

तालिका 3.1

Catherine's Demand Schedule	
Price of Ice-cream Cone	Quantity of Cones Demanded
$0.00	12 cones
0.50	10
1.00	8
1.50	6
2.00	4
2.50	2
3.00	0

चित्र 3.1 मांग के नियम को दर्शाने के लिए तालिका 3.1 से संख्याओं का उपयोग करता है। परंपरा के अनुसार, आइसक्रीम की कीमत ऊर्ध्वाधर अक्ष (vertical axes) पर दर्शाई गई है, और आइसक्रीम की मांगी गई मात्रा क्षैतिज

अक्ष (horizontal axes) पर दर्शाई गई है। कीमत और मांग की मात्रा से संबंधित इस रेखा चित्र को **मांग वक्र** कहा जाता है। मांग वक्र नीचे की ओर ढल वाला होता है, क्योंकि अन्य बातें समान होने पर, कम कीमत का अर्थ है अधिक मात्रा की मांग। "मांग वक्र वस्तु की उन अधिकतम मात्राओं को प्रकट करती है जिन्हें उपभोक्ता समय की एक अवधि में विभिन्न कीमतों पर खरीदेंगे।" लिप्सी के अनुसार, "वह वक्र जो कि वस्तु की कीमत और वस्तु की मात्रा, जिसे उपभोक्ता खरीदना चाहता है, में संबंध दिखाता है, मांग वक्र कहलाता है।"

3.3.2 बाजार की मांग बनाम व्यक्तिगत मांग (Market Demand versus Individual Demand)

चित्र 3.1 में मांग वक्र किसी व्यक्ति की वस्तु के लिए मांग को दर्शाता है। बाजार कैसे काम करता है, इसका विश्लेषण करने के लिए, हमें बाजार की मांग निर्धारित करने की आवश्यकता है। किसी विशेष वस्तु या सेवा के लिए **बाजार मांग** सभी व्यक्तिगत मांगों का क्षैतिज योग (horizontal sum) है।

तालिका 3.2 इस बाजार में दो व्यक्तियों-कैथरीन और निकोलस की आइसक्रीम की मांग अनुसूची दिखाती है। किसी भी कीमत पर, कैथरीन की मांग अनुसूची हमें बताती है कि वह कितनी आइसक्रीम खरीदती है, और निकोलस की मांग अनुसूची हमें बताती है कि वह कितनी आइसक्रीम खरीदता है। प्रत्येक कीमत पर बाजार की मांग दो अलग-अलग मांगों का योग है।

चित्र 3.2

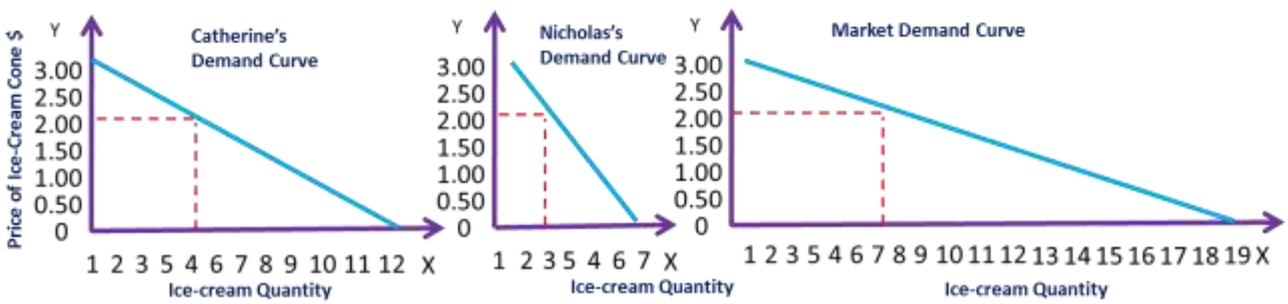

तालिका 3.2

Market Demand Schedule

Price of Ice-Cream Cone $	Catherine's Demand +	Nicholas's Demand =	Market Demand
0.00	12	7	19 Cones
0.50	10	6	16
1.00	8	5	13
1.50	6	4	10
2.00	4	3	7
2.50	2	2	4
3.00	0	1	1

चित्र 3.2 मांग वक्रों को दर्शाता है जो इन मांग अनुसूचियों के अनुरूप हैं। ध्यान दें कि हम बाजार मांग वक्र प्राप्त करने के लिए व्यक्तिगत मांग वक्रों को क्षैतिज रूप से जोड़ते हैं। अर्थात्, किसी भी कीमत पर मांगी गई **कुल मात्रा** (बाजार मांग) का पता लगाने के लिए, हम अलग-अलग मात्राएँ (कैथरीन और निकोलस की) जोड़ते हैं, जो व्यक्तिगत

माँग वक्रों के क्षैतिज अक्ष पर पाई जाती हैं। क्योंकि हम यह विश्लेषण करने में रुचि रखते हैं कि बाजार कैसे कार्य करता है, हम अक्सर बाजार मांग वक्र का उपयोग करते हैं। बाजार मांग वक्र दर्शाता है कि अन्य बातें समान रहने पर किसी वस्तु की मांग की **कुल मात्रा** कीमत बदलने पर कैसे बदलती है

3.3.3 मांग वक्र में खिसकाओ (Shifts in the Demand Curve)

क्योंकि बाजार मांग वक्र अन्य बातों को समान मान लेता है इसलिए यह जरूरी नहीं कि समय बीतने पर यह स्थिर रहेगा क्योंकि अन्य चीजों में परिवर्तन होता रहता है। यदि किसी दी गई कीमत पर मांग की गई मात्रा को बदलने के लिए अन्य किसी कारक में कुछ परिवर्तन होता है, तो मांग वक्र बदल (shifts) जाता है। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन ने पाया कि जो लोग नियमित रूप से आइसक्रीम खाते हैं वे लंबे समय तक जीवित रहते हैं, स्वस्थ जीवन जीते हैं। इस खोज से आइसक्रीम की मांग बढ़ेगी। किसी भी कीमत पर, खरीदार अब बड़ी मात्रा में आइसक्रीम खरीदना चाहेंगे, और आइसक्रीम की मांग वक्र बदल (shift हो) जाएगी।

चित्र 3.3 तथा 3.4 मांग में बदलाव/खिसकाओ को दर्शाते हैं। कोई भी परिवर्तन जो प्रत्येक कीमत पर मांग की मात्रा को बढ़ाता है, जैसे कि हमारे काल्पनिक उदाहरण में अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन द्वारा की गई खोज, मांग वक्र को दाईं ओर स्थानांतरित कर देती है और इसे ***मांग में वृद्धि (increase in demand)*** कहा जाता है। कोई भी परिवर्तन जो प्रत्येक कीमत पर मांग की मात्रा को कम करता है, मांग वक्र को बाईं ओर स्थानांतरित कर देता है और इसे ***मांग में कमी (decrease in demand)*** कहा जाता है।

1. **मांग में वृद्धि (Increase in Demand):** जब किसी वस्तु का मूल्य नहीं बदले लेकिन किन्हीं दुसरे तत्वों में बदलाव आने की वजह से उसकी मांग बढ़ जाए तो उसे मांग में वृद्धि होना बोलते हैं। जब मांग में वृद्धि होती है तो मांग वक्र दायीं ओर खिसक जाता है। जैसा की आप ऊपर दिए गए चित्र 3.3 में देख सकते हैं यहाँ वस्तु (आइसक्रीम) का मूल्य समान है लेकिन किन्हीं अन्य तत्वों में बदलाव आने की वजाह से (जैसे कि हमारे काल्पनिक उदाहरण में अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन द्वारा की गई खोज) इसकी मांग 7 इकाइयों से बढ़ कर 12 इकाई हो गयी है। इसके साथ ही मांग वक्र DD से थोडा खिसक कर D1D1 पर आ गया है। मांग में वृद्धि होने का वक्र पर यह असर होता है।

चित्र 3.3

कारण:

- उपभोक्ता की आय में वृद्धि होना
- पूरक वस्तु के मूल्य में गिरावट
- वैकल्पिक वस्तु का मूल्य बढ़ना
- भविष्य में कीमत बढ़ने की आस होना

2. मांग में कमी आना (Decrease in Demand):

जब किसी वस्तु के स्वयं के मूल्य में परिवर्तन ना आये लेकिन अन्य घटकों में परिवर्तन आने की वजह से मांग में कमी आ जाए तो सी परिवर्तन को मांग में कमी आना बोलते हैं। इसमें वस्तु के मूल्य पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है लेकिन इसकी मांग कम हो जाती है। ऐसा होने पर वक्र बायीं और खिसक जाता है।

ऊपर दिए गए उदाहरण में जैसा की आप देख सकते हैं यहाँ एक वस्तु के मूल्य में कोई परिवर्तन नहीं हो रहा है लेकिन किन्हीं अन्य घटकों में परिवर्तन होने की वजह से इसकी मांग में कमी आ रही है। ऐसा होने से मांग वक्र खिसक कर D से D2 तक आ जाता है। अतः मांग में कमी आने का वक्र में यह प्रभाव पड़ता है।

चित्र 3.4

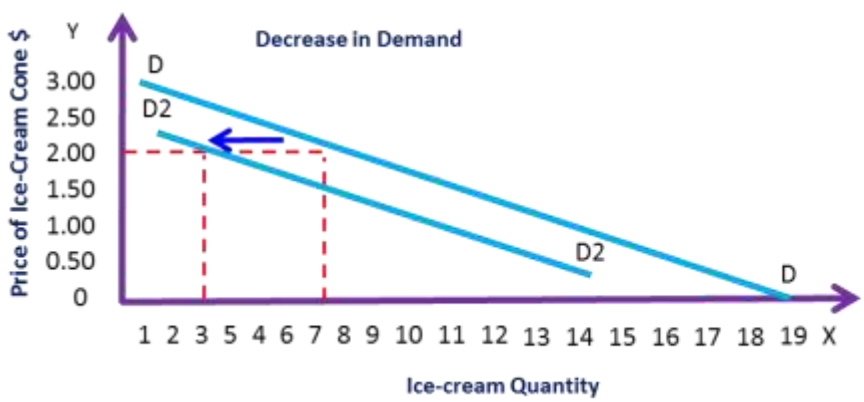

कारण:

- उपभोक्ता की आय में कमी होना
- पूरक वस्तु के मूल्य में बढ़ोत्तरी
- वैकल्पिक वस्तु के मूल्य में गिरावट
- भविष्य में कीमत कम होने की आस होना

ऐसे कई कारक (factors) हो सकते हैं जो मांग वक्र को स्थानांतरित कर सकते हैं। यहाँ सबसे महत्वपूर्ण हैं:

आय: यदि आप एक गर्मियों में अपनी नौकरी खो देते हैं तो आइसक्रीम की आपकी मांग का क्या होगा? सबसे अधिक संभावना है, यह गिर (घट) जाएगी। कम आय का मतलब है कि आपके पास कुल खर्च करने के लिए कम

पैसे है, और इसलिए आपको शायद कुछ दूसरी वस्तुओं पर भी खर्च करना होगा। यदि आय में गिरावट आने पर किसी वस्तु की मांग गिरती है, तो उस वस्तु को **सामान्य वस्तु** (Normal Goods) कहा जाता है। कोई वस्तु सामान्य वस्तु है कि नहीं इसका पता उपभोक्ता के लिए वस्तु की मांग एवं उपभोक्ता की आय संबंध के आधार पर पता लगा सकते हैं। सामान्यय वस्तु की मांग उपभोक्ता की आय बढने पर बढ़ती है तथा आय घटने पर मांग भी घटती है । अर्थात **आय एवं मांग में सीधा संबंध होता है सामान्य वस्तु कहलाती हैं**। सभी वस्तुएं सामान्य सामान नहीं होते हैं। यदि आय में गिरावट आने पर किसी वस्तु की मांग बढ़ जाती है, तो उस वस्तु को **घटिया वस्तु (Inferior Goods)** कहा जाता है। घटिया वस्तु का एक उदाहरण बस की सवारी हो सकती है। जैसे-जैसे आपकी आय गिरती है, आपके कार खरीदने या कैब लेने की संभावना कम होती है और बस की सवारी करने की संभावना अधिक होती है। घटिया वस्तुएँ उन वस्तुओं को कहते हैं जिनकी माँग क्रेता/ उपभोक्ता की आय के बढ़ने पर घटती है। अत: **आय और मांग में ऋणात्मक संबंध पाया जाता है**।

संबंधित वस्तुओं की कीमतें: मान लीजिए कि रसमलाई की कीमत गिरती है। मांग का नियम कहता है कि आप अधिक रसमलाई खरीदेंगे। वहीं, आप शायद कम आइसक्रीम खरीदेंगे। चूंकि आइसक्रीम और रसमलाई दोनों ठंडे, मीठे, मलाईदार मिठाई हैं, वे समान इच्छाओं को पूरा करते हैं। जब एक वस्तु की कीमत में गिरावट से दूसरी वस्तु की मांग कम हो जाती है, तो दो वस्तुओं को **स्थानापन्न वस्तुएँ (Substitute Goods/Competitive Goods)** कहा जाता है। स्थानापन्न वस्तुएँ अक्सर उन वस्तुओं के जोड़े होते हैं जो एक दूसरे के स्थान पर उपयोग किए जाते हैं, जैसे हॉट डॉग और हैमबर्गर, स्वेटर और स्वेटशर्ट, और मूवी टिकट और डीवीडी किराए पर लेना इत्यादि।

अब मान लीजिए कि हॉट फज (एक गर्म, गाढ़ी, चॉकलेट सॉस जिसे आमतौर पर आइसक्रीम पर परोसा जाता है) की कीमत गिरती है। मांग के नियम के अनुसार, आप अधिक हॉट फज खरीदेंगे। फिर भी इस मामले में, आप संभवतः अधिक आइसक्रीम भी खरीदेंगे क्योंकि आइसक्रीम और हॉट फज अक्सर एक साथ उपयोग किया जाता है। जब एक वस्तु की कीमत में गिरावट से दूसरी वस्तु की माँग बढ़ जाती है, तो **दोनों वस्तुएँ पूरक (complements/ complementary goods)** कहलाती हैं। पूरक अक्सर वस्तुओं के जोड़े होते हैं जो एक साथ उपयोग किए जाते हैं, जैसे गैसोलीन और ऑटोमोबाइल, कंप्यूटर और सॉफ्टवेयर, और मूंगफली का मक्खन और जेली इत्यादि। पूरक वस्तुएँ वे होती हैं जिनका प्रयोग किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए साथ-साथ किया जाता है। **इनमें एक वस्तु की माँग तथा दूसरी वस्तु की कीमत में ऋणात्मक संबंध होता है** अर्थात् एक वस्तु की कीमत में वृद्धि होने पर दूसरी वस्तु की माँग कम हो जाती है अथवा विपरीत। उदाहरण के लिए: चाय और चीनी, जूते तथा जुराबे, पेन और स्याही।

स्वाद: आपकी मांग का सबसे स्पष्ट निर्धारिक आपका स्वाद है। यदि आप आइसक्रीम पसंद करते हैं, तो आप इसे और अधिक खरीदते हैं। अर्थशास्त्री आम तौर पर लोगों के स्वाद को समझाने की कोशिश नहीं करते हैं क्योंकि स्वाद ऐतिहासिक और मनोवैज्ञानिक शक्तियों/तत्व पर आधारित होते हैं जो अर्थशास्त्र के दायरे से परे होते हैं। हालांकि, अर्थशास्त्री इस बात की जांच करते हैं कि जब स्वाद बदलता है तो क्या होता है।

अपेक्षाएं: भविष्य के बारे में आपकी अपेक्षाएं आज किसी वस्तु या सेवा की आपकी मांग को प्रभावित कर सकती हैं। यदि आप अगले महीने अधिक आय अर्जित करने की उम्मीद करते हैं, तो आप अभी कम बचत करना और आइसक्रीम खरीदने के लिए अपनी वर्तमान आय का अधिक खर्च करना चुन सकते हैं। यदि आप उम्मीद करते हैं कि कल आइसक्रीम की कीमत गिर जाएगी, तो आप आज की कीमत पर आइसक्रीम कोन खरीदने के लिए कम इच्छुक हो सकते हैं।

खरीदारों की संख्या: पूर्ववर्ती कारकों के अलावा, जो व्यक्तिगत खरीदारों के व्यवहार को प्रभावित करते हैं, बाजार की मांग इन खरीदारों की संख्या पर निर्भर करती है। यदि पीटर, कैथरीन और निकोलस के साथ आइसक्रीम के एक अन्य उपभोक्ता के रूप में शामिल हो जाता है, तो बाजार में मांग की गई मात्रा हर कीमत पर अधिक होगी, और बाजार की मांग बढ़ेगी।

सारांश: मांग वक्र दर्शाता है कि किसी वस्तु की मांग की गई मात्रा का क्या होता है जब उसकी कीमत बदलती है, अन्य सभी चर स्थिर रखते हैं जो खरीदारों को प्रभावित करते हैं। जब इनमें से एक अन्य चर बदलता है, तो मांग वक्र बदल जाता है। तालिका 1 उन चरों को सूचीबद्ध करती है जो प्रभावित करते हैं कि एक अच्छा उपभोक्ता कितना खरीदना चाहता है

3.4 पूर्ती (Supply)

अब हम बाजार के दूसरे पहलू की ओर रुख करते हैं जिसमें हम विक्रेताओं के व्यवहार का विश्लेषण करेंगे।

किसी वस्तु की पूर्ती से अभिप्राय, वस्तु की उस मात्रा से होता है, जिसे एक विक्रेता किसी निश्चित समय में, एक निश्चित क़ीमत पर बाज़ार में बिक्री करने के लिए तैयार होता है। अन्य शब्दों में कहा जाए तो, पूर्ति का आशय एक ऐसी अनुसूची या तालिका होता है, जिसमें वस्तु की उन मात्राओं को दर्शाया जाता है, जिन्हें कोई उत्पादक, वस्तु की विभिन्न क़ीमतों पर किसी निश्चित समय पर बिक्री करने हेतु तैयार रहता है।

3.4.1 पूर्ति क्या है? (What is Supply?)

अर्थशास्त्र में पूर्ति शब्द का अर्थ किसी वस्तु की उस मात्रा से होता है जिसे कोई विक्रेता, एक निश्चित समय और एक निश्चित कीमत पर बाज़ार में बेचने के लिए तैयार हो जाता है। जिस प्रकार मांग का संबंध हमेशा ही एक निश्चित समय तथा एक निश्चित कीमत से होता है। ठीक उसी प्रकार पूर्ति का संबंध भी सदैव एक निश्चित समय तथा निश्चित कीमत से होता है। किसी वस्तु की पूर्ति को हम इस उदाहरण से समझने का प्रयास करते हैं। उदाहरण के लिए मान लीजिए कि पूर्ति के संबंध में यह कहा जाए कि गेहूं की पूर्ति 2000 क्विंटल है। तो यह कहना सरासर ग़लत होगा। क्योंकि इसमें गेहूं की कीमत और निश्चित समय का कोई उल्लेख नहीं किया गया है। बल्कि उदाहरण के तौर पर, पूर्ति के संबंध में यह कहना उचित और सत्य होगा कि ₹ 300 प्रति क्विंटल पर आज बाज़ार में गेहूं की पूर्ति 2000 क्विंटल है।

पूर्ति की परिभाषाएं (Definitions of Suppply)

अर्थशास्त्र में पूर्ति से तात्पर्य है किसी वस्तु की उस मात्रा से है जो किसी उत्पादक या विक्रेता द्वारा, निश्चित समय पर, किसी विशेष मूल्य पर बाज़ार में बिक्री के लिए उपलब्ध की जाती है। आइए पूर्ति की कुछ परिभाषाएं जानते हैं।

प्रो. बेन्हम के अनुसार - "पूर्ति का आशय वस्तु की उस मात्रा से होता है, जिसे उत्पादक या विक्रेता, प्रति इकाई समय में बेचने लिए बाज़ार में प्रस्तुत करता है।"

प्रो. अनातोल मुराद के अनुसार - "किसी वस्तु की पूर्ति का आशय, वस्तु की उस मात्रा से है, जिसे कोई विक्रेता या उत्पादक, किसी नियत मूल्य पर, किसी बाज़ार में, एक निश्चित समय पर बेचने को तैयार रहता है।"

साधारण बोलचाल की भाषा में हम पूर्ति तथा स्टॉक को एक जैसा ही समझते हैं। किन्तु आर्थिक विश्लेषण की दृष्टि से देखा जाए तो ये दोनों ही अलग-अलग हैं। दरअसल स्टॉक किसी वस्तु की उस समस्त उपलब्ध मात्रा को कहते हैं जो

किसी उत्पादक के पास होती है। ठीक इससे अलग पूर्ति उस स्टॉक में से एक निश्चित समय तथा निश्चित क़ीमत पर बिक्री हेतु, प्रस्तुत की गई मात्रा होती है।

पूर्ति के आवश्यक तत्व (Enssential Elements of Supply)

किसी भी वस्तु की पूर्ति की अवधारणा को समझने के लिए उस वस्तु की पूर्ति के आवश्यक तत्व महत्वपूर्ण होते हैं जो कि निम्न हैं -

1. **वस्तु की मात्रा** - किसी वस्तु की पूर्ति तब कहलाती है जब कोई उत्पादक अपने पास उपलब्ध किसी वस्तु के स्टॉक में से उस वस्तु की एक निश्चित मात्रा को बाज़ार में बेचने के लिए तैयार हो जाए।

2. **वस्तु की क़ीमत -** किसी वस्तु की पूर्ति सुनिश्चित करने के लिए उस वस्तु की एक निश्चित क़ीमत का होना भी अत्यंत आवश्यक होता है। कोई उत्पादक, जिस पर वस्तु की निश्चित मात्रा को बेचने के लिए तैयार हो जाए।

3. **निश्चित समय अंतराल -** किसी भी वस्तु की पूर्ति के लिए एक निश्चित समय अंतराल का होना भी उतना ही आवश्यक होता है जितना कि वस्तु की क़ीमत और मात्रा का होना माना जाता है।

3.4.2 पूर्ति के प्रकार (Types of Supply)

किसी वस्तु की पूर्ति के प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं –

3.4.2.1 व्यक्तिगत पूर्ति

व्यक्तिगत पूर्ति अथवा व्यक्तिगत पूर्ति की तालिका उसे कहते हैं जब किसी निश्चित समय पर किसी बाजार में एक विक्रेता के द्वारा किसी वस्तु की भिन्न-भिन्न मात्राएं भिन्न भिन्न कीमतों पर बेची जाती है तो उसे हम व्यक्तिगत पूर्ति अथवा व्यक्तिगत पूर्ति तालिका कह सकते है। इस प्रकार व्यक्तिगत पूर्ति तालिका किसी विक्रेता के अनुमानित कीमतों और उन कीमतों पर पूर्ति की जाने वाली मात्राओं के आधार पर बनायी जाती है। अपने आइसक्रीम के उदाहरण को जारी रखते हुए हम इसे समझने का प्रयास करेंगे। किसी वस्तु की पूर्ति को निर्धारित करने वाले बहुत से तत्व होते हैं परंतु इस विश्लेषण में कीमत फिर से विशेष भूमिका निभाती है। जब आइसक्रीम की कीमत अधिक होती है तो आइसक्रीम बेचना लाभदायक होता है और इस प्रकार अधिक लाभ कमाने के लिए आइसक्रीम की अधिक आपूर्ति की जाएगी। आइसक्रीम की अधिक पूर्ति करने के लिए आइसक्रीम विक्रेता अधिक समय तक कार्य करेगा, नई मशीनें लगाएगा, नए मजदूरों को काम पर लगाएगा। इसके विपरीत जब आइसक्रीम की कीमत कम होती है तो आइसक्रीम बेचना कम लाभदायक होता है। और इस प्रकार आइसक्रीम का विक्रेता या उत्पादक कम आइसक्रीम का उत्पादन करेगा और आइसक्रीम की आपूर्ति कम हो जाएगी। कम कीमत पर हो सकता है कि कुछ उत्पादक आइसक्रीम की आपूर्ति करना ही बंद कर दें अर्थात आइसक्रीम की पूर्ति गिरकर शून्य हो जाए।

तालिका 3.3 आइसक्रीम के विभिन्न मूल्यों पर एक आइसक्रीम विक्रेता बेन द्वारा हर महीने पूर्ति किए जाने वाले आइसक्रीम कोन (Cones) की मात्रा को दर्शाती है। $1.00 से कम कीमत पर, बेन आइसक्रीम की पूर्ति बिल्कुल नहीं करता है। जैसे ही कीमत बढ़ती है, वह अधिक से अधिक मात्रा में आपूर्ति करता है। यह **पूर्ति अनुसूची** है, एक **तालिका** जो अन्य बातें समान रहने पर एक वस्तु की कीमत और पूर्ति की गई मात्रा के बीच संबंध को दर्शाती है। कीमत और पूर्ति की मात्रा से संबंधित वक्र को **पूर्ति वक्र** कहा जाता है। पूर्ति वक्र ऊपर की ओर ढलान वाला होता है, क्योंकि अन्य बातें समान होने पर, एक उच्च कीमत का मतलब अधिक मात्रा में पूर्ति की जाती है।

तालिका 3.3

Ben's Supply Schedule

Price of Ice-Cream Cone $	Quantity of Cones Supplied By Ben
$ 0.00	0
$ 0.50	0
$ 1.00	1
$ 1.50	2
$ 2.00	3
$ 2.50	4
$ 3.00	5

चित्र 3.5

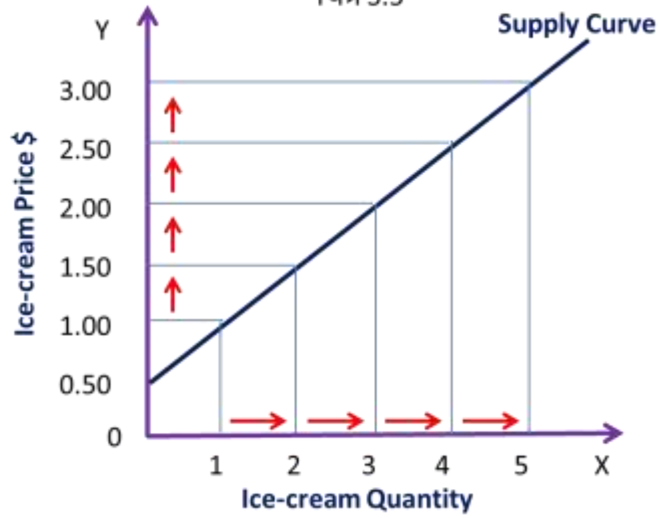

3.4.2.2 बाज़ार पूर्ति (Market Supply)

बाजार पूर्ति अथवा बाजार पूर्ति की तालिका उसे कहते हैं जब एक बाजार में बहुत से विक्रेता होते हैं जो विभिन्न कीमतों पर वस्तु को बेचने के लिए तैयार रहते है यदि इन सब विक्रेताओं की पूर्ति को जोड़ दिया जाये तो एक बाजार की पूर्ति तालिका बन जायेगी। ऊपर हमने देखा की व्यक्तिगत तालिका में केवल एक व्यक्ति द्वारा बेचीं जाने वाली वस्तुओं की सूचि थी लेकिन बाज़ार पूर्ति तालिका में बाज़ार के सभी विक्रेता विभिन्न मूल्यों पर जो यह वस्तु बेच रहे हैं उनकी मात्राओं का योग होगा एवं उसके बाद जो संख्या आएगी वह बाज़ार पूर्ति होगी एवं विभिन्न संख्याओं की सूचि से ही बाज़ार पूर्ति तालिका बनती है।

तालिका 3.4

Market Supply Schedule

Price of Ice-Cream Cone $	Quantity of Cones Supplied By Ben	Quantity of Cones Supplied By Jerry	Market Supply of Cones (Ben's + Jerry')
$ 0.00	0 +	0 =	0
$ 0.50	0 +	0 =	0
$ 1.00	1 +	0 =	1
$ 1.50	2 +	2 =	4
$ 2.00	3 +	4 =	7
$ 2.50	4 +	6 =	10
$ 3.00	5 +	8 =	13

ऊपर दी गयी तालिका 3.4 में जैसा की आप देख सकते हैं यहाँ हमने माना है की बाज़ार में केवल 2 ही विक्रेता (बेन और जैरी) हैं। विभिन्न मूल्यों पर ये जो आइसक्रीम की मात्र बेचने को तैयार हैं हमने उनका योग किया है जिससे कि हमारे पास बाज़ार में आइसक्रीम की बिक्री के लिए कुल उपलब्धता आ गयी। इस तरह यह **तालिका बाज़ार पूर्ति** को दर्शाती है।

चित्र 3.6

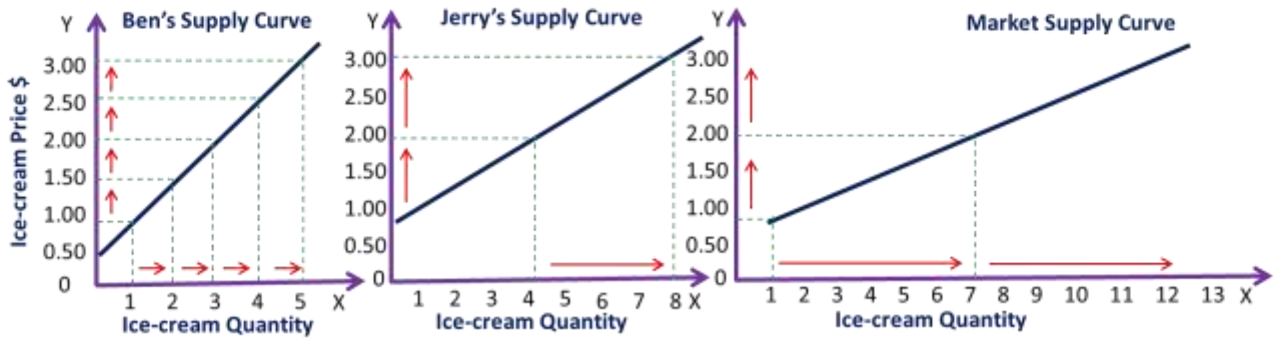

किसी कीमत पर, बेन की पूर्ति अनुसूची हमें बताती है कि बेन कितनी आइसक्रीम की आपूर्ति करता है, और जैरी की पूर्ति अनुसूची हमें बताती है कि जैरी द्वारा कितनी आइसक्रीम की आपूर्ति की जाती है। **बाजार पूर्ति** दो अलग-अलग आपूर्ति (बेन और जैरी द्वारा की गई आपूर्तियों) का योग है। चित्र 3.6 आपूर्ति वक्रों को दर्शाता है जो आपूर्ति अनुसूचियों के अनुरूप हैं। मांग वक्रों की तरह, हम बाजार आपूर्ति वक्र प्राप्त करने के लिए व्यक्तिगत आपूर्ति वक्रों को क्षैतिज रूप से जोड़ते हैं। अर्थात्, किसी भी कीमत पर आपूर्ति की गई कुल मात्रा का पता लगाने के लिए, हम अलग-अलग मात्राएँ जोड़ते हैं, जो व्यक्तिगत आपूर्ति वक्रों के क्षैतिज अक्ष पर पाई जाती हैं। बाजार आपूर्ति वक्र दर्शाता है कि आपूर्ति की गई कुल मात्रा कैसे भिन्न होती है क्योंकि वस्तु की कीमत भिन्न होती है, कीमत से परे अन्य सभी कारकों को स्थिर रखता है जो उत्पादकों के निर्णयों को प्रभावित करते हैं कि कितना बेचना है।

3.4.3 पूर्ति का नियम (Law of Supply)

पूर्ति का नियम माँग के नियम के विपरीत है। जैसे कि माँग के नियम में कीमत बढने से माँग घटती है और कीमत घटने पर माँग बढ़ती है। यह माँग और कीमत के बीच ऋणात्मक संबंध को व्यक्त करती है, जबकि **पूर्ति के नियम में कीमत और पूर्ति का धनात्मक संबंध** होता है। जब कभी किसी वस्तु की कीमत में वृद्धि होती है, तब उस वस्तु की पूर्ति को बढाया जाता है और कीमत में कमी होने पर उसकी पूर्ति को घटा दिया जाता है। दूसरे शब्दों में अन्य बातें समान रहने पर किसी वस्तु की पूर्ति के बढ़ने की प्रवृत्ति तब होती है जब उस वस्तु की कीमत में वृद्धि होती है और पूर्ति में कमी तब होती है, जब वस्तु की कीमत में कमी आती है। इस प्रकार, कीमत आरै पूर्ति के बीच सीधा संबंध है।

वाटसन के अनुसार-"पूर्ति का नियम बताता है कि अन्य बातों के समान रहने पर एक वस्तु की पूर्ति, इनकी कीमत बढने से बढ़ जाती है और कीमत के घटने से घट जाती है।" पूर्ति का नियम, माँग के नियम की भाँति एक 'गुणात्मक कथन' है न कि 'परिमाणात्मक कथन' अर्थात् यह नियम पूर्ति तथा कीमत के बीच किसी प्रकार का गणितात्मक सबंधं स्थापित नहीं करता, बल्कि केवल पूर्ति की मात्रा में होने वाले परिवर्तनों की दिशा की ओर संकेत करता है जैसा कि उपरोक्त तालिका एवं रेखाचित्र से स्पष्ट होता है

3.4.3.1 पूर्ति वक्र में परिवर्तन (Change in Supply Curve)

क्योंकि बाजार पूर्ति वक्र अन्य बातों को स्थिर रखते हुए खींचा जाता है, जब इनमें से कोई कारक बदलता है, तो पूर्ति वक्र बदल जाता है। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि चीनी की कीमत गिरती है। चीनी, आइसक्रीम के उत्पादन में एक कच्चा माल (input) है, इसलिए चीनी की कीमत में गिरावट से आइसक्रीम की बिक्री अधिक लाभदायक हो

जाती है। यह आइसक्रीम की आपूर्ति बढ़ाता है: किसी भी कीमत पर, विक्रेता अब पहले से अधिक मात्रा में उत्पादन करने को तैयार हैं। आइसक्रीम के लिए आपूर्ति वक्र दाईं ओर सरक जाता है।ठीक इसी प्रकार मान लीजिए कि चीनी की कीमत बढ़ जाती है। जिसकी वजह से आइसक्रीम के उत्पादन की लागत भी बढ़ जाएगी। लागत बढ़ जाने के कारण आइसक्रीम पर प्राप्त होने वाले लाभ में कमी आएगी। जिसकी वजह से उत्पादक कीमत के स्थिर रहने पर उसी कीमत पर पहले से कम आइसक्रीम बिक्री के लिए उपलब्ध करा पाएगा।

मुख्यतः पूर्ति वक्र में 4 तरह के परिवर्तन होते हैं :

1. पूर्ति का संकुचन
2. पूर्ति का विस्तार
3. पूर्ति में वृद्धि
4. पूर्ति में कमी

इन चार परिवर्तनों में से पहले दो परिवर्तन वस्तु के स्वयं के मूल्य में परिवर्तन की वजह से आते हैं। बाकी दो परिवर्तन अन्य घटकों की वजह से होते हैं। अन्य सभी घटकों के बारे में जानकारी नीचे दी गयी है।

1. पूर्ति का संकुचन (Contraction of Supply):

यह उस स्थिति में होता है जब अन्य सभी घटक अपरिवर्तित हों लेकिन मुख्य वस्तु (आइसक्रीम) की कीमत कम हो जाए एवं इससे उस कीमत पर बेचने के लिए उपलब्ध मात्र में कमी आ जाती है। इसे संकुचन कहते हैं। इसमें वक्र अपनी जगह पर ही रहता है लेकिन वर्तमान पूर्ति उसी वक्र पर एक बिंदु से दूसरे बिंदु पर चली जाती है। ऊपर चित्र 3.7 में आप देख सकते हैं पूर्ति का संकुचन हुआ एवं अब वर्तमान में पूर्ती A बिंदु से हटकर B बिंदु पर आ गयी है।

चित्र 3.7

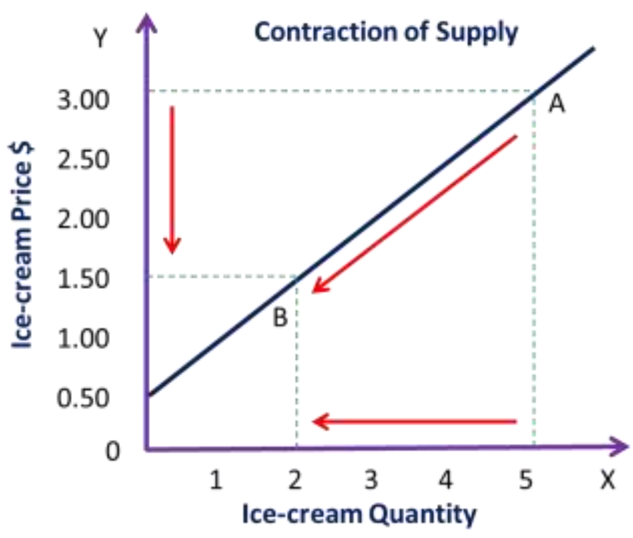

2. पूर्ति का विस्तार (Expansion of Supply):

उस स्थिति को विस्तार कहते हैं जब वस्तु (आइसक्रीम) की पूर्ति के अन्य घटकों में कोई बदलाव ना आये लेकिन उस वस्तु (आइसक्रीम) के स्वयं के मूल्य में बढ़ोतरी होने से उसकी बिक्री की मात्र की उपलब्धता भी बढ़ जाती है। इसमें

वक्र अपनी जगह नहीं बदलता लेकिन पूर्ति के वर्तमान जगह बदल जाती है एवं वह दायीं ओर A बिंदु से हटकर B बिंदु पर चली जाती है। चित्र 3.8 में जैसा आप देख सकते है आइसक्रीम के मूल्य में बढ़ोतरी हुई जिससे पूर्ति में बढ़ोतरी हुई एवं पूर्ति दायीं और चली गयी है।

चित्र 3.8

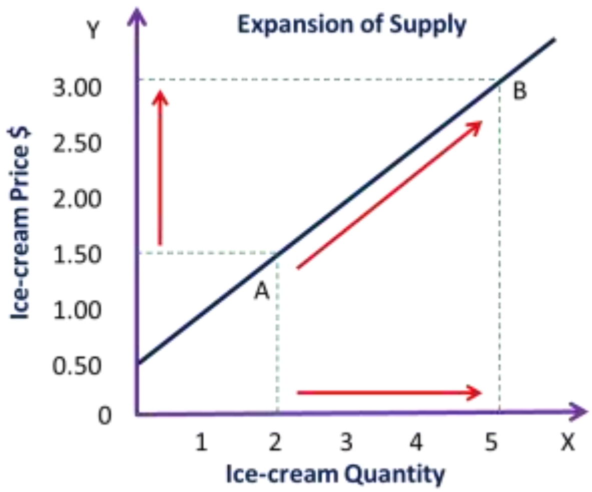

3. पूर्ति में वृद्धि (Increase in Supply):

जब वस्तु का स्वयं का मूल्य अपरिवर्तित रहे लेकिन किन्हीं अन्य घटकों में परिवर्तन आने की वजह से (जैसे चीनी की कीमतों में गिरावट की वजह से) पूर्ति की मात्र बदल जाए उसे **पूर्ति में वृद्धि** कहते हैं। इसमें पूर्ति वक्र की जगह बदल जाती है एवं वह दायीं और खिसक जाता है। चित्र 3.9 में जैसा आप देख सकते हैं यहाँ वस्तु (आइसक्रीम) के मूल्य में कोई बदलाव नहीं हुआ है लेकिन अन्य घटकों में हुए कुछ बदलावों की वजह से (जैसे चीनी की कीमतों में गिरावट की वजह से) पूर्ति में बढ़ोतरी हुई है। इससे वक्र दायीं और चला गया है।

चित्र 3.9

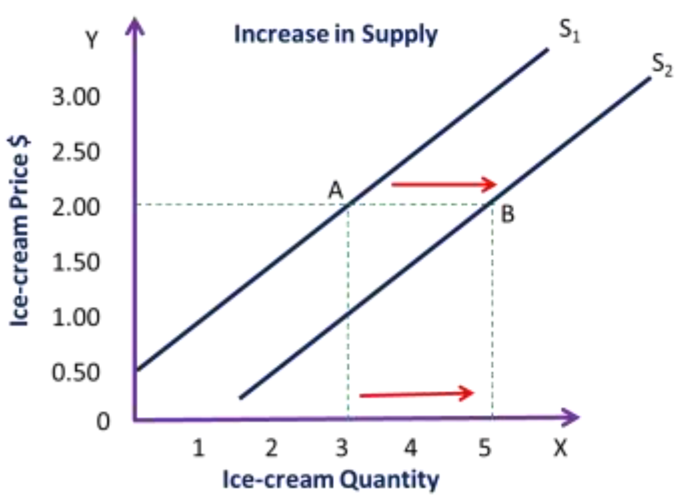

पूर्ति में वृद्धि के प्रमुख कारण हो सकते हैं-

1. तकनीकी प्रगति,
2. सम्बन्धित वस्तुओं की कीमत में कमी,
3. उत्पादन के साधनों की कीमतों में कमी,
4. फर्म के उद्देश्य में परिवर्तन ,
5. उत्पादकों की संख्या में वृद्धि,
6. भविष्य में कीमत के कम होने की सम्भावना,
7. अप्रत्यक्ष करों में कमी तथा अनुदानों में वृद्धि।

4. पूर्ति में कमी (Decrease in Supply):

जब वस्तु (आइसक्रीम) का स्वयं का मूल्य अपरिवर्तित रहे लेकिन उसके कुछ अन्य घटकों में बदलाव आने की वजह से (जैसे चीनी की कीमतों में बढ़ोतरी की वजह से) इसकी पूर्ति के लिए उपलब्ध मात्र में कमी आ जाए ऐसी स्थिति को **पूर्ति में कमी** आना कहते हैं। इसकी वजह से पूर्ति वक्र बायीं और खिसक जाता है। चित्र 3.10 में जैसा की आप देख सकते हैं यहाँ वस्तु (आइसक्रीम) के मूल्य में कोई परिवर्तन नहीं आया है लेकिन इस वस्तु (आइसक्रीम) के किन्हीं अन्यः घटकों में परिवर्तन आने की वजह से (जैसे चीनी की कीमतों में बढ़ोतरी की वजह से) इसकी पूर्ति में कमी आगयी है जिससे वक्र बायीं और खिसक गया है।

चित्र 3.10

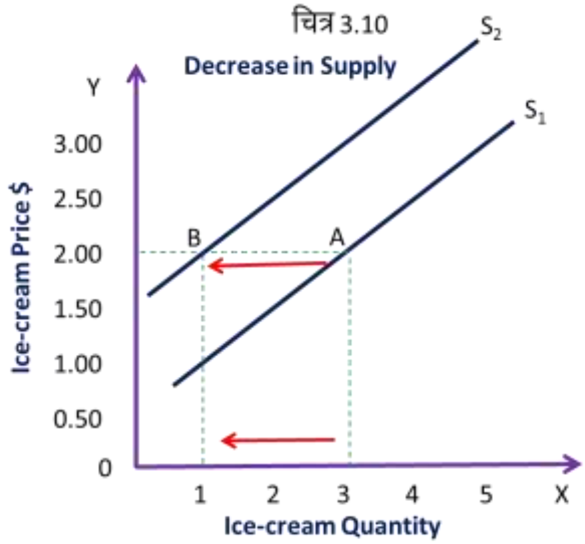

पूर्ति में कमी के प्रमुख कारण हो सकते हैं-

1. सम्बन्धित वस्तुओं की कीमत में वृद्धि,
2. उत्पादन के साधनों की कीमतों में वृद्धि,
3. फर्म के उद्द्शेय में परिवतर्न अर्थात् बिक्री को अधिकतम करने के बजाय लाभ को अधिकतम करना,
4. उत्पादन तकनीकी का पुराना पड़ जाना,

5. भविष्य में कीमत के वृद्धि की सम्भावना,
6. उत्पादकों की संख्या में कमी,
7. कर की दरों में वृद्धि तथा अनुदानों में कमी।

3.4.3.2 पूर्ति के नियम के अपवाद (Exceptions of Law of Supply):

कुछ ऐसी स्थिति होती हैं जब वस्तुओं पर यह नियम लागू नहीं होता है या कुछ वस्तु पूर्ति के नियम का पालन नहीं करती हैं आइये जानते हैं वे कौनसी वस्तुएं हैं:

1. कृषि की वस्तुएं: कृषि की वस्तुओं की उपलब्धता में पूर्ति के नियम का पालन नहीं होता है। इनका मूल्य यदि बढ़ भी जाए एवं यदि मौसम की वजह से फसल खराब हो जाए तो विक्रेता चाहकर भी इनकी मात्र नहीं बढ़ा सकता है।

2. भविष्य की संभावना: यदि विक्रेता को लग रहा है की भविष्य में इस वस्तु का मूल्य कम हो जाएगा तो वह अभी इसकी मात्र को बढ़ा देगा लेकिन यदि इस वस्तु का मूल्य का बढना संभावित है तो वह अभी कम मात्र् बेचेगा।

3. दुर्लभ वस्तुएं: कुछ ऐसी वस्तुएं होती हैं जो प्रकृति में बहुत मुश्किल से पायी जाती हैं एवं बहुत कम मात्र में होती है इसलिए विक्रेता चाहकर भी इनकी मात्र को बढ़ा नहीं सकता है।

पूर्ति के कुछ अन्य प्रकार निम्नलिखित है:

(3) अल्पकालीन पूर्ति (Short Run Supply) -

किसी भी वस्तु की अल्पकालीन पूर्ति वह पूर्ति होती है जिसे उत्पादक या विक्रेता अपने स्टॉक में विद्यमान वस्तु की मात्रा में ही वृद्धि कर सकता है। उसके पास इतना समय नहीं होता कि पूर्ति बढ़ाने के लिए उत्पत्ति के साधनों में वृद्धि कर सके।

(4) दीर्घकालीन पूर्ति (Long Run Supply) -

दीर्घकालीन पूर्ति किसी वस्तु की वह पूर्ति होती है जिसमें उत्पादक मांग के अनुसार बढ़ा सकता है। उसके पास इतना पर्याप्त समय होता है कि वह अपने पुराने साधनों में वृद्धि करने के साथ-साथ उत्पत्ति के नए साधनों का प्रयोग भी कर सकता है।

(5) संयुक्त पूर्ति (Joint Supply) -

उत्पादक जब किसी वस्तु की पूर्ति के साथ कोई अन्य वस्तु भी शामिल करता है। तो पूर्ति को संयुक्त पूर्ति कहा जाता है। जैसे- गेहूं के साथ भूसा, शक्कर के साथ शीरा, मांस के साथ चमड़ा।

(6) सामूहिक पूर्ति (Collective Supply) -

ऐसी पूर्ति जो कई स्रोतों से की जा सकती है, उसे सामूहिक पूर्ति कहा जाता है। जैसे प्रकाश की पूर्ति विद्युत, लालटेन, मोमबत्ती, लैंप आदि से की जा सकती है।

3.4.3.3 पूर्ति को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affecting Supply)

वस्तु की पूर्ति को प्रभावित करने वाले कारक निम्न हैं -

(1) वस्तु की क़ीमत -

वस्तु की क़ीमत का वस्तु की पूर्ति पर अधिक प्रभाव पड़ता है। यदि अन्य बातें स्थिर हों तो वस्तु की ऊंची क़ीमत होने पर वस्तु की पूर्ति अधिक होती है। क्योंकि विक्रेता भी ऊंची क़ीमत पर वस्तु को बेचना ज़्यादा पसंद करता है। इसके विपरीत क़ीमत नीची होने पर पूर्ति भी कम हो जाती है।

(2) संबंधित वस्तुओं की क़ीमत -

वस्तु की पूर्ति पर संबंधित वस्तुओं की क़ीमत का भी प्रभाव पड़ता है। यदि किसी वस्तु की स्थानापन्न वस्तुओं का मूल्य बढ़ जाए तो उत्पादक इस वस्तु की पूर्ति कम कर, उसके स्थानापन्न वस्तु का उत्पादन व बिक्री करना चाहेंगे। फलस्वरूप वे स्थानापन्न वस्तु की पूर्ति बढ़ाना चाहेंगे। इसी प्रकार यदि किसी वस्तु की स्थानापन्न वस्तुओं का मूल्य कम हो जाए तो उत्पादक स्थानापन्न वस्तुओं के बजाय इस वस्तु की पूर्ति बढ़ाना चाहेंगे।

(3) उत्पत्ति के साधनों की क़ीमत -

उत्पादन के साधनों की क़ीमतों में परिवर्तन हो जाने पर भी वस्तु की पूर्ति (Supply) में महत्वपूर्ण परिवर्तन होता है। उत्पत्ति के साधनों की क़ीमत बढ़ने से उस वस्तु की उत्पादन लागत बढ़ जाती है। जिससे उत्पादकों को लाभ कम होता है। इसलिए उत्पादक उस वस्तु का उत्पादन कम करते हैं जिस कारण उस वस्तु की पूर्ति घट जाती है। इसके विपरीत उत्पत्ति के साधनों की क़ीमत घट जाने से उत्पादन लागत कम हो जाती है। जिस कारण उत्पादन भी बढ़ जाता है और पूर्ति भी बढ़ जाती है।

(4) तकनीकी ज्ञान -

तकनीकी ज्ञान में वृद्धि होने पर वस्तु के उत्पादन में वृद्धि होती है और वस्तु की पूर्ति भी बढ़ जाती है। क्योंकि तकनीकी विकास से उत्पादन में सुधार होता है और उत्पादन लागत भी कम हो जाती है। इसके विपरीत परिस्थितियों में वस्तु की पूर्ति घट जाती है।

(5) प्राकृतिक तत्व -

जिन वस्तुओं के उत्पादन में प्राकृतिक साधनों या परिस्थितियों का प्रभाव ज़्यादा होता है। उन वस्तुओं की पूर्ति भी प्राकृतिक तत्वों के कारण परिवर्तित हो जाती है। जैसे- समय पर पर्याप्त वर्षा, सिंचाई के साधन आदि मिल जाएं तो उस अनाज का उत्पादन भी बढ़ जाता है। अर्थात पूर्ति भी बढ़ जाती है। इसके विपरीत यदि सूखा, बाढ़, अतिवृष्टि, बीमारी आदि हो जाए तो वस्तु का उत्पादन घट जाता है। अर्थात वस्तु की पूर्ति भी घट जाती है।

(6) उत्पादकों की रुचि -

कभी-कभी वस्तु के उत्पादन पर उत्पादकों की विशेष रुचि का भी प्रभाव पड़ता है। क्योंकि उत्पादक जिस वस्तु में रुचि हो उस वस्तु के उत्पादन को वरीयता देता है। फलस्वरूप उस वस्तु की पूर्ति भी बढ़ जाती है। इसके विपरीत

यदि उस वस्तु के उत्पादन में उत्पादक की कोई रुचि न हो, वह उसका उत्पादन कम करेगा। फलस्वरूप वस्तु की पूर्ति घट जाएगी।

(7) उत्पादकों का विशेष लक्ष्य -

आर्थिक विश्लेषण के नज़रिये से देखा जाए तो प्रायः यह मान लिया जाता है कि कोई भी फर्म अपने लाभ को अधिकतम करने के उद्देश्य से कार्य करती है। लेकिन कभी-कभी ऐसा भी होता है कि फर्म सिर्फ़ लाभ कमाने के बजाय किसी बाज़ार में अपनी वस्तु का विस्तार करना चाहती है। ऐसी स्थिति में वह अपनी उस वस्तु की पूर्ति को बढ़ाने का प्रयास करती है।

(8) सरकार की कर नीति -

किसी वस्तु की पूर्ति पर सरकार की कर नीति का भी प्रभाव पड़ता है। किसी वस्तु पर यदि सरकार अधिक कर लगती है तो बाज़ार में उस वस्तु की क़ीमत एकाएक बढ़ जाती है। जिस कारण उस वस्तु की मांग घटने लगती है। उत्पादकों को लाभ कम होता है जिस कारण उस वस्तु का उत्पादन भी कम होने लगता है। फलस्वरप वस्तु की पूर्ति घट जाती है।

3.5 Supply and Demand Together (पूर्ति और मांग एक साथ):

पूर्ति और मांग का अलग-अलग विश्लेषण करने के बाद इस योग्य हो गए हैं कि यह देख सके कि यह दोनों शक्तियां एक साथ मिलकर किस प्रकार बाजार में वस्तु की मात्रा एवं कीमत का निर्धारण करती है।

Equilibrium (संतुलन): चित्र 3.11 बाजार पूर्ति वक्र और बाजार मांग वक्र को एक साथ दिखाता है। ध्यान दें कि एक बिंदु है जिस पर पूर्ति और मांग वक्र प्रतिच्छेद करते हैं। इस बिंदु को बाजार का संतुलन कहा जाता है। इस बिंदु पर कीमत को **संतुलन कीमत** कहा जाता है, और मात्रा को **संतुलन मात्रा** कहा जाता है। यहाँ संतुलन मूल्य $2.00 प्रति शंकु (Cone) है, और संतुलन मात्रा 7 आइसक्रीम शंकु (Ice-cream Cones) है।

चित्र 3.11

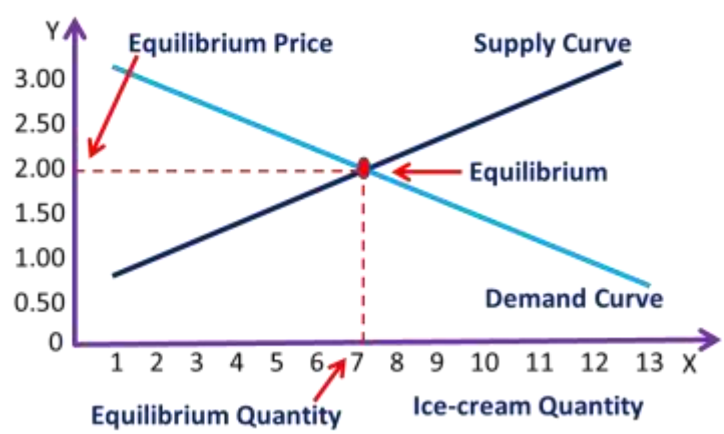

शब्दकोश संतुलन शब्द को एक ऐसी स्थिति के रूप में परिभाषित करता है जिसमें विभिन्न शक्तियां संतुलन में होती हैं - और यह बाजार के संतुलन का भी वर्णन करता है। संतुलन कीमत पर, खरीदार की इच्छा और वस्तु की उस

मात्रा को खरीदने क्षमता को संतुलित करती है जिसे विक्रेता बेचने के लिए तैयार और सक्षम होते हैं। संतुलन कीमत को कभी-कभी बाजार समाशोधन मूल्य (market-clearing price) भी कहा जाता है, क्योंकि इस कीमत पर, बाजार संतुष्ट हो गया है अर्थात खरीदारों ने वह सब खरीदा है जो वे खरीदना चाहते हैं, और विक्रेताओं ने वह सब बेच दिया है जो वे बेचना चाहते हैं।

खरीदारों और विक्रेताओं की कार्रवाई (The actions of buyers and sellers) स्वाभाविक रूप से बाजारों को पूर्ति और मांग के संतुलन की ओर ले जाती है। यह देखने के लिए कि क्या होता है जब बाजार मूल्य, संतुलन मूल्य के बराबर नहीं होता है, पहले मान लीजिए कि बाजार मूल्य संतुलन मूल्य से ऊपर है, जैसा कि चित्र 3.12 के पैनल (a) में है। प्रति शंकु $ 2.50 की कीमत पर, पूर्ति की गई वस्तु की मात्रा (10 शंकु), मांग गई मात्रा (4 शंकु) से अधिक है। वस्तु का **अधिशेष** होता है: आपूर्तिकर्ता अपनी इच्छित सभी वस्तुओं को चालू मूल्य पर बेचने में असमर्थ होते हैं। एक अधिशेष को कभी-कभी **अतिरिक्त आपूर्ति (Excess Supply)** की स्थिति कहा जाता है। जब आइसक्रीम बाजार में अधिशेष होता है, तो आइसक्रीम के विक्रेता अपने फ्रीजर को आइसक्रीम से भरे हुए पाते हैं, जिसे वे बेचना चाहते हैं, लेकिन बेच नहीं पाते। इस स्थिति में वे कीमतों में कटौती करके अधिशेष को नियंत्रित करने की कोशिश करते हैं। कीमतों में गिरावट, बदले में, मांग की मात्रा में वृद्धि और आपूर्ति की मात्रा में कमी कर देती इन परिवर्तनों से मांग तथा पूर्ति में संकुचन एवं विस्तार होता है ऐसी स्थिति में मांग तथा पूर्ति वक्र अपना स्थान नहीं बदलते बल्कि वे स्थिर रहते हैं और कीमत में होने वाले यह परिवर्तन बाजार को फिर से संतुलन की स्थिति में ले आता है।

चित्र 3.12

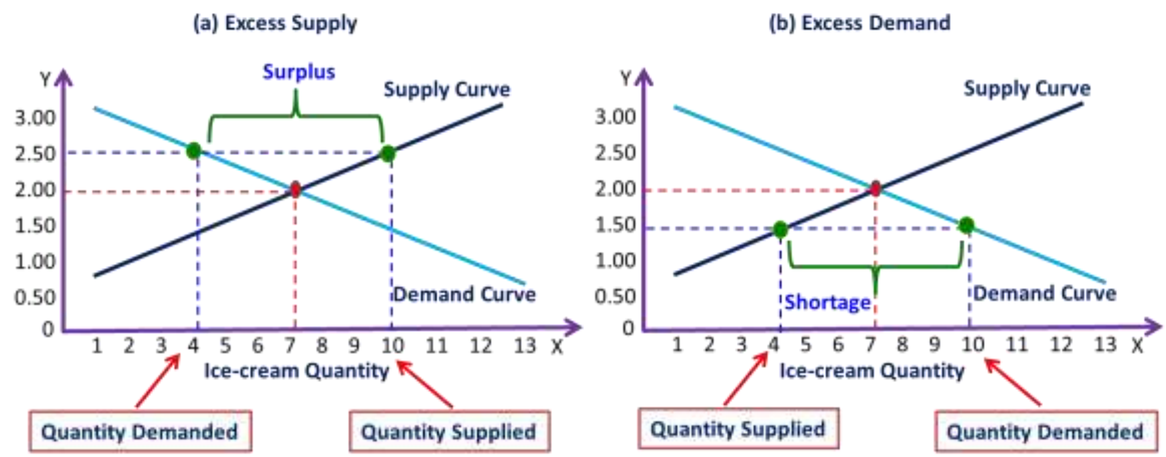

मान लीजिए कि बाजार मूल्य संतुलन मूल्य से नीचे है, जैसा कि चित्र 3.12 के पैनल (b) में है। इस स्थिति में, कीमत $ 1.50 प्रति शंकु है, और मांग की गई वस्तु की मात्रा, पूर्ति की मात्रा से अधिक है। इस स्थिति में **वस्तु की है कमी (Shortage of Goods)** : मांगकर्ता अपनी मनचाही कीमत पर सब कुछ नहीं खरीद पा रहे हैं। **कमी** को कभी-कभी **अधिक मांग (Excess Demand)** की स्थिति कहा जाता है। जब आइसक्रीम बाजार में आइसक्रीम की कमी होती है, तो खरीदारों को एक आइसक्रीम को खरीदने के लिए लंबी लाइनों में इंतजार करना पड़ता है। क्रेताओं की संख्या अधिक होने पर और वस्तु की उपलब्धता कम होने की स्थिति में विक्रेता वस्तुओं की कीमत को बढ़ाकर वस्तु की कमी को समायोजित करते हैं। वस्तु की कीमत में होने वाली यह वृद्धि वस्तु की मांग में कमी कर देती है तथा वस्तु की पूर्ति को बढ़ा देती है। और हम देखते हैं कि एक बार फिर से मांग तथा पूर्ति वक्रों पे होने वाला यह विस्तार एवं संकुचन बाजार को फिर से संतुलन की स्थिति में पहुंचा देता है।

इस प्रकार, चाहे कीमत बहुत अधिक या बहुत कम हो, अनेक क्रेताओं और विक्रेताओं की गतिविधियां स्वचालित रूप से बाजार मूल्य को, संतुलन मूल्य की ओर धकेलती हैं। एक बार जब बाजार अपने संतुलन में पहुंच जाता है, तो सभी क्रेता और विक्रेता संतुष्ट हो जाते हैं, और कीमत पर कोई ऊपर या नीचे का दबाव नहीं होता है। कीमतों में कितनी तेजी से समायोजन होगा यह अलग-अलग बाजारों पर निर्भर करता है। अधिकांश मुक्त बाजारों में, अधिशेष और कमी केवल अस्थायी होती है क्योंकि कीमतें अंततः अपने संतुलन स्तर की ओर बढ़ती हैं। वास्तव में, यह घटना इतनी व्यापक है कि इसे **पूर्ति और मांग का नियम** कहा जाता है: किसी भी वस्तु की कीमत उस वस्तु की पूर्ति की मात्रा और उस वस्तु की मांग की मात्रा को संतुलन में लाने के लिए समायोजित होती है।

3.6 मांग की लोच (Elasticity of Demand)

आमतौर से मांग की लोच का संबंध मांग की कीमत लोच से समझा जाता है जबकि मांग की लोच की धारणा मांग की आय, मांग की ऑडी, और स्थानापन्न लोच से संबंधित है हम प्रत्येक प्रकार की मांग की लोच की विवेचना आगे करेंगे

3.6.1 मांग की कीमत लोच (Price Elasticity of Demand)

कीमत में परिवर्तन से मांग की प्रतिक्रिया शीलता की कोटी को मांग की लोच कहा जाता है। मार्शल के अनुसार जिन्होंने मांग की लोच की धारणा का निर्माण किया था "मार्केट में मांग की लोच या क्रियाशीलता इस बात के अनुसार अधिक या कम होती है कि कीमत में निश्चित कमी होने पर मांग की मात्रा में अधिक या कम वृद्धि हो तथा कीमत में निश्चित वृद्धि पर अधिक या कम हो"। आधुनिक अर्थशास्त्री मांग की लोच को गणितीय ढंग से परिभाषित करते हैं। लिप्सी के शब्दों में मांग की लोच की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है "कीमत में प्रतिशत परिवर्तन से मांग-मात्रा में प्रतिशत परिवर्तन का अनुपात" श्रीमती रॉबिंसन ने अधिक स्पष्टता से इन शब्दों में इसे परिभाषित किया है "किसी कीमत पर मांग की लोच कीमत में थोड़े परिवर्तन के प्रत्युत्तर में क्रय की गई/खरीदी गई मात्रा के अनुपातिक परिवर्तन को कीमत के अनुपातिक परिवर्तन से भाग देने पर प्राप्त होती है"। इस परिभाषा को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है;

$$E_p = \frac{\text{मांग मात्रा में प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{कीमत में प्रतिशत परिवर्तन}}$$

मांग की लोच (E_P)बराबर है मांग मात्रा में प्रतिशत परिवर्तन बटे (÷) कीमत में प्रतिशत परिवर्तन। इस प्रकार मांग की कीमत लोच का फार्मूला बनता है;

$$E_p = \frac{\Delta Q/_Q}{\Delta P/_P} = \frac{\Delta Q}{Q} \times \frac{P}{-\Delta P} = -\frac{\Delta Q}{\Delta P} \times \frac{P}{Q}$$

∆Q= मांग मात्रा में परिवर्तन, ∆P=कीमत में परिवर्तन, Q=प्रारंभिक मांगी गई मात्रा, P=प्रारंभिक कीमत

मांग की कीमत लोच का गुणांक (E_P) सदैव ऋणात्मक होता है क्योंकि जब कीमत में परिवर्तन होता है तो मांग विपरीत दिशा में गति करती है परंतु सुविधा के लिए ऋणात्मक चिह्न दिखाया नहीं जाता।

मांग की लोच इकाई, इकाई से अधिक, इकाई से कम, शून्य या अनंत हो सकती है। नीचे दिए गए चित्रों से इन पांच स्थितियों को समझा जा सकता है।

(1). **इकाई लोच (Unity Elasticity):** मांग की लोच उस समय इकाई के बराबर होती है जब मांग में परिवर्तन, कीमत में परिवर्तन के ठीक बराबर अनुपात में हो। उदाहरण के लिए जब कीमत में 50% परिवर्तन होने पर मांग में 50% परिवर्तन होता है तो मांग की लोच इकाई के बराबर होती है। ऊपर के चित्र में ΔP कीमत में परिवर्तन को, ΔQ मांगने परिवर्तन को, और DD मांग वक्र को प्रकट करती है। चित्र 3.13 में मांग वक्र पर कीमत की लोच इकाई के बराबर है।

चित्र 3.13

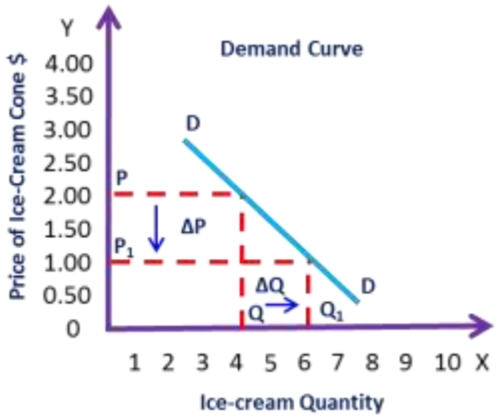

P=2 P_1=1 Q=4 Q_1=6

P_1-P=1-2 ΔP= -1 Q_1-Q=6-4 ΔQ= 2

$$E_p = \frac{\frac{Q_1 - Q}{Q} \times 100}{\frac{P_1 - P}{P} \times 100} = \frac{\frac{\Delta Q}{Q} \times 100}{\frac{\Delta P}{P} \times 100} = \frac{\text{मांग मात्रा में प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{कीमत में प्रतिशत परिवर्तन}}$$

$$E_p = \frac{\frac{6-4}{4} \times 100}{\frac{1-2}{2} \times 100} = \frac{\frac{2}{4} \times 100}{\frac{-1}{2} \times 100} = \frac{50\%}{50\%} = |1|\ \textit{Unitary Elastic Demand}$$

(2). इकाई से अधिक (Elasticity Greater than Unity): जब मांगी गई मात्रा में परिवर्तन, कीमत में परिवर्तन के अनुपात में अधिक हो तो मांग की कीमत लोच इकाई से अधिक होती है। यदि कीमत में 50% परिवर्तन होने पर मांगी गई मात्रा में 100% परिवर्तन हो तो मांग की लोच 2 होगी। इसे रेखा चित्र 3.14 द्वारा दर्शाया जा सकता है। इसे सापेक्ष लोचदार मांग भी कहते हैं।

चित्र 3.14

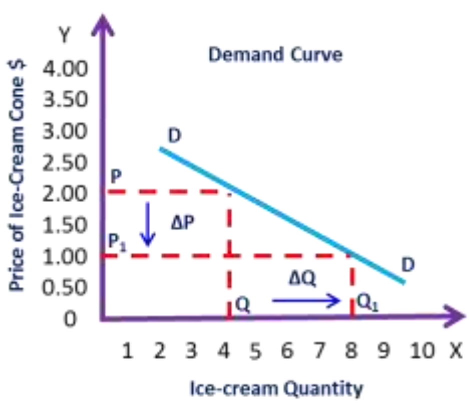

P=2 P_1=1 Q=4 Q1=8

P_1-P=1-2 ΔP= -1 Q_1-Q=8-4 ΔQ= 4

$$E_p = \frac{\frac{Q_1 - Q}{Q} \times 100}{\frac{P_1 - P}{P} \times 100} = \frac{\frac{\Delta Q}{Q} \times 100}{\frac{\Delta P}{P} \times 100} = \frac{\text{मांग मात्रा में प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{कीमत में प्रतिशत परिवर्तन}}$$

$$E_p = \frac{\frac{8-4}{4} \times 100}{\frac{1-2}{2} \times 100} = \frac{\frac{4}{4} \times 100}{\frac{-1}{2} \times 100} = \frac{100\%}{50\%} = |2| > 1\ \textit{More Elastic Demand}$$

(3). इकाई से कम लोच (Elasticity Less than Unity): जब मांगी गई मात्रा में परिवर्तन, कीमत में परिवर्तन के अनुपात से कम हो तो मांग की लोच इकाई से कम होती है। जब कीमत में 50% परिवर्तन होने पर मांगी गई मात्रा में 25% परिवर्तन हो तो मांग की कीमत लोच 1/2 (0.5) अर्थात एक से कम है। इसे रेखा चित्र 3.15 द्वारा व्यक्त किया गया है जहां मांग तथा कीमत में परिवर्तन का अनुपात एक से कम है। इसे सापेक्ष बेलोच मांग भी कहते हैं।

चित्र 3.15

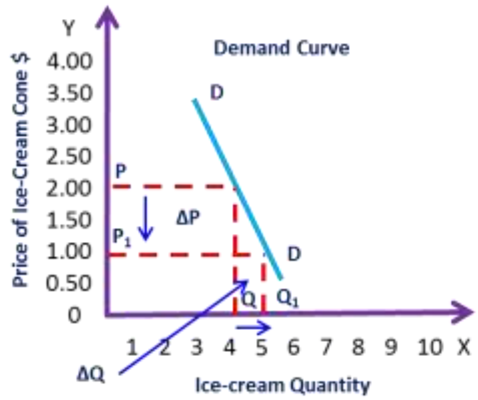

$P=2 \quad P_1=1 \qquad Q=4 \quad Q1=5$

$P_1-P=1-2 \quad \Delta P=-1 \qquad Q_1-Q=5-4 \quad \Delta Q=1$

$$E_p = \frac{\frac{Q_1-Q}{Q}\times 100}{\frac{P_1-P}{P}\times 100} = \frac{\frac{\Delta Q}{Q}\times 100}{\frac{\Delta P}{P}\times 100} = \frac{\text{मांग मात्रा में प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{कीमत में प्रतिशत परिवर्तन}}$$

$$E_p = \frac{\frac{5-4}{4}\times 100}{\frac{1-2}{2}\times 100} = \frac{\frac{1}{4}\times 100}{\frac{-1}{2}\times 100} = \frac{25\%}{50\%} = \frac{1}{2} = |0.5| > 1\ \textit{More Elastic Demand}$$

(4). शून्य लोच मांग (Zero Elasticity): मांग की लोच शून्य तब होती है जब कीमत में कितना भी परिवर्तन हो पर मांगी गई मात्रा में बिल्कुल भी कोई परिवर्तन नहीं होता। इस स्थिति में मांग की कीमत लोच बिल्कुल बेलोच होती है। कीमत में 50% परिवर्तन होने पर मांगी गई मात्रा में कोई परिवर्तन नहीं हो तो मांग की लोच E_P = 0/20% =0 होगी जिसे चित्र 3.16 में दिखाया गया है।

चित्र 3.16

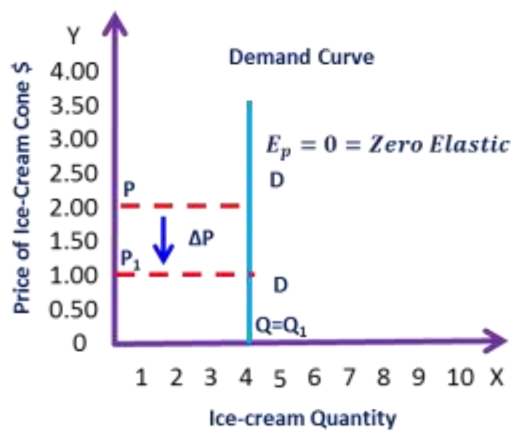

$E_p = 0 = \textit{Zero Elastic Demand}$

$P=2 \quad P1=1 \qquad Q=4 \quad Q1=4$

$P1-P=1-2 \quad \Delta P=-1 \qquad Q1-Q=4-4 \quad \Delta Q=0$

$$E_p = \frac{\frac{Q_1-Q}{Q}\times 100}{\frac{P_1-P}{P}\times 100} = \frac{\frac{\Delta Q}{Q}\times 100}{\frac{\Delta P}{P}\times 100} = \frac{\text{मांग मात्रा में प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{कीमत में प्रतिशत परिवर्तन}}$$

$$E_p = \frac{\frac{4-4}{4}\times 100}{\frac{1-2}{2}\times 100} = \frac{\frac{0}{4}\times 100}{\frac{-1}{2}\times 100} = \frac{0\%}{50\%} = 0 = \textit{Zero Elastic Demand}$$

(5). मांग की अनंत कीमत लोच (Infinity Elasticity): अनंत मांग की कीमत लोच तब होती है जब कीमत में बहुत ही कम नाम मात्र का परिवर्तन होने पर मांगी गई मात्रा में अनंत परिवर्तन हो जाए जब देखने पर ऐसा प्रतीत होता है कि कीमत में कोई परिवर्तन नहीं हुआ पर मांग में अनंत परिवर्तन हो गया है। जैसा कि चित्र 3.17 में कीमत $P=P_1$=$2 पर मांगी गई मात्रा 4 से 8 तक बढ़ती चली जाती है इसे पूर्णतया लोचदार मांग कहते हैं।

चित्र 3.17

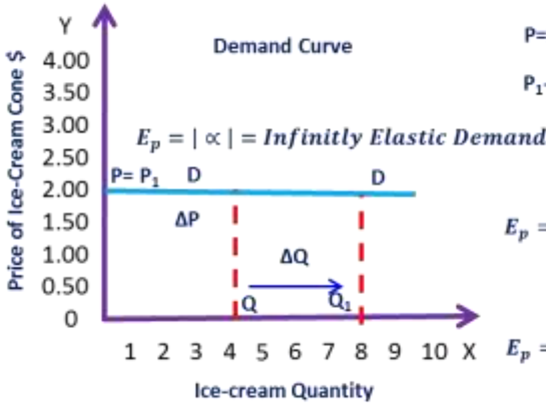

$P=2 \quad P_1=2 \qquad Q=4 \quad Q_1=8$

$P_1-P=2-2 \quad \Delta P=0 \qquad Q_1-Q=8-4 \quad \Delta Q=4$

$$E_p = \frac{\frac{Q_1-Q}{Q}\times 100}{\frac{P_1-P}{P}\times 100} = \frac{\frac{\Delta Q}{Q}\times 100}{\frac{\Delta P}{P}\times 100} = \frac{\text{मांग मात्रा में प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{कीमत में प्रतिशत परिवर्तन}}$$

$$E_p = \frac{\frac{8-4}{4}\times 100}{\frac{2-2}{2}\times 100} = \frac{\frac{4}{4}\times 100}{\frac{0}{2}\times 100} = \frac{100\%}{0\%} = |\propto| = \textit{Infinitly Elastic Demand}$$

3.6.2 मांग की कीमत लोच को मापने की विधियां

मांग की कीमत लोच को मापने की चार विधियां है **(i) प्रतिशत विधि (ii) बिंदु विधि (ii) चाप विधि और (iv) व्यय विधि** इनकी व्याख्या निम्नलिखित है;

3.6.2.1 प्रतिशत विधि (The Percentage Method):

मांग की कीमत लोच को मापने की पहली विधि प्रतिशत अथवा अनुपातिक विधि कहलाती है। इस विधि के अनुसार मांग की कीमत लोच का अनुमान लगाने के लिए मांग में होने वाले प्रतिशत परिवर्तन को, कीमत में होने वाले प्रतिशत परिवर्तन से, भाग कर दिया जाता है। इसका सूत्र निम्नलिखित है;

$$E_P = \frac{X \text{ वस्तु की मांग की गई मात्रा में प्रतिशत परिवर्तन}}{X \text{ वस्तु की कीमत में प्रतिशत परिवर्तन}}$$

$$E_p = \frac{\frac{Q_1-Q}{Q}\times 100}{\frac{P_1-P}{P}\times 100} = \frac{\frac{\Delta Q}{Q}\times 100}{\frac{\Delta P}{P}\times 100} = \frac{\Delta Q}{\Delta P}\times\frac{P}{Q}$$

Q=वस्तु की मांग की गई प्रारंभिक मात्रा, Q_1=परिवर्तित मांगी गई मात्रा, P=वस्तु की प्रारंभिक कीमत, P_1=परिवर्तित कीमत

ΔQ=मांगी गई मात्रा में परिवर्तन, ΔP=कीमत में परिवर्तन, Δ= परिवर्तन को प्रकट करता है।

इस फार्मूले की सहायता से एक मांग अनुसूची के आधार पर हम मांग की कीमत लोचों का आकलन कर सकते हैं;

तालिका 3.5

Combination	Price	Quantity Demanded
A	6	0
B	5 →	10
C	4	20
D	3 →	30
E	2	40
F	1 →	50
G	0	60

(i). मान लीजिए कि वस्तु X की कीमत ₹5 प्रति किलोग्राम से कम होकर ₹3 प्रति किलोग्राम हो जाती है और इसकी मांग की गई मात्रा 10 किलोग्राम से बढ़कर 30 किलोग्राम हो जाती है। तब;

$$E_p = \frac{\frac{Q_1 - Q}{Q} \times 100}{\frac{P_1 - P}{P} \times 100} = \frac{\Delta Q}{\Delta P} \times \frac{P}{Q} = \frac{(30 - 10)}{(3 - 5)} \times \frac{5}{10} = \frac{20}{-2} \times \frac{5}{10} = -5\ or\ > 1$$

यह **लोचदार मांग** अथवा **एक से अधिक मांग की लोच** दर्शाता है।

$Q=10$, $Q_1=30$, $P=5$, $P_1=3$

(ii). जब हम विपरीत दिशा में गति करके मांग की लोच मापते हैं मान लीजिए X की कीमत बढ़कर ₹3 से ₹5 प्रति किलोग्राम और मांगी गई मात्रा घटकर 30 किलोग्राम से 10 किलोग्राम हो जाती है तब यह **इकाई के बराबर मांग की लोच** दर्शाता है;

$$E_p = \frac{\frac{Q_1 - Q}{Q} \times 100}{\frac{P_1 - P}{P} \times 100} = \frac{\Delta Q}{\Delta P} \times \frac{P}{Q} = \frac{(10 - 30)}{(5 - 3)} \times \frac{3}{30} = \frac{-20}{2} \times \frac{3}{30} = -1\ or = 1$$

$Q=30$, $Q_1=10$, $P=3$, $P_1=5$

(iii). मान लीजिए कि X की कीमत ₹3 प्रति किलोग्राम से कम होकर ₹1 प्रति किलोग्राम और उसकी मांगी गई मात्रा 30 किलोग्राम से बढ़कर 50 किलोग्राम हो जाती है तब यह फिर **इकाई के बराबर मांग की लोच है ;**

$$E_p = \frac{\frac{Q_1 - Q}{Q} \times 100}{\frac{P_1 - P}{P} \times 100} = \frac{\Delta Q}{\Delta P} \times \frac{P}{Q} = \frac{(50 - 30)}{(1 - 3)} \times \frac{3}{30} = \frac{20}{-2} \times \frac{3}{30} = -1\ or = 1$$

$Q=30$, $Q_1=50$, $P=3$, $P_1=1$

(iv). विपरीत दिशा लीजिए, जब कीमत ₹1 से बढ़कर ₹3 प्रति किलोग्राम और मांगी गई मात्रा 50 किलोग्राम से कम होकर 30 किलोग्राम हो जाती है तब यह **बलोच मांग** अथवा **इकाई से कम मांग की लोच है ;**

$$E_p = \frac{\frac{Q_1 - Q}{Q} \times 100}{\frac{P_1 - P}{P} \times 100} = \frac{\Delta Q}{\Delta P} \times \frac{P}{Q} = \frac{(30-50)}{(3-1)} \times \frac{1}{50} = \frac{-20}{2} \times \frac{1}{50} = -\frac{1}{5}\ or < 1$$

Q=50, Q_1=30, P=1, P_1=3

ऊपर के उदाहरण में (i) और (ii) अथवा (iii) और (iv) में कीमतें और मात्राएं वही होने पर भी मांग की कीमत लोच के मूल्य एक दूसरे से भिन्न आते हैं यह इस बात पर निर्भर करता है कि (1) हम किस दिशा में गति करते हैं (2) लोचों में यह अंतर प्रत्येक उदाहरण में प्रतिशत परिवर्तन का आकलन करते समय एक भिन्न आधार के प्रयोग के कारण है।

3.6.2.2मांग की बिंदु लोच (Point Elasticity of Demand)

मांग वक्र के किसी बिंदु पर कीमत के सूक्ष्म परिवर्तन के फलस्वरुप जो लोच मापी जाती है उसे बिंदु लोच कहते हैं। सरल मांग वक्र पर कीमत लोच वक्र के ढलान तथा उस बिंदु, जिस पर माप किया जाता है पर निर्भर करती है। अतः एक मांग वक्र के विभिन्न बिंदुओं पर कीमत कीमत लोच भिन्न-भिन्न होगी। इसीलिए मांग वक्र के प्रत्येक बिंदु पर मांग की लोच अलग से मापी जाती है।

सरल मांग वक्र (Linear Demand Curve): चित्र 3.18 में MN मांग वक्र एक सरल रेखा है। इस मांग वक्र के बिंदु A पर मांग की लोच $E_P = \frac{AN}{AM}$ के बराबर होगी जो कि निम्नलिखित विधि द्वारा ज्ञात की जा सकती है। जैसा कि हम जानते हैं;

$$E_p = (-)\frac{\Delta Q}{\Delta P} \times \frac{P}{Q}$$

चित्र 3.18 से ज्ञात होता है कि

$$P = OP(= AQ);$$

$$Q = OQ(= AP);$$

$$\Delta P = PP_1(= AB);$$

$$\Delta Q = QQ_1(= BC);$$

$$\therefore E_P = \frac{AQ}{AP} \times \frac{BC}{AB} \dots \dots \dots (i)$$

क्योंकि ∆ABC तथा ∆AQN समरूप त्रिभुज (Similar Triangles) है इसलिए इनकी भुजाओं (sides) का अनुपात बराबर होगा

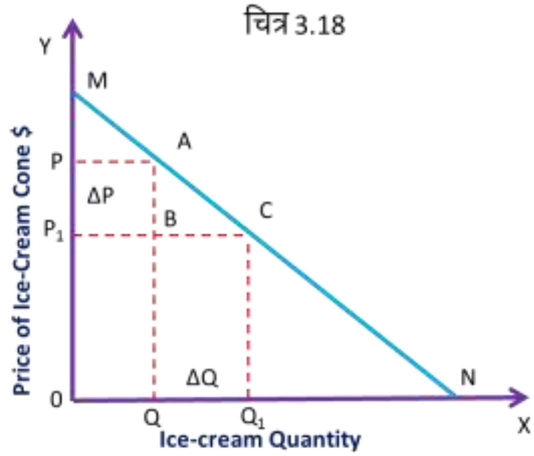

$$\frac{BC}{AB} = \frac{QN}{AQ}$$

$\frac{BC}{AB}$ के स्थान पर समीकरण (i) में $\frac{QN}{AQ}$ लिखने पर हमें प्राप्त होता है;

$$E_P = \frac{AQ}{AP} \times \frac{QN}{AQ} = \frac{QN}{AP} = \frac{QN}{OQ}\ (AP = OQ)$$

क्योंकि ΔAQN तथा ΔMPA समरूप त्रिभुज है, इसलिए इनकी भुजाओं का अनुपात बराबर होगा;

$$\therefore E_P = \frac{QN}{OQ} = \frac{QN}{AP} = \frac{AN}{AM} = \frac{Lower\ Segment}{Upper\ Segment}$$

सरल रेखा के विभिन्न बिंदुओं पर कीमत लोच रेखा चित्र 3.19 से ज्ञात हो जाती है

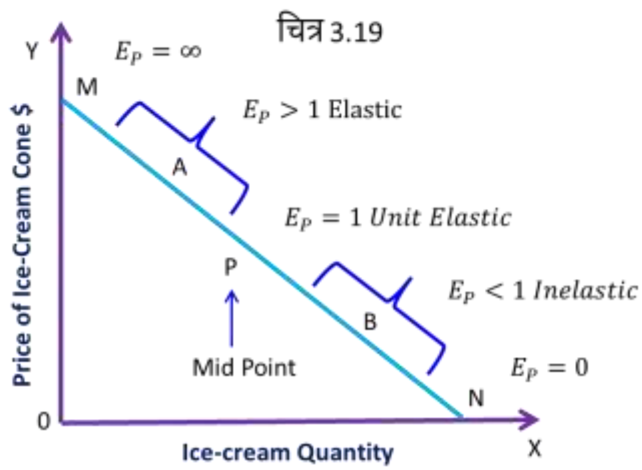

(i). बिंदु P मांग वक्र MN के मध्य में स्थित है। इसीलिए PN (नीचे का भाग) तथा PM (ऊपर का भाग) बराबर होंगे। **मांग की लोच इकाई के बराबर होगी** अर्थात P बिंदु पर मांग की लोच **इकाई** होगी।

$$\therefore E_P = \frac{PN}{PM} = \frac{Lower\ Segment}{Upper\ Segment} = 1$$

(ii). बिंदु A मांग रेखा MN के मध्य बिंदु P से उपस्थित है। इसीलिए मांग रेखा का निचला भाग AN ऊपर के भाग AM से अधिक है। **अतः मांग की लोच इकाई से अधिक होगी** अर्थात बिंदु A पर मांग की लोच **इकाई से अधिक** होगी।

$$\therefore E_P = \frac{AN}{AM} = \frac{Lower\ Segment}{Upper\ Segment} > 1$$

(iii). बिंदु B मांग रेखा के मध्य बिंदु P से नीचे की ओर स्थित है। इसलिए निचला भाग BN ऊपर के भाग BM से कम होगा। **अतः मांग की लोच इकाई से कम होगी** अर्थात बिंदु B पर मांग की लोच **इकाई से कम** होगी अर्थात **बेलोज** होगी होगी।

$$\therefore E_P = \frac{BN}{BM} = \frac{Lower\ Segment}{Upper\ Segment} < 1$$

चित्र 9 से स्पष्ट हो जाता है कि जैसे-जैसे हम बिंदु P से ऊपर की ओर जाते हैं मांग की लोच इकाई से अधिक होना शुरू हो जाती है और वह OY- अक्ष के समीप यह **अनंत** की ओर अग्रसर हो जाती है। इसके विपरीत जब हम बिंदु P से नीचे की ओर जाते हैं तो मांग की लोच इकाई से कम होना शुरू हो जाती है और OX- अक्ष के समीप यह **शून्य** की ओर अग्रसर हो जाती है।

टेढ़ी मांग वक्र (Non-Linear Demand Curve): जब मांग वक्र टेढ़ी होती है तो उसके किसी बिंदु की मांग की लोच निकालने के लिए उस पर एक स्पर्श रेखा इस प्रकार डालनी चाहिए कि वह स्पर्श रेखा मांग वक्र को उस बिंदु पर ही स्पर्श करें जिसकी मांग की लोच ज्ञात करनी है। वह बिंदु उस स्पर्श रेखा को दो भागों में बांट देगा। स्पर्श रेखा के निचले हिस्से को ऊपरी हिस्से से भाग देकर जो भजनफल आता है उसके द्वारा मांग की कीमत लोच का अनुमान लगाया जा सकता है। रेखा चित्र 3.20 में DD मांग वक्र के P बिंदु को की मांग की लोच ज्ञात करनी है। इसके लिए सर्वप्रथम मांग वक्र के P बिंदु पर एक स्पर्श रेखा MN खींचनी होगी। P बिंदु पर मांग वक्र और स्पर्श रेखा एक दूसरे को छू रहे हैं और उनका ढलान बराबर है। परिणाम स्वरूप बिंदु P पर मांग वक्र की लोच $E_P = \frac{PN}{PM} = \frac{Lower\ Segment}{Upper\ Segment}$ होगी।

चित्र 3.20

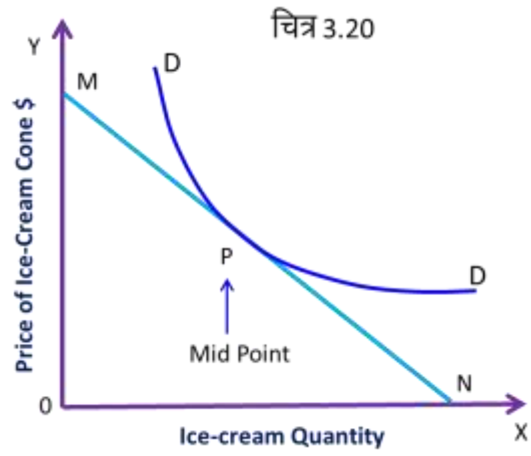

स्थिर लोच के साथ मांग वक्र (Demand Curve with Constant Elasticity):

यह बतला देना आवश्यक है कि निम्नलिखित मांग वक्रों की लोच स्थिर या समान रहती है

(i) जब मांग वक्र OX- अक्ष के समानांतर होती है तब लोच **अनंत** होती है।
(ii) जब मांग वक्र OY-अक्ष के समानांतर होती है तो लोच **शून्य** होती है।
(iii) जब मांग वक्र रैक्टेंगुलर हाइपरबोला होती है तो लोच **इकाई** के बराबर होती है।

3.6.2.3 चाप कीमत लोच (Arc Elasticity):

चाप लोच कीमत परिवर्तन की औसत अनुक्रिया का एक माप है जो एक मांग वक्र पर दो बिंदुओं के बीच के भाग को प्रदर्शित करता है। एक मांग वक्र पर दो बिंदुओं के बीच के भाग को लोच कहा जाता है। चित्र 3.21 में DD मांग वक्र पर A और C बिंदुओं के बीच का भाग लोच है। जब मध्य बिंदु या औसत कीमत तथा की मात्रा के प्रयोग करने से जो लोच प्राप्त होती है उसे चाप कीमत लोच कहा जाता है।

कीमत लोच के सूत्र के अनुसार;

$$E_p = (-)\frac{\Delta Q}{\Delta P} \times \frac{P}{Q}$$

$\Delta Q = Q_1 - Q$=खरीदी गई मात्रा में परिवर्तन, $\Delta P = P_1 - P$=कीमत में परिवर्तन, P तथा Q क्या है? क्योंकि AC के विभिन्न बिंदुओं पर P तथा Q के विभिन्न मूल्य होते हैं इसलिए इनके किसी एक निश्चित मूल्य का प्रयोग करना आवश्यक नहीं है। परंपरा के अनुसार P और Q के दो मूल्यों के औसत का प्रयोग किया जाता है ताकि

$$Q = \frac{Q_1 + Q}{2} \text{ तथा } P = \frac{P_1 + P}{2}$$

अतः मांग की कीमत लोच निम्नलिखित सूत्र से की जाती है;

$$E_p = (-)\frac{\Delta Q}{\frac{1}{2}(Q_1 + Q)} \div \frac{\Delta P}{\frac{1}{2}(P_1 + P)} = (-)\frac{\Delta Q}{\frac{1}{2}(Q_1 + Q)} \times \frac{\frac{1}{2}(P_1 + P)}{\Delta P} = (-)\frac{\Delta Q}{(Q_1 + Q)} \times \frac{(P_1 + P)}{\Delta P}$$
$$= \frac{Q_1 - Q}{Q_1 + Q} \times \frac{P_1 + P}{P_1 - P}$$

(Q=प्रारंभिक मांग, Q_1 =नई मांग, P=प्रारंभिक कीमत, P_1= नई कीमत)

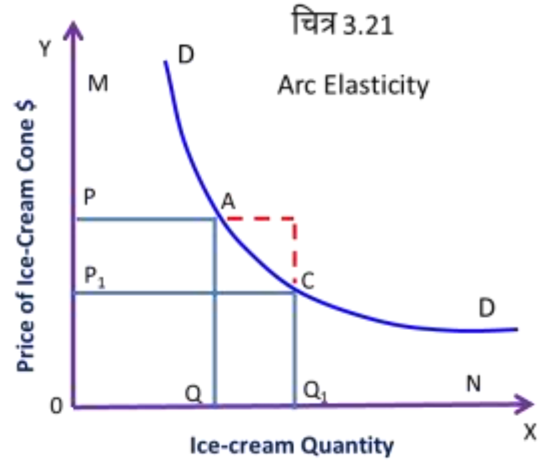

चाप लोच विधि के अनुसार यदि एक वस्तु की कीमत में समान अनुपात में वृद्धि या कमी होती है और परिणाम स्वरूप वस्तु की मांग में भी उसी अनुपात में संकुचन या विस्तार होता है तब मांग की लोच एक समान रहेगी। परंतु यदि प्रतिशत विधि का प्रयोग किया जाता है तब उपरोक्त अवस्था में मांग की लोच भिन्न होगी। अतः चाप लोच विधि, प्रतिशत लोच विधि की तुलना में अधिक वास्तविक तथा निर्भर विधि है। मांग की लोच तथा बिंदु लोच के बीच अंतर भी है चाप लोच मांग वक्र के एक विशेष भाग पर लोच का औसत मूल्य है जबकि बिंदु लोच मांग वक्र के एक विशेष बिंदु पर लोच का मूल्य है।

3.6.2.5 आय विधि (Revenue Method):

मांग की लोच ज्ञात करने की चौथी विधि आय विधि है। एक फर्म को उसके उत्पादन की बिक्री से जो बिक्री मूल्य प्राप्त होता है उसे फॉर्म की आय कहा जाता है। मान लीजिए 10 मीटर कपड़ा बेचकर एक फर्म को ₹50 प्राप्त होते हैं इस प्रकार ₹50 को फर्म की कुल आय कहा जाएगा। यदि कुल आय को उत्पादन की बेचीं गई इकाइयों की मात्रा से भाग दिया जाए तो भजनफल आएगा उसे औसत आय अथवा प्रति इकाई कीमत कहा जाएगा। उपरोक्त फर्म की औसत आय 50 / 10 = ₹5 प्रति मीटर होगी। अतः औसत आय और कीमत समानार्थक शब्द है। किसी वस्तु की एक अधिक इकाई बेचने से कुल आय में जो अंतर आता है उसे सीमांत आय होती हैं। यदि 11 मीटर कपड़ा बेचकर एक फर्म को ₹54 प्राप्त होते हैं तो इसका अर्थ है कि 11 मीटर कपड़े की सीमांत आय ₹54 - ₹50 = ₹4 होगी। एक फर्म की औसत आय वक्र को मांग पत्र भी कहा जाता है। औसत आय तथा सीमांत आय के द्वारा मांग की लोच को निम्नलिखित सूत्र द्वारा ज्ञात किया जाता है;

$$E_P = \frac{AR}{AR - MR}$$

मांग की आय लोच के सूत्र को चित्र 3.22 की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है। इस चित्र में OY-अक्ष पर आय तथा OX- अक्ष पर वस्तु की मात्रा प्रकट की गई है। AB औसत आय या मांग वक्र है और AN सीमांत आय वक्र (MR वक्र) है मांग वक्र (को सताए) के बिंदु P पर मांग की लोच चित्र में की सहायता से ज्ञात की जा सकती है।

$$\therefore E_P = \frac{PB}{PA} = \frac{Lower\ Segment\ (\text{नीचे का भाग})}{Upper\ Segment\ (\text{ऊपर का भाग})}$$

मांग की लोच बराबर है नीचे का भाग ÷ ऊपर का भाग बराबर है Ep। ∆PMB तथा ∆AEP समरूप है। इसलिए इनकी भुजाओं का अनुपात बराबर होगा।

$$\therefore E_P = \frac{PB}{PA} = \frac{PM}{AE} \ldots\ldots\ldots (i)$$

इसलिए ∆AET तथा ∆TPLसमरूप त्रिभुज है। इसलिए PL=AE, समीकरण (i) में AE के स्थान पर PL लिखने से;

$$\therefore E_P = \frac{PM}{AE}$$

क्योंकि PL=PM-LM

इसलिए

$$\therefore E_P = \frac{PM}{PM - LM}$$

यहां PM=AR और LM=MR

अतः

$$\therefore E_P = \frac{PM}{PM - LM} = \frac{AR}{AR - MR}$$

$$\therefore E_P = \frac{AR}{AR - MR} = \frac{\text{औसत आय}}{\text{औसत आय} - \text{सीमांत आय}}$$

चित्र 3.22

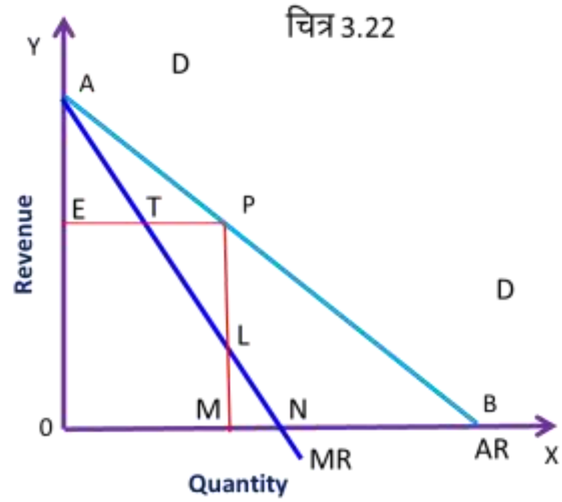

यदि ऊपर का सूत्र प्रयोग करने से E_P का मूल्य एक होता है तो **मांग की लोच इकाई** होगी। यदि यह एक से अधिक है तो मांग की कीमत लोच **इकाई से अधिक** या **लोचदार** होगी और यदि यह एक से कम है तो मांग की कीमत लोच **इकाई से कम** या **बेलोचदार** होगी।

3.6.2.5 कुल व्यय विधि (Total Expenditure Method): मांग की लोच मापने की विधि का प्रतिपादन

डॉक्टर मार्शल ने किया था। इस विधि के अनुसार मांग की लोच को मापने के लिए यह मालूम करना चाहिए कि किसी वस्तु की कीमत में परिवर्तन होने से उस वस्तु पर किए जाने वाले **कुल व्यय** में **कितना परिवर्तन किस दिशा** में होता है।

(i) जब किसी वस्तु की कीमत के कम या अधिक होने से उस पर किए जाने वाले कुल व्यय में कोई परिवर्तन नहीं होता तो मांग की लोच इकाई के बराबर होती है।

(ii) जब किसी वस्तु की कीमत कम होने से कुल व्यय बढ़ जाता है, कीमत के बढ़ने से कुल व्यय कम हो जाता है अर्थात कुल व्यय कीमत में होने वाले परिवर्तन से **विपरीत दिशा** में चलता है तब **मांग की लोच इकाई से अधिक** होती है।

(iii) जब किसी वस्तु की कीमत कम होने से कुल व्यय कम हो जाता है तथा कीमत बढ़ने से कुल व्यय बढ़ जाता है अर्थात कुल व्यय **उस दिशा में चलता है जिसमें कीमत में परिवर्तन होता है** तब उस वस्तु की **मांग की लोच इकाई से कम** होगी। मांग की लोच को मापने की विधि को तालिका 3.6 की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है।

तालिका 3.6

Price	Quantity Purchased	Total Expenditure	Change in Total Expenditure	Elasticity of Demand
2	4	8	कुल व्यय में परिवर्तन नहीं होता	$E_p=1$
4	2	8		
1	8	8		
2	4	8	जब कीमत बढ़ती है तो कुल व्यय कम होता है तथा जब कीमत कम होती है तो कुल व्यय बढ़ता है	$E_p>1$
4	1	4		
1	10	10		
2	3	6	जब कीमत बढ़ती है तो कुल व्यय भी बढ़ता है तथा जब कीमत कम होती है तो कुल व्यय भी कम होता है	$E_p<1$
4	2	8		
1	4	4		

चित्र 3.23 द्वारा मांग की लोच मापने की कुल व्यय विधि को स्पष्ट किया जा सकता है। इस चित्र में OX-अक्ष पर कुल व्यय तथा OY-अक्ष पर कीमत को प्रकट किया गया है। ST रेखा कुल व्यय रेखा है। ST रेखा के बीच का BC भाग **इकाई लोच** को प्रकट कर रहा है। इससे पता लगता है कि जब कीमत OM है तो कुल व्यय MC है। और जब कीमत बढ़कर ON हो जाती है तो कुल व्यय NB(=MC) अर्थात पहले जितना ही रहता है। ST रेखा का TB भाग **इकाई से अधिक** लोचदार मांग को प्रकट कर रहा है। इसे ज्ञात होता है कि जब कीमत ON से बढ़कर OR हो जाती है तो कुल व्यय NB से कम होकर RA हो जाता है अर्थात इसमें **विपरीत दिशा** में परिवर्तन होता है। ST रेखा का SC भाग इकाई से कम लोचदार मांग को प्रकट कर रहा है। इस से ज्ञात होता है कि जब कीमत OM से कम होकर OP हो जाती है तो कुल व्यय MC से कम हो कर DP हो जाता है अर्थात **समान दिशा** में बदला बदलता है।

चित्र 3.23

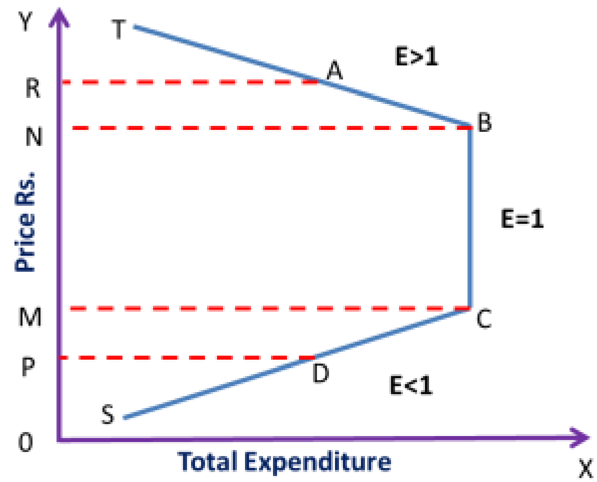

3.6.2 मांग की आय लोच (Income Elasticity of Demand):

मांग की आय लोच को निम्नलिखित सूत्र की सहायता से मापा जा सकता है;

$$E_Y = \frac{\text{मांगी गई मात्रा में अनुपातीक या प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{आय में अनुपातीक या प्रतिशत परिवर्तन}}$$

E_Y बराबर है मांगी गई मात्रा में अनुपातीक या प्रतिशत परिवर्तन बटे आय में अनुपातीक या प्रतिशत परिवर्तन

मांग की आय लोच की श्रेणियां (Degrees of Income Elasticity of Demand):

मांग की आय लोच तीन प्रकार की होती है

(1). मांग की धनात्मक आय लोच (Positive Income Elasticity of Demand): किसी वस्तु की मांग की आय लोच उस अवस्था में धनात्मक होती है जब उपभोक्ता की आय के बढ़ने वस्तु की मांग बढ़ जाती है और आय के घटने से मांग कम हो जाती है। मांग की आय लोच **सामान्य पदार्थों तथा सामान्य वस्तुओं** के संबंध में **धनात्मक** होती है। इसे निम्नलिखित रेखाचित्र से समझा जा सकता है। रेखा चित्र 3.24 में उपभोक्ता की आय को OY- प्रकट गया है अक्ष पर किया गया है। तथा मांगी गई मात्रा को OX- प्रकट किया गया है। DyDy मांग की आय लोच को प्रकट करता है यह वक्र बाए से दाए ऊपर की ओर उठ रहा है जो यह दर्शाता है कि आय के बढ़ने पर मांग बढ़ती है और आय के कम होने पर मांग कम होती है। मांग की आय लोच तीन प्रकार की हो सकती है;

चित्र 3.24

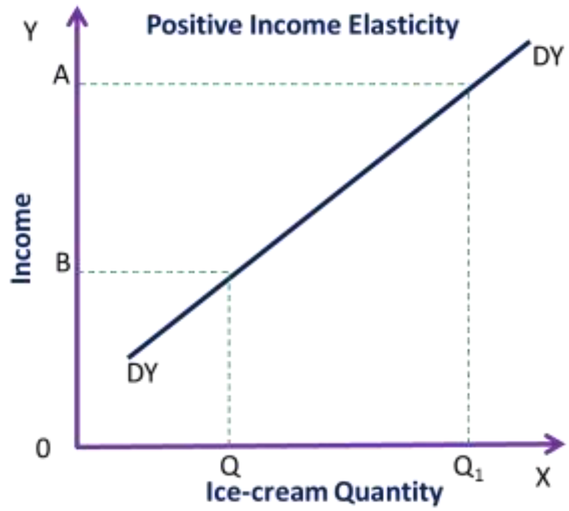

(i). **मांग की इकाई आय लोच (Unitary Elastic):** मांग की आय लोच उस अवस्था में **इकाई** के बराबर होती है जब आय जितने प्रतिशत परिवर्तन होता है मांगी गई मात्रा में भी उतने ही प्रतिशत परिवर्तन हो। मान लीजिए यदि आय 100% बढ़ जाती है तथा मांग भी 100% बढ़ जाती है तो मांग की आय लोच इकाई के बराबर होगी।

(ii). मांग की इकाई से कम आय लोच अथवा आए बेरोजगार मांग (Less Elastic or Inelastic Demand): मांग की धनात्मक आय लोच इकाई से कम उस अवस्था में होती है जब मांग में होने वाला प्रतिशत परिवर्तन आय में होने वाले प्रतिशत परिवर्तन से कम। आय 100% बढ़ जाए परंतु मांग केवल 50% की वृद्धि हो तो मांग की बेलोचदार होगी तथा **इकाई से कम** होगी।

(iii). मांग की इकाई से अधिक आए लोग या आए लोचदार मांग (More Elastic or Elastic Demand): मांग की धनात्मक आय लोच उस अवस्था में इकाई से अधिक होती है जब मांग में होने वाले प्रतिशत परिवर्तन आय में होने वाले प्रतिशत परिवर्तन से अधिक होते हैं उदाहरण के लिए यदि आय 100% बढ़ जाए तथा मांग 200% बढ़ जाए तो मांग की आय लोच इकाई से अधिक होगी।

मांग की ऋणात्मक आय लोच (Negative Income Elasticity of Demand): मांग की आय लोच उस अवस्था में ऋणात्मक होती है जब उपभोक्ता की आय में वृद्धि होने से किसी वस्तु की मांग में कमी होती है तथा उपभोक्ता की आय में कमी होने से वस्तु की मांग में वृद्धि होती है। मांग की ऋणात्मक आय लोच **निम्न कोटि की वस्तुओं** की होती है। उदाहरण के लिए घटिया अनाज, मोटा कपड़ा आदि की मांग की आय लोच ऋणात्मक होती है। चित्र 3.25 में DyDy मांग वक्र ऋणात्मक आय लोच को प्रकट कर रहा है। इसका ढलान बाएं से दाएं नीचे की ओर है। इससे पता लगता है कि जब आए ₹100 है तो वस्तु की मांग 4 इकाइयां की गई है और जब आय बढ़कर ₹200 हो जाती है तो वस्तु की मांग कम होकर ₹2 हो जाती है।

चित्र 3.25

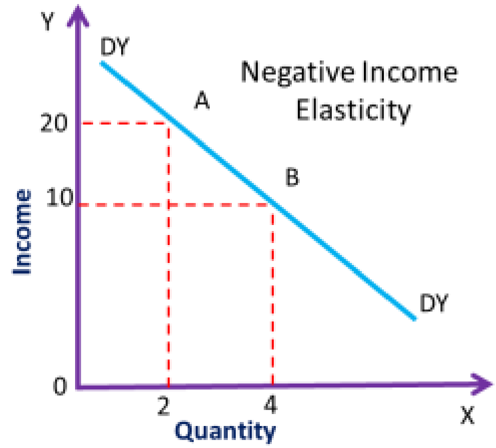

मांग की शून्य आय लोच (Zero Income Elasticity of Demand): किसी वस्तु की मांग की आय लोच उस समय शून्य होती है जब उस वस्तु के क्रेता की आय में परिवर्तन आने पर उस वस्तु की मांग में कोई परिवर्तन नहीं होता। इसे चित्र 3.26 द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। DyDy वक्र शून्य को प्रकट कर रहा है। यह OY- के समानांतर है इसे प्रकट होता है कि यदि आय ₹100 से बढ़कर ₹200 हो जाती है तो भी वस्तु की मांग 4 इकाइयां ही रहती है। अनिवार्य आवश्यकताओं जैसे मिट्टी का तेल, नमक आदि की मांग की आय लोच शून्य होती है।

चित्र 3.26

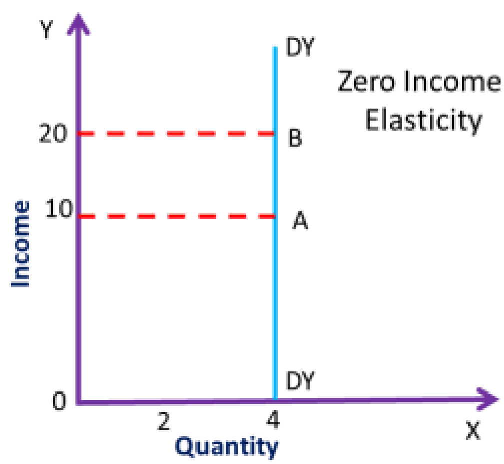

3.6.3 मांग की आड़ी लोच (Cross Elasticity of Demand):

किन्ही दो संबंधित वस्तुओं की मांग की मात्रा और कीमत में होने वाले परिवर्तन में परस्पर संबंध होता है । एक वस्तु की कीमत में परिवर्तन दूसरी वस्तु की मांगी गई मात्रा को प्रभावित करती है, जैसे चाय की कीमत में परिवर्तन होने पर कॉफ़ी की मांग में परिवर्तन आ जाता है। एक वस्तु की मांग की मात्रा और दूसरी वस्तु की कीमत में परिवर्तन का पारस्परिक संबंध मांग की आड़ी लोच द्वारा मापा जा सकता है । मांग की आड़ी लोच संबंधित वस्तु Y की कीमत में होने वाले अनुपातिक परिवर्तन के कारण X वस्तु की मांगी गई मात्रा में होने वाला अनुपातिक परिवर्तन है। मांग की

आड़ी लोच Y वस्तु की कीमत में होने वाले परिवर्तन के स्वरूप X वस्तु की खरीदी जाने वाली मात्रा की अनुक्रियाशीलता का माप है। मांग की आड़ी लोच को निम्नलिखित सूत्र द्वारा मापा जाता है।

$$Cross\ Elasticity\ of\ Demand = \frac{\Delta Q_x}{\Delta P_y} \times \frac{P_y}{Q_x}$$

X वस्तु की मांगी गई मात्रा में आनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन Y वस्तु की कीमत में अनुपातक या प्रतिशत परिवर्तन

मांग की आड़ी लोच की श्रेणियां (Degrees of Cross Elasticity of Demand): मांग की आड़ी लोच तीन प्रकार की हो सकती है

(1) **धनात्मक (Positive):** स्थानापन्न वस्तुओं के लिए मांग की आड़ी लोच धनात्मक होती है। अन्य शब्दों में जब एक वस्तु दूसरे की स्थानापन्न होती है तो ऐसी स्थिति में एक वस्तु की कीमत में वृद्धि होने पर दूसरी वस्तु की मांग की गई मात्रा में वृद्धि होती है। उदाहरण के तौर पर कॉफ़ी की कीमत बढ़ने पर चाय की मांग बढ़ जाएगी क्योंकि यह एक दूसरे की निकटतम प्रतिस्थापन है। स्थानापन्न वस्तुओं जैसे चाय और कॉफी के लिए मांग की आड़ी लोच को रेखाचित्र 3.27 की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है। इस रेखा चित्र में OX-अक्ष पर चाय की मात्रा और OY-अक्ष पर कॉफ़ी की कीमत प्रकट की गई है। जब कॉफ़ी की कीमत OB है तो चाय की मांग OQ है। जब कॉफी की कीमत बढ़ कर OA हो जाती है तो चाय की मांग भी बढ़कर OQ_1 हो जाती है। DSDS वक्र कॉफ़ी की विभिन्न कीमतों पर, चाय की मांगी गई विभिन्न मात्राओं को प्रकट कर रहा है। यह वक्र नीचे बाएं से दाएं और उठ रहा है। इससे सिद्ध होता है कि कॉफ़ी की कीमत बढ़ने पर चाय की मांग बढ़ेगी और कॉफी की कीमत कम होने पर चाय की मांग कम होगी।

चित्र 3.27

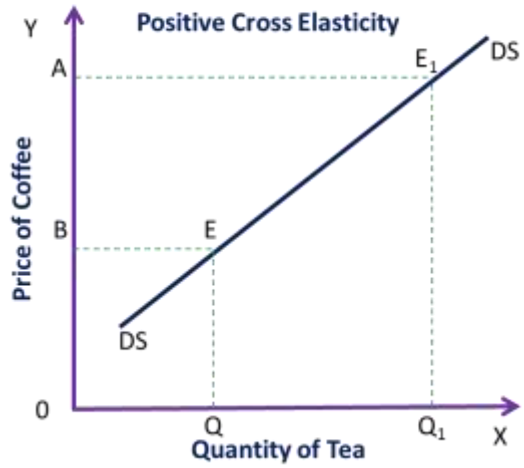

(2) **ऋणआत्मक (Negative):** पूरक वस्तुओं के लिए मांग की आड़ी लोच ऋणात्मक होती है। ऐसी स्थिति में मांग की आड़ी लोच ऋणआत्मक होती है। अतः इस स्थिति में मांग की आड़ी लोच की संख्या से पहले घटाने (-) का चिन्ह लगाते हैं। ऋणात्मक मांग की आड़ी लोच को निम्नलिखित रेखाचित्र 3.28 द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। रेखा चित्र में OX- पर मक्खन की मात्रा और OY-अक्ष पर डबल रोटी की कीमत प्रकट की गई है। DCDC रेखा मांग की आड़ी लोच को प्रकट कर रही है। इस रेखा का ढलान बाएं से दाएं नीचे की ओर है जो यह सिद्ध करता है कि डबल रोटी की कीमत बढ़ने पर मक्खन की मांग कम हो जाएगी। बिंदु E तथा

E_1 से ज्ञात होता है कि डबल रोटी कीमत OP होती है तो मक्खन की मांग OQ है तथा जब डबल रोटी की कीमत बढ़कर OP_1 हो जाती है तो मक्खन की मांग कम होकर OQ_1 हो जाती है।

चित्र 3.28

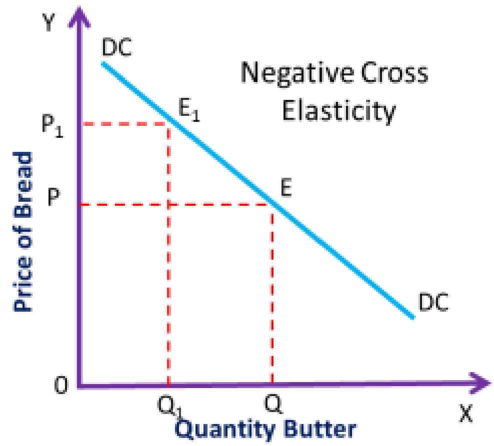

(3) मांग की शून्य आड़ी (Zero Elasticity): मांग की आड़ी लोच उस स्थिति में शून्य होती है जब दो वस्तुओं में परस्पर कोई संबंध नहीं होता। उदाहरण के लिए गेहूं की कीमत बढ़ने का किताबों की मांग पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। अतः इन की मांग की आड़ी लोच शून्य होगी।

3.6.4 मांग की लोच को निर्धारित करने वाले तत्व या कारक (Determinants of Elasticity of Demand):

वास्तविक जीवन में हम देखते हैं कि कुछ वस्तुओं की मांग की लोच **इकाई** होती है, कुछ वस्तुओं की मांग की लोच **इकाई से अधिक** या **लोचदार** होती है तथा कुछ वस्तुओं की मांग की लोच **इकाई से कम** अथवा **बेलोचदार** होती है। इसका कारण यह है कि मांग की लोच कई कारकों द्वारा प्रभावित होती है। मांग की लोच को निर्धारित करने वाले कुछ महत्वपूर्ण तत्व निम्नलिखित है:

(1) **वस्तु की प्रकृति (Nature of the Commodity):** अर्थशास्त्र में वस्तुओं का वर्गीकरण मुख्य रूप से तीन श्रेणियों में किया जाता है (i) **आवश्यक वस्तुएं** (ii) **आरामदायक वस्तुएं** (iii) **विलासिता की वस्तुएं**। सामान्यतः यह देखा गया है कि अनिवार्य वस्तुएं जैसे नमक, मिट्टी का तेल, मांग की लोच इकाई से कम या बेलोचदार होती है। इसका कारण यह है कि एक उपभोक्ता इन वस्तुओं की एक निश्चित मात्रा खरीदना है। चाहे इनकी कीमत में वृद्धि हो अथवा कमी इसलिए इनकी कीमतों में होने वाला परिवर्तन का इनकी मांग पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। इसके विपरीत विलासिता की वस्तुओं जैसे एयर कंडीशनर, कीमती फर्नीचर आदि की मांग इकाई से अधिक अथवा लोचदार होती है। इसका कारण यह है कि इनकी कीमत में होने वाला परिवर्तन इनकी मांग को प्रभावित करता है। आरामदायक वस्तुओं जैसे ट्रांजिस्टर, कूलर, पंखा आदि की कीमत लोच इकाई के बराबर या इकाई के समीप होती है।

(2) **स्थानापन्न वस्तुओं की उपलब्धता (Availability of Substitutions):** जिन वस्तुओं के जितने अधिक स्थानापन्न उपलब्ध होंगे उनकी मांग की लोच भी उतनी ही अधिक होगी। जिन वस्तुओं के स्थानापन्न जैसे चाय का स्थानापन्न कॉफी, जैल पेन का स्थानापन्न बॉल पेन, पेप्सी का स्थानापन्न कोका कोला, सैंडलों का स्थानापन्न चप्पल इत्यादि यह उचित कीमत पर उपलब्ध होते हैं। इसलिए इनकी मांग लोचदार होती है। इसका कारण यह है कि यदि किसी वस्तु की कीमत उसके स्थानापन्न की तुलना में कम हो जाती है तो लोग

उस वस्तु की अधिक मात्रा खरीदेंगे। उदाहरण के लिए यदि कॉफी, चाय की तुलना में सस्ती हो जाती है तो कॉपी की मांग में बहुत वृद्धि होगी तथा चाय की मांग में काफी कमी हो जाएगी। जिन वस्तुओं के स्थानापन्न नहीं होते जैसे सिगरेट, शराब आदि इनकी मांग बेलोचदार होती है।

(3) **विभिन्न उपयोगों वाली वस्तुएं (Goods with Diffrerent Uses):** एक वस्तु के जितने अधिक उपयोग होते हैं उतनी ही उनकी मांग अधिक लोचदार होती है। वे वस्तुएं जिन की विभिन्न उपयोगों में इस्तेमाल किया जाता है उनकी मांग लोचदार होती है। उदाहरण के लिए बिजली के विभिन्न उपयोग है इसका प्रयोग बल्ब, हीटर, प्रेस गर्म करने आदि कई कार्यों में किया जाता है। यदि बिजली की कीमत बढ़ जाएगी तो इसका प्रयोग महत्वपूर्ण कार्यों जैसे रोशनी के लिए बल्ब जलाने में ही किया जाएगा। इस प्रकार कीमत में होने वाले वाली वृद्धि की तुलना में बिजली की मांग में अधिक कमी होगी।

(4) **उपयोग का स्थगन (Postponement of Use):** जिन वस्तुओं के उपयोग को भविष्य के लिए स्थगित किया जा सकता है उनकी मांग लोचदार होती है। उदाहरण के लिए यदि मकान बनाने की मांग को भविष्य के लिए स्थगित किया जा सकता है तो मकान की सामग्री जैसे रेत, सीमेंट, चुना आदि की मांग लोचदार होगी। इसके विपरीत जिन वस्तुओं की मांग को भविष्य के लिए स्थगित नहीं किया जा सकता जैसे भूख लगने पर भोजन और प्यास लगने पर पेय पदार्थ तो इनकी मांग बेलोचदार होती है।

(5) **उपभोक्ता की आय (Income of Consumer):** जिन लोगों की आय बहुत अधिक या बहुत कम होती है उनकी मांग सामान्यतः बेलोचदार होती है। इसका कारण यह है कि कीमत के घटना बढ़ने का इन लोगों द्वारा की जाने वाली मांग पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। इसके विपरीत मध्य वर्ग के लोगों की मांग लोचदार होती है। इन लोगों द्वारा मांगी जाने वाली वस्तुओं की कीमत में वृद्धि होने पर उनकी मांग में अपेक्षाकृत कमी हो जाती है।

(6) **उपभोक्ता की आदत (Habits of Consumer):** उन वस्तुओं की मांग बेलोचदार होती है जिनके लिए लोगों की आदत बन जाती है जैसे सिगरेट, कॉफी आदि शराब इत्यादि। इसका कारण यह है कि इन वस्तुओं की कीमत में वृद्धि होने पर भी उपभोक्ताओं की मांग में कम नहीं आती।

(7) **किसी वस्तु पर खर्च की जाने वाली आय का अनुपात (Proportion of Income Spent on a Commodity):** आय का जितना अधिक अनुपात किसी वस्तु पर खर्च किया जाता है उतनी ही उस वस्तु के लिए मांग अधिक लोचदार होगी। जिन वस्तुओं पर उपभोक्ता अपनी आय का बहुत कम अनुपात खर्च करता है जैसे अखबार, टूथपेस्ट, बूट पॉलिश आदि इनकी मांग बेलोचदार होती है। इन वस्तुओं की कीमत बढ़ने पर इनकी मांग में कमी नहीं होती। इसके विपरीत जिन वस्तुओं पर उपभोक्ता अपनी आय का बड़ा भाग खर्च करता है जैसे कपड़े, बढ़िया भोजन, डेजर्ट कूलर, आदि इनकी मांग लोचदार होती है। इनकी कीमत बढ़ने पर इनकी मांग कम हो जाती है क्योंकि उपभोक्ता इनकी स्थानापन्न उसे खोजने लगता है।

(8) **कीमत स्तर (Price Level):** बहुत अधिक कीमत और बहुत कम कीमत वाली वस्तुओं की मांग बेलोचदार होती है। अधिक कीमत वाली वस्तुओं जैसे हीरा, जवाहरात, कीमती गलीचे आदि की मांग बेलोचदार होती है। इन वस्तुओं की कीमतों में परिवर्तन इनकी मांग में बहुत थोड़ा परिवर्तन लाता है। इसी प्रकार जिन वस्तुओं की कीमत बहुत कम होती है जैसे माचिस, पोस्टकार्ड, सस्ती सब्जियां आदि इनकी मांग भी बेलोचदार होती है। इनकी कीमत में परिवर्तन होने का इनकी मांग पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। इसके विपरीत जिन वस्तुओं की कीमत मध्य श्रेणी की होती है अर्थात जो नए बहुत सस्ती और ना ही बहुत महंगी होती है उनकी मांग लोचदार होती है। जिन वस्तुओं की कीमत कम होने पर इनकी मांग में अपेक्षाकृत अधिक वृद्धि होती है।

(9) **समय (Time):** अल्पकाल की तुलना में दीर्घकाल में मांग अधिक लोचदार होती है। समय की अवधि जितनी लंबी होती है उतनी ही उपभोक्ता को नई कीमत के साथ समन्वय करने का समय मिल जाता है। इसलिए मांग अधिक लोचदार हो जाएगी। यदि समन्वय में के लिए बहुत कम समय मिलता है तब मांग बेलोचदार होगी। अतः अल्पकाल में किसी वस्तु की मांग बेलोचदार और दीर्घकाल में लोचदार होती है। इसका कारण यह है कि दीर्घकाल में उपभोक्ता अपनी आदतों में परिवर्तन कर सकता है या प्रतिस्थापन विकसित किए जा सकते हैं या उपभोक्ताओं की संख्या बढ़ सकती है। समय जितना लंबा होता जाता है उतनी ही किसी वस्तु के स्थानापन्न के आने की संभावना बन जाती है। किसी वस्तु की कीमत में कमी होने के फलस्वरूप अल्पकाल की तुलना में दीर्घकाल में इनकी मांग में अधिक विस्तार होगा। अन्य शब्दों में अल्पकाल में जो मांग बेलोचदार है वह दीर्घकाल में लोचदार बन सकती है। उदाहरण के लिए भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में जब पहली बार सस्ती बिजली आई थी तब कुछ ही घरों में बिजली की फिटिंग हुई थी अतः प्रारंभ में बिजली की मांग बेलोचदार थी परंतु दीर्घकाल में कई घरों ने बिजली लगवा ली और व्यक्तियों ने बिजली के सामान भी खरीद लिए फलस्वरूप दीर्घकाल में बिजली के लिए मांग काफी लोचदार हो गई

(10) **पूरक वस्तुएं (Compementary Goods):** वे वस्तुएं जिनकी संयुक्त या पूरक मांग होती है उनकी मांग लोचदार होती है जैसे कार और पेट्रोल। पेट्रोल की कीमत बढ़ने पर भी पेट्रोल की मांग में कमी नहीं होगी यदि कारों की मांग में कमी नहीं होती है।

3.7 पूर्ति की लोच (Elasticity of Supply): हमने पिछले अंक में देखा था कि पूर्ति का नियम, किसी वस्तु की क़ीमत में परिवर्तन होने के फलस्वरूप उसकी पूर्ति में होने वाले परिवर्तन की दिशा को बताता है। किन्तु पूर्ति का नियम यह बताने में असमर्थ होता है कि वस्तु की क़ीमत में परिवर्तन होने के फलस्वरुप वस्तु की पूर्ति में कितना परिवर्तन होगा? परिवर्तन की इसी दर को पूर्ति की लोच कहा जाता है।

सही मायने में कहा जाए तो पूर्ति की लोच की धारणा यह बताती है कि किसी वस्तु के मूल्य में परिवर्तन होने पर उस वस्तु की पूर्ति में होने वाला परिवर्तन किस दर से होगा। अर्थात किसी वस्तु की क़ीमत में होने वाले परिवर्तन के फलस्वरूप, उसकी पूर्ति में जिस दर से परिवर्तन होता है, उसे पूर्ति की लोच कहा जाता है।

किसी वस्तु की क़ीमत में परिवर्तन के फलस्वरूप पूर्ति की मात्रा में होने वाले परिवर्तन की दर को पूर्ति की लोच (Elasticity of supply) कहा जाता है। इसे पूर्ति की क़ीमत लोच (Price Elasticity of Supply) भी कहा जाता है।

इसे Es से दर्शाया जाता है। गणितीय रूप में पूर्ति की लोच का सूत्र निम्न रूप से दर्शाया जाता है –

$$E_S = \frac{\text{पूर्ति में अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{कीमत में अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन}} = \frac{Proportionate\ or\ Percentage\ Change\ in\ Supply}{Proportionate\ or\ Percentage\ Change\ in\ Price}$$

मार्शल के अनुसार - 'पूर्ति की लोच से अभिप्राय क़ीमत में होने वाले परिवर्तन के फलस्वरूप पूर्ति की मात्रा में होने वाले परिवर्तन से होता है।'

लिप्से के अनुसार - 'पूर्ति की लोच, उस दर के निरपेक्ष मूल्य को दर्शाती है जिसे हम पूर्ति में प्रतिशत परिवर्तन को क़ीमत में हुए प्रतिशत परिवर्तन से भाग देकर प्राप्त करते हैं।'

सेम्यूलसन के अनुसार - 'पूर्ति की लोच, क़ीमत में होने वाले परिवर्तन के फलस्वरूप पूर्ति में होने वाले परिवर्तन की प्रतिक्रिया की मात्रा कहलाती है।

कीमत में होने वाले परिवर्तन के फलस्वरुप पूर्ति की मात्रा में होने वाले परिवर्तन को बताती है। पूर्ति की लोच को, पूर्ति की मात्रा में अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन को कीमत के अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन से भाग देकर प्राप्त किया जाता है। पूर्ति में अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन **बटे (÷)** कीमत में अनुपातक या प्रतिशत परिवर्तन। पूर्ति की लोज के संबंध में दो बातें ध्यान रखनी चाहिए (i) इसके अंतर्गत हम पूर्ति के उस परिवर्तन पर विचार कर सकते हैं जो कीमत में थोड़े से परिवर्तन के परिणाम स्वरूप होता है। (ii) जो अल्प समय के लिए हो।

पूर्ति की लोच की श्रेणियां (Degrees of Elasticity of Supply): वस्तुओं की क़ीमतों में परिवर्तन से सभी वस्तुओं की पूर्ति में एकसमान दर से परिवर्तन नहीं होता है। कुछ वस्तुओं की क़ीमत में परिवर्तन से उसकी पूर्ति में बहुत अधिक परिवर्तन होता है तो कुछ वस्तुओं में अपेक्षाकृत कम भी होता है। यानि कि हम कह सकते हैं कि कुछ वस्तुओं की पूर्ति की लोच अधिक होती है तो कुछ वस्तुओं की पूर्ति की लोच कम होती है। इस आधार पर पूर्ति की लोच को निम्न पांच श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है।

(1) **पूर्णतया लोचदार पूर्ति (Perfectly Elastic Supply):** जब मूल्य में परिवर्तन नहीं होने पर भी या अत्यंत सूक्ष्म परिवर्तन होने पर पूर्ति में बहुत अधिक परिवर्तन (कमी या वृद्धि) हो जाती है तब पूर्ति की लोच पूर्णतया लोचदार कही जाती है। ऐसी लोच को **अनंत लोच** कहा जाता है। पूर्णतया लोचदार मूर्ति की दशा में पूर्ति रेखा, आधार रेखा OX- अक्ष के समानांतर होती है। इस प्रकार की पूर्ति की लोच केवल काल्पनिक होती है। व्यवहारिक जीवन में यह देखने को नहीं मिलती। चित्र 3.29 में OX-अक्ष पर वस्तु की पूर्ति तथा OY-अक्ष पर वस्तु की क़ीमत दर्शाती गई है। जहां SS पूर्णतया लोचदार पूर्ति वक्र दिखाया गया है। जो कि आधार रेखा OX के समानांतर है। चित्र से स्पष्ट है कि वस्तु की क़ीमत में परिवर्तन न होने पर भी उस वस्तु की पूर्ति में लगातार वृद्धि हो रही है। अतः वस्तु की पूर्ति पूर्णतया लोचदार अर्थात अनंत कहीं जाएगी।

चित्र 3.29

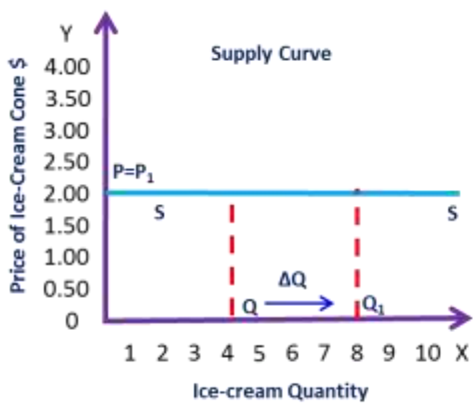

$P=2$ $P_1=2$ $Q=4$ $Q_1=8$

$P_1-P=2-2$ $\Delta P=0$ $Q_1-Q=8-4$ $\Delta Q=4$

$$E_S = \frac{\frac{Q_1-Q}{Q}\times 100}{\frac{P_1-P}{P}\times 100} = \frac{\frac{\Delta Q}{Q}\times 100}{\frac{\Delta P}{P}\times 100} = \frac{\text{पूर्ति में अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{कीमत में अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन}}$$

$$E_S = \frac{\frac{8-4}{2}\times 100}{\frac{2-2}{2}\times 100} = \frac{\frac{4}{4}\times 100}{\frac{0}{1}\times 100} = \frac{100\%}{0} = |\propto| \; Perfectly\ Elastic\ Supply$$

(2) **अत्यधिक लोचदार पूर्ति (More Elastic Supply):** जब किसी वस्तु की पूर्ति में अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन, कीमत में होने वाले अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन से अधिक होता है तो ऐसी दशा में पूर्ति की लोच अधिक लोचदार कही जाती है। तथा यह **इकाई से अधिक** होती है। चित्र में जब वस्तु की क़ीमत OP है तब वस्तु की पूर्ति OQ है। लेकिन जब वस्तु की क़ीमत बढ़कर OP1 हो जाती है तब उसकी पूर्ति भी

बढ़कर OQ1 हो जाती है। चित्र 3.30 से स्पष्ट है कि वस्तु की क़ीमत में हुई वृद्धि की अपेक्षा उसकी पूर्ति में होने वाली वृद्धि अधिक है। अतः वस्तु की पूर्ति की लोच इकाई से अधिक है।

चित्र 3.30

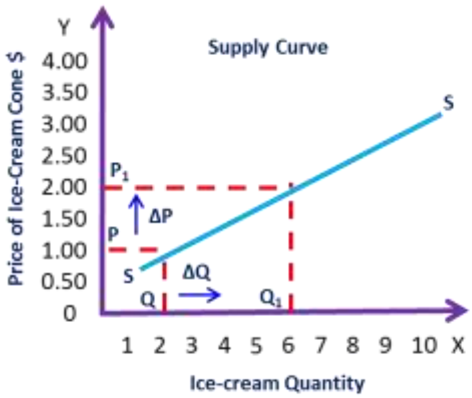

P=1 P_1=2 Q=2 Q_1=6

P_1-P=2-1 ΔP= 1 Q_1-Q=6-2 ΔQ= 4

$$E_S = \frac{\frac{Q_1 - Q}{Q} \times 100}{\frac{P_1 - P}{P} \times 100} = \frac{\frac{\Delta Q}{Q} \times 100}{\frac{\Delta P}{P} \times 100} = \frac{\text{पूर्ति में अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{कीमत में अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन}}$$

$$E_S = \frac{\frac{6-2}{2} \times 100}{\frac{2-1}{1} \times 100} = \frac{\frac{4}{2} \times 100}{\frac{1}{1} \times 100} = \frac{200\%}{100\%} = |2| > 1 \; More\ Elastic\ Supply$$

(3) **इकाई लोचदार पूर्ति (Unitary Elastic Supply):** जब किसी वस्तु की पूर्ति में परिवर्तन उसी अनुपात में होता है जिस अनुपात में उसकी कीमत में परिवर्तन हुआ है तब ऐसी वस्तु की पूर्ति को **इकाई लोचदार** पूर्ति कहा जाता है। उदाहरण के लिए यदि किसी वस्तु की क़ीमत में 100% की वृद्धि हुई जिससे उसकी पूर्ति में भी 100% की ही वृद्धि हो जाती है तब उसे लोचदार पूर्ति कहेंगे। चित्र 3.31 में जब वस्तु की क़ीमत OP है तब वस्तु की पूर्ति OQ है। जब वस्तु की क़ीमत OP1 हो जाती है तब वस्तु की पूर्ति बढ़कर OQ1 हो जाती है। चित्र से स्पष्ट है कि वस्तु की बढ़ी हुई क़ीमत तथा वस्तु की बढ़ी हुई पूर्ति एक दूसरे के बराबर हैं। अतः पूर्ति की लोच, इकाई के बराबर है।

चित्र 3.31

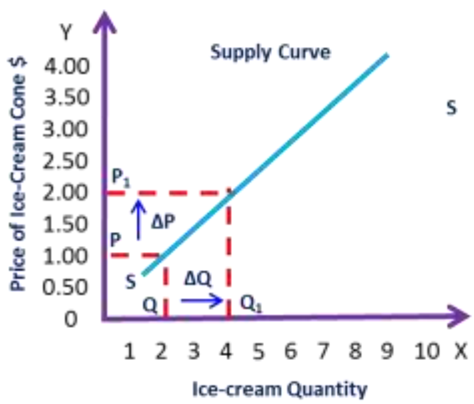

P=1 P_1=2 Q=2 Q_1=4

P_1-P=2-1 ΔP= 1 Q_1-Q=4-2 ΔQ= 2

$$E_S = \frac{\frac{Q_1 - Q}{Q} \times 100}{\frac{P_1 - P}{P} \times 100} = \frac{\frac{\Delta Q}{Q} \times 100}{\frac{\Delta P}{P} \times 100} = \frac{\text{पूर्ति में अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{कीमत में अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन}}$$

$$E_S = \frac{\frac{4-2}{2} \times 100}{\frac{2-1}{1} \times 100} = \frac{\frac{2}{2} \times 100}{\frac{1}{1} \times 100} = \frac{100\%}{100\%} = |1| \; Unitary\ Elastic\ Supply$$

(4) **बेलोचदार पूर्ति (Inelastic or Less Elastic Supply):** जब किसी वस्तु की पूर्ति में आनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन उस वस्तु की कीमत में होने वाले आनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन से कम होता है तो ऐसी दशा में पूर्ति की लोच बेलोचदार होती है अर्थात **इकाई से कम** होती है। इसे रेखा चित्र 3.32 द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। चित्र में जब वस्तु की क़ीमत OP है तब वस्तु की पूर्ति OQ है। लेकिन जब वस्तु की क़ीमत बढ़कर OP1 हो जाती है तब उसकी पूर्ति भी बढ़कर OQ1 हो जाती है। चित्र से स्पष्ट है कि वस्तु की क़ीमत में हुई वृद्धि की अपेक्षा उसकी पूर्ति में होने वाली वृद्धि कम है। अतः वस्तु की पूर्ति की लोच इकाई से कम है।

चित्र 3.32

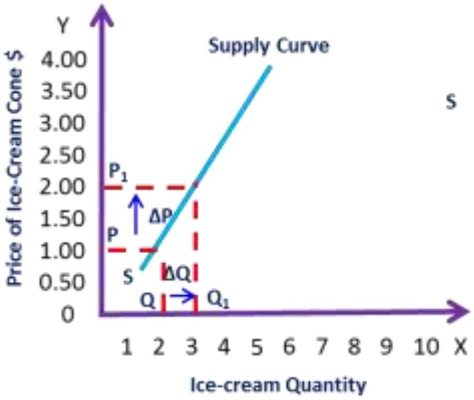

P=1 P_1=2 Q=2 Q_1=3

P_1-P=2-1 ΔP= 1 Q_1-Q=3-2 ΔQ=12

$$E_S = \frac{\frac{Q_1 - Q}{Q} \times 100}{\frac{P_1 - P}{P} \times 100} = \frac{\frac{\Delta Q}{Q} \times 100}{\frac{\Delta P}{P} \times 100} = \frac{\text{पूर्ति में अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{कीमत में अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन}}$$

$$E_S = \frac{\frac{3-2}{2} \times 100}{\frac{2-1}{1} \times 100} = \frac{\frac{1}{2} \times 100}{\frac{1}{1} \times 100} = \frac{50\%}{100\%} = |0.50|\ \textit{Inelastic Supply}$$

(5) **पूर्णतया बेलोचदार पूर्ति (Perfectly Inelastic Supply):** जब किसी वस्तु के मूल्य में पर्याप्त परिवर्तन होने पर भी उसकी पूर्ति में बिल्कुल कोई परिवर्तन नहीं होता तो ऐसी दशा को पूर्णता **बेलोचदार पूर्ति** कहा जाता है। क्योंकि पूर्ति में बिल्कुल परिवर्तन नहीं होता, इसीलिए ऐसी स्थिति को गणित की भाषा में Es=0 के द्वारा व्यक्त किया जाता है। इस प्रकार की पूर्ति में लोच का अभाव पाया जाता है। इसमें पूर्ति रेखा, आधार रेखा पर लंब की तरह दिखाई देती है। चित्र में SQ वस्तु की पूर्ति रेखा है। इसमें पूर्ति रेखा OY अक्ष के समांतर है। चित्र 3.33 से स्पष्ट है कि वस्तु की क़ीमत चाहे OP हो या OP1 हो, किन्तु वस्तु की पूर्ति OQ ही है। अर्थात उसकी पूर्ति में बिल्कुल भी परिवर्तन नहीं हो रहा है। अतः ऐसी स्थिति में पूर्ति की लोच शून्य होती है।

चित्र 3.33

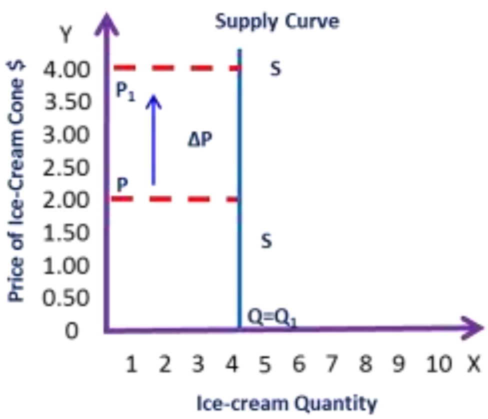

P=2 P_1=4 Q=4 Q_1=4

P_1-P=4-2 ΔP=2 Q_1-Q=4-4 ΔQ=0

$$E_S = \frac{\frac{Q_1 - Q}{Q} \times 100}{\frac{P_1 - P}{P} \times 100} = \frac{\frac{\Delta Q}{Q} \times 100}{\frac{\Delta P}{P} \times 100} = \frac{\text{पूर्ति में अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{कीमत में अनुपातिक या प्रतिशत परिवर्तन}}$$

$$E_S = \frac{\frac{4-4}{2} \times 100}{\frac{4-2}{2} \times 100} = \frac{\frac{0}{4} \times 100}{\frac{2}{2} \times 100} = \frac{0}{100} = |0|\ \textit{Perfectly Inelastic Supply}$$

3.7.1 पूर्ति की लोच को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affecting the Elasticity of Supply)

(1) वस्तु का स्वभाव - वस्तु का स्वभाव (प्रकृति) निश्चित रूप से उस वस्तु की पूर्ति की लोच को प्रभावित करता है। शीघ्र नष्ट होने वाली वस्तु की पूर्ति बेलोचदार होती है जबकि टिकाऊ वस्तुओं की पूर्ति लोचदार होती है।

(2) उत्पादन लागत - यदि किसी वस्तु के उत्पादन को बढ़ाने पर उस वस्तु के उत्पादन पर लगने वाली लागत बढ़ती जाती है तो वस्तु की क़ीमत बढ़ने पर भी उत्पादक उस वस्तु का उत्पादन नहीं बढ़ाना चाहेगा अर्थात उस वस्तु की पूर्ति को बढ़ाना नहीं चाहेगा। ऐसी स्थिति में पूर्ति की लोच बेलोचदार होगी। ठीक इसके विपरीत उत्पादन बढ़ाने

पर उत्पादन लागत यदि घटती जाती है तो उत्पादक निश्चित रूप से उस वस्तु का उत्पादन यानि कि पूर्ति को बढ़ाना चाहेगा। ऐसी स्थिति में पूर्ति लोचदार होगी।

(3) उत्पादन की तकनीक - उत्पादन की तकनीक भी पूर्ति की लोच पर प्रभाव डालती है। यदि वस्तु के उत्पादन की तकनीक सरल है तो वस्तु की पूर्ति लोचदार होगी। लेकिन यदि उस वस्तु के उत्पादन की तकनीक जटिल हो। तब उसकी पूर्ति बेलोचदार होगी। क्योंकि तब उस वस्तु की पूर्ति को आसानी से घटाया बढ़ाया नहीं जा सकेगा।
(4) बाज़ार की उपलब्धता - किसी वस्तु के लिए जितने अधिक बाज़ार उपलब्ध होंगे, उसकी आपूर्ति की लोच उतनी ही अधिक लोचदार होगी। ऐसी दशा में विक्रेता अपनी वस्तु की पूर्ति को कम-ज़्यादा करके भिन्न-भिन्न क़ीमतों पर बेच सकता है। इसके विपरीत, वस्तु के लिए यदि बाज़ार सीमित हों तब वस्तु की पूर्ति बेलोचदार होगी। क्योंकि ऐसी दशा में वस्तु का मूल्य घटे या बढ़े, उसे तो इसी बाज़ार में अपनी वस्तु बेचनी होगी।

(5) उत्पादन की समयावधि - किसी वस्तु के उत्पादन में लगने वाला समय, विशेष रूप से उस वस्तु की पूर्ति को प्रभावित करती है। समयावधि लंबी होने पर वस्तु की पूर्ति को घटाया बढ़ाया जा सकता है। जबकि अल्पकाल में यह संभव नहीं हो सकता है। अतः दीर्घकाल में पूर्ति की लोच, अधिक लोचदार होगी। जबकि अल्पकाल (अल्प समयावधि) में पूर्ति की लोच, अधिक बेलोचदार होगी।

3.8 Applications of Demand and Supply Analysis (मांग और पूर्ति विश्लेषण के अनुप्रयोग)

किसी भी वस्तु या सेवा की पूर्ति, वह मात्रा है जिसे विक्रेता बेचने के लिए तैयार और सक्षम होते हैं। पूर्ति की मात्रा के कई निर्धारिक हैं, लेकिन एक बार फिर, **कीमत** हमारे विश्लेषण में एक विशेष भूमिका निभाती है। जब आइसक्रीम की कीमत अधिक होती है, तो आइसक्रीम बेचना लाभदायक होता है, और इसलिए पूर्ति की मात्रा भी अधिक होती है। आइसक्रीम के विक्रेता लंबे समय तक काम करते हैं, कई आइसक्रीम बनाने वाली मशीनें खरीदते हैं, और कई श्रमिकों को काम पर रखते हैं। इसके विपरीत, जब आइसक्रीम की कीमत कम होती है, तो व्यवसाय कम लाभदायक होता है, इसलिए विक्रेता कम आइसक्रीम का उत्पादन करते हैं। कम कीमत पर, कुछ विक्रेता उत्पादन करना बंद भी कर सकते हैं, और उनकी पूर्ति की मात्रा शून्य हो सकती है। पूर्ति की गई मात्रा और कीमत के बीच के इस संबंध को **पूर्ति का नियम** कहा जाता है: अन्य चीजें समान होने पर, जब किसी वस्तु की कीमत बढ़ती है, तो वस्तु की पूर्ति भी बढ़ जाती है, और जब कीमत गिरती है, तो पूर्ति की गई मात्रा भी गिर जाती है।

3.8.1 Consumer's Surplus (उपभोक्ता अधिशेष)

हम बाजार में भाग लेने से खरीदारों को मिलने वाले लाभों को देखते हुए कल्याणकारी अर्थशास्त्र का अपना अध्ययन शुरू करते हैं।

3.8.1.1 Willingness to Pay (भुगतान करने की इच्छा)

कल्पना कीजिए कि आप एल्विस प्रेस्ली (Elvis Presley) के पहले एल्बम मिंट-कंडीशन की रिकॉर्डिंग के मालिक हैं। क्योंकि आप एल्विस प्रेस्ली के प्रशंसक (fan) नहीं हैं, आप इसे बेचने का फैसला करते हैं। ऐसा करने का एक तरीका मान लीजिए नीलामी आयोजित करना है अर्थात आप नीलामी सभा का आयोजन करते हैं । मान लीजिए आपकी नीलामी सभा में एल्विस प्रशंसक के चार पहुंचते हैं: जॉन, पॉल, जॉर्ज और रिंगो। उनमें से प्रत्येक एल्बम का स्वामी बनना चाहेगा अर्थात एल्बम खरीदना चाहते है, लेकिन उस राशि की एक सीमा है जो प्रत्येक इसके लिए

भुगतान करने को तैयार है। तालिका 3.7 उस अधिकतम कीमत को दिखाती है जो चार संभावित खरीदारों में से प्रत्येक को चुकानी होगी।

तालिका 3.7

Four Possible Buyers' Willingness to Pay

Buyer	Willingness to Pay
John	$100
Paul	80
George	70
Ringo	50

प्रत्येक क्रेता की अधिकतम कीमत भुगतान करने की उसकी इच्छा को दर्शाती है, और यह मापती है कि क्रेता वस्तु को कितना महत्व देता है। प्रत्येक क्रेता भुगतान करने की इच्छा से कम कीमत पर एल्बम खरीदने के लिए उत्सुक होगा, और वह भुगतान करने की इच्छा से अधिक कीमत पर एल्बम खरीदने से इंकार कर देगा। भुगतान करने की अपनी इच्छा के बराबर कीमत पर, क्रेता वस्तु खरीदने के बारे में उदासीन होगा: यदि कीमत एल्बम पर रखे गए मूल्य के समान ही है, तो वह इसे खरीदने या अपने पैसे रखने में समान रूप से खुश होगा।

अपने एल्बम को बेचने के लिए, आप कम कीमत पर बोली लगाना शुरू करते हैं, कहते हैं, $10। चूंकि सभी चार क्रेता अधिक भुगतान करने को तैयार हैं, कीमत तेजी से बढ़ती है। जब जॉन $80 (या थोड़ा अधिक) बोली लगाता है तो बोली बंद हो जाती है। इस बिंदु पर, पॉल, जॉर्ज और रिंगो बोली से बाहर हो गए हैं क्योंकि वे $80 से अधिक की बोली लगाने के इच्छुक नहीं हैं। जॉन आपको $80 का भुगतान करता है और एल्बम प्राप्त करता है। ध्यान दें कि एल्बम उस खरीदार के पास गया है जो इसे सबसे अधिक महत्व देता है। एल्विस प्रेस्ली की एल्बम खरीदने से जॉन को क्या लाभ मिलता है? एक मायने में, जॉन ने एक वास्तविक सौदा किया है: वह एल्बम के लिए $100 का भुगतान करने को तैयार है, लेकिन इसके लिए केवल $80 का भुगतान करता है। हम कहते हैं कि जॉन $20 का **उपभोक्ता अधिशेष** प्राप्त करता है। **उपभोक्ता अधिशेष** वह राशि है जो एक क्रेता एक वस्तु के लिए भुगतान करने को तैयार है – (minus) जो कि क्रेता वास्तव में इसके लिए भुगतान करता है। उपभोक्ता अधिशेष एक बाजार में भाग लेने से खरीदारों को मिलने वाले लाभ को मापता है। इस उदाहरण में, जॉन को नीलामी में भाग लेने से $20 का लाभ प्राप्त होता है क्योंकि वह $100 मूल्य की वस्तु के लिए केवल $80 का भुगतान करता है। पॉल, जॉर्ज और रिंगो को नीलामी में भाग लेने से कोई उपभोक्ता अधिशेष नहीं मिलता है क्योंकि वे बिना एल्बम के और कुछ भी भुगतान किए बिना चले गए।

उपभोक्ता अधिशेष = वह राशि है जो एक क्रेता एक वस्तु के लिए भुगतान करने को तैयार है - वह राशि जो कि क्रेता वास्तव में इसके लिए भुगतान करता है

अब थोड़ा अलग उदाहरण पर विचार करें। मान लीजिए कि आपके पास बेचने के लिए दो समान एल्विस प्रेस्ली एल्बम थे और फिर से, आप उन्हें चार संभावित खरीदारों को नीलाम कर देते हैं। चीजों को सरल रखने के लिए, हम मानते हैं कि दोनों एल्बमों को एक ही कीमत पर बेचा जाना है और कोई भी खरीदार एक से अधिक एल्बम खरीदने में दिलचस्पी नहीं रखता है। इसलिए, कीमत तब तक बढ़ती है जब तक कि दो खरीदार नहीं रह जाते। इस मामले

में, जब जॉन और पॉल $70 (या थोड़ा अधिक) की बोली लगाते हैं तो बोली बंद हो जाती है। इस कीमत पर, जॉन और पॉल दोनों एक एल्बम ख़रीद कर खुश हैं, और जॉर्ज और रिंगो इससे ज़्यादा बोली लगाने को तैयार नहीं हैं। जॉन और पॉल प्रत्येक उपभोक्ता अधिशेष प्राप्त करते हैं, जो कि कीमत घटा (-) भुगतान करने की उनकी इच्छा के बराबर है। जॉन का उपभोक्ता अधिशेष $30 है, और पॉल का $10 है। जॉन का उपभोक्ता अधिशेष पिछले उदाहरण की तुलना में अब अधिक है क्योंकि उसे वही एल्बम मिलता है लेकिन वह इसके लिए कम भुगतान करता है। बाजार में कुल उपभोक्ता अधिशेष $40 है।

3.8.1.2 Using the Demand Curve to Measure Consumer Surplus (उपभोक्ता अधिशेष को मापने के लिए मांग वक्र का उपयोग करना)

उपभोक्ता अधिशेष मांग वक्र से निकटता से संबंधित है। यह देखने के लिए कि वे कैसे संबंधित हैं, आइए अपना उदाहरण जारी रखें और इस दुर्लभ एल्विस प्रेस्ली एल्बम के लिए मांग वक्र पर विचार करें। हम ऐल्बम के लिए बाज़ार की मांग का पता लगाने के लिए चार संभावित क्रेताओं को भुगतान करने की इच्छा का उपयोग करके शुरू करते हैं। चित्र 3.34 में तालिका 3.7 के अनुरूप मांग अनुसूची दिखाई गई है। यदि कीमत $ 100 से ऊपर है, तो बाजार में मांग की गई मात्रा 0 है क्योंकि कोई भी खरीदार इतना भुगतान करने को तैयार नहीं है। यदि कीमत $80 और $100 के बीच है, तो मांग की गई मात्रा 1 है क्योंकि केवल जॉन ही इतनी अधिक कीमत चुकाने को तैयार है। यदि कीमत $70 और $80 के बीच है, तो मांग की गई मात्रा 2 है क्योंकि जॉन और पॉल दोनों कीमत चुकाने को तैयार हैं। हम इस विश्लेषण को अन्य कीमतों के लिए भी जारी रख सकते हैं। इस तरह, मांग अनुसूची चार संभावित क्रेताओं की भुगतान करने की इच्छा को दर्शाती है से ली गई है। चित्र 3.34 में ग्राफ, मांग वक्र दिखाता है जो इस मांग अनुसूची से मेल खाता है। मांग वक्र की ऊंचाई और क्रेता की भुगतान करने की इच्छा के बीच संबंध पर ध्यान दें। किसी भी मात्रा पर, मांग वक्र द्वारा दी गई कीमत सीमांत क्रेता (marginal buyer) की भुगतान करने की इच्छा को दर्शाता है, सीमांत क्रेता वह होता है जो कीमत जरा सी भी अधिक होने पर पहले बाजार छोड़ देगा। उदाहरण के लिए, 4 एल्बमों की मात्रा में, मांग वक्र की ऊंचाई $50 है, वह कीमत जो रिंगो (सीमांत खरीदार) एक एल्बम के लिए भुगतान करने को तैयार है। 3 एल्बमों की मात्रा में, मांग वक्र की ऊंचाई $70 है, वह कीमत जो जॉर्ज (जो अब सीमांत खरीदार है) भुगतान करने को तैयार है।

चित्र 3.34

The Demand Schedule and the Demand Curve

The table shows the demand schedule for the buyers (listed in Table 1) of the mint-condition copy of Elvis Presley's first album. The graph shows the corresponding demand curve. Note that the height of the demand curve reflects the buyers' willingness to pay.

Price	Buyers	Quantity Demanded
More than $100	None	0
$80 to $100	John	1
$70 to $80	John, Paul	2
$50 to $70	John, Paul, George	3
$50 or less	John, Paul, George, Ringo	4

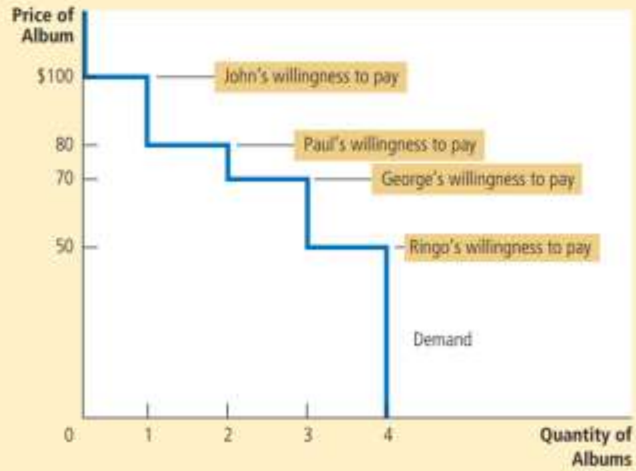

क्योंकि मांग वक्र क्रेताओं की भुगतान करने की इच्छा को दर्शाता है, हम इसका उपयोग उपभोक्ता अधिशेष को मापने के लिए भी कर सकते हैं। चित्र 3.35 हमारे दो उदाहरणों में उपभोक्ता अधिशेष की गणना करने के लिए मांग वक्र का उपयोग करता है। पैनल (a) में, कीमत $80 (या थोड़ा ऊपर) है और मांग की गई मात्रा 1 है। ध्यान दें कि कीमत के ऊपर और मांग वक्र के नीचे का क्षेत्र $20 के बराबर है। **यह राशि उपभोक्ता अधिशेष** है जिसकी गणना हमने पहले की थी जब केवल 1 एल्बम बेचा जाता था। चित्र 3.35 का पैनल (b) उपभोक्ता अधिशेष दिखाता है जब कीमत 70 डॉलर (या थोड़ा ऊपर) होती है। इस मामले में, कीमत के ऊपर और मांग वक्र के नीचे का क्षेत्र दो आयतों के कुल क्षेत्रफल के बराबर होता है: इस कीमत पर जॉन का उपभोक्ता अधिशेष $30 है और पॉल $ 10 है। यह क्षेत्र कुल $40 के बराबर है। एक बार फिर, यह राशि उपभोक्ता अधिशेष है जिसकी हमने पहले गणना की थी। इस उदाहरण से सबक सभी मांग वक्रों के लिए है: मांग वक्र के नीचे का क्षेत्र और कीमत से ऊपर का क्षेत्र बाजार में उपभोक्ता अधिशेष को मापता है। यह सच है क्योंकि मांग वक्र की ऊंचाई क्रेताओं के मूल्य को अच्छी तरह से मापती है, जैसा कि इसके लिए भुगतान करने की उनकी इच्छा से पता लगता है। भुगतान करने की इस इच्छा और बाजार मूल्य के बीच का अंतर प्रत्येक क्रेता का उपभोक्ता अधिशेष है। इस प्रकार, मांग वक्र के नीचे और कीमत से ऊपर का कुल क्षेत्रफल बाजार में एक वस्तु या सेवा के लिए सभी खरीदारों के उपभोक्ता अधिशेष का योग है।

चित्र 3.35

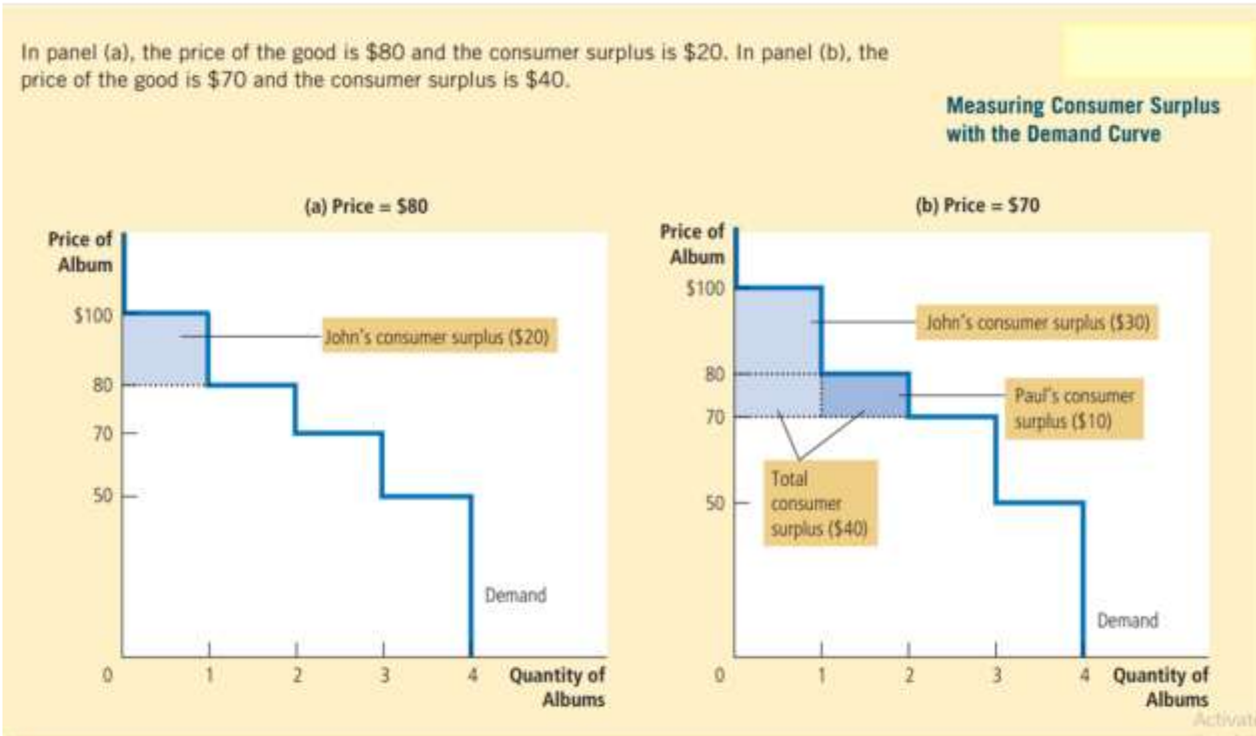

3.8.1.3 How a Lower Price Raises Consumer Surplus (कम कीमत कैसे उपभोक्ता अधिशेष को बढ़ाती है)

क्योंकि क्रेता हमेशा उन वस्तुओं के लिए कम भुगतान करना चाहते हैं जो वे खरीदते हैं, कम कीमत क्रेताओं को अच्छी स्थिति में लाती है। लेकिन कम कीमत की प्रतिक्रिया में क्रेताओं का कितना भला होता है? हम इस प्रश्न का सटीक उत्तर देने के लिए उपभोक्ता अधिशेष की अवधारणा का उपयोग कर सकते हैं।

चित्र 3.36 एक विशिष्ट मांग वक्र दर्शाता है। आप देख सकते हैं कि यह वक्र पिछले दो चित्रों की तरह असतत कदम उठाने के बजाय धीरे-धीरे नीचे की ओर झुकता है। कई क्रेताओं के साथ एक बाजार में, प्रत्येक क्रेता के बाहर निकलने के परिणाम इतने छोटे होते हैं कि वे संक्षेप में, एक निर्विघ्न वक्र (smooth curve) बनाते हैं। हालांकि इस वक्र का एक अलग आकार है, जो विचार हमने अभी विकसित किए हैं वे अभी भी लागू होते हैं: उपभोक्ता अधिशेष मूल्य से ऊपर और मांग वक्र के नीचे का क्षेत्र है। पैनल (a) में, P1 कीमत पर उपभोक्ता अधिशेष त्रिभुज ABC का क्षेत्र है। अब मान लीजिए कि कीमत P1 से गिरकर P2 हो जाती है, जैसा कि पैनल (b) में दिखाया गया है। उपभोक्ता अधिशेष अब क्षेत्र ADF के बराबर है। कम कीमत के कारण उपभोक्ता अधिशेष में वृद्धि BCFD क्षेत्र है। उपभोक्ता अधिशेष में यह वृद्धि दो भागों से बनी है। सबसे पहले, वे क्रेता जो पहले से ही उच्च कीमत P1 पर वस्तु की Q1 मात्रा खरीद रहे थे, बेहतर हो गए हैं क्योंकि वे अब कम भुगतान कर रहे हैं। मौजूदा क्रेताओं के उपभोक्ता अधिशेष में वृद्धि उनके द्वारा भुगतान की जाने वाली राशि में कमी होना भी है; यह आयत BCED के क्षेत्रफल के बराबर है। दूसरा कारण, कुछ नए क्रेता बाजार में प्रवेश करते हैं क्योंकि वे कम कीमत पर वस्तु खरीदना चाहते हैं। परिणामस्वरूप, बाजार में मांग की मात्रा Q1 से Q2 तक बढ़ जाती है। इन नवागंतुकों (new comers) को प्राप्त होने वाला उपभोक्ता अधिशेष त्रिभुज CEF का क्षेत्रफल है।

चित्र 3.36

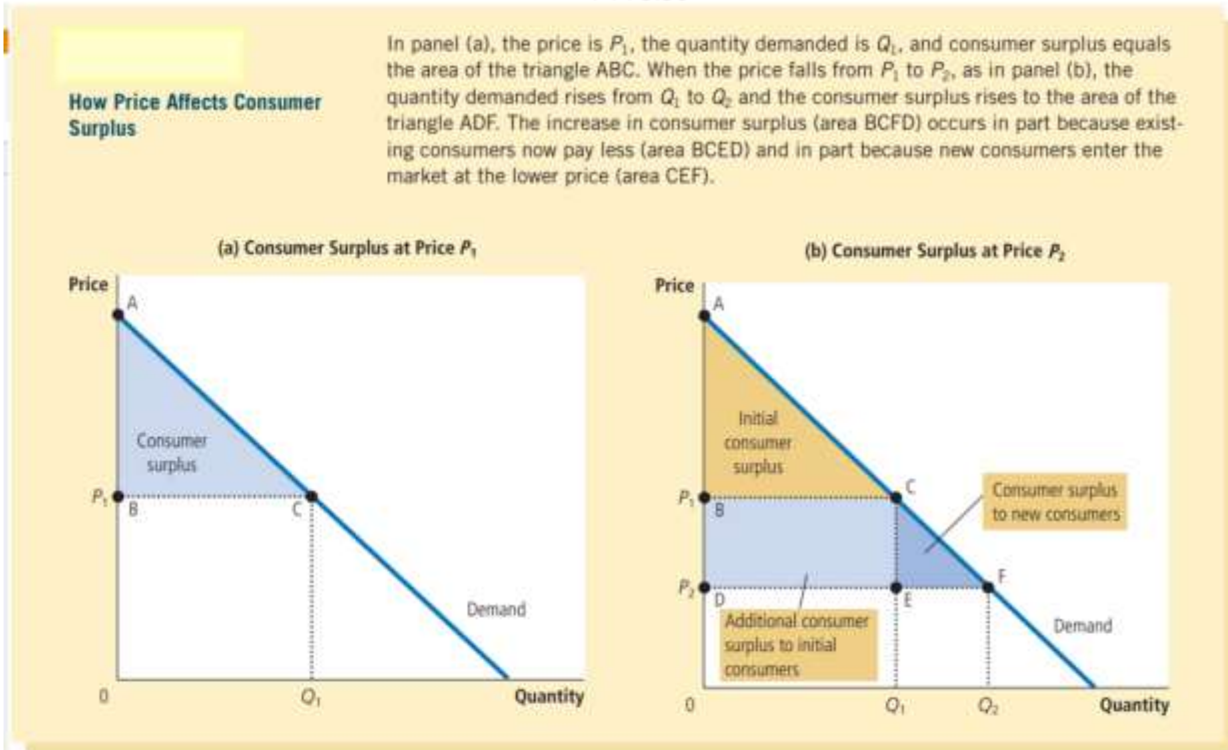

3.8.1.4 What Does Consumer Surplus Measure? (उपभोक्ता अधिशेष क्या मापता है?)

उपभोक्ता अधिशेष की अवधारणा को विकसित करने में हमारा लक्ष्य बाजार के परिणामों की वांछनीयता के बारे में निर्णय करना है। अब जब आप देख चुके हैं कि उपभोक्ता अधिशेष क्या है, तो आइए विचार करें कि क्या यह आर्थिक कल्याण का एक अच्छा माप है।

कल्पना कीजिए कि आप एक नीति निर्माता हैं जो एक अच्छी आर्थिक प्रणाली तैयार करने की कोशिश कर रहे हैं। क्या आप उपभोक्ता अधिशेष की मात्रा की परवाह करेंगे? उपभोक्ता अधिशेष, वह राशि जो एक क्रेता भुगतान करने को तैयार हैं,- (minus) वह राशि जो वे वास्तव में इसके लिए भुगतान करते हैं, उस लाभ को मापता है जो क्रेताओं को एक वस्तु से प्राप्त होता है जैसा कि क्रेता स्वयं इसे समझते हैं। इस प्रकार, उपभोक्ता अधिशेष आर्थिक भलाई का एक अच्छा माप है यदि नीति निर्माता क्रेताओं की प्राथमिकताओं का सम्मान करना चाहते हैं। कुछ परिस्थितियों में, नीति निर्माता उपभोक्ता अधिशेष की अवहेलना करना चुन सकते हैं क्योंकि वे क्रेता व्यवहार को चलाने वाली प्राथमिकताओं का सम्मान नहीं करते हैं। उदाहरण के लिए, नशा करने वाले हेरोइन के लिए एक उच्च कीमत चुकाने को तैयार हैं। फिर भी हम यह नहीं कहेंगे कि व्यसनियों को कम कीमत पर हेरोइन खरीदने में सक्षम होने से बड़ा लाभ मिलता है (भले ही नशेड़ी कह सकते हैं कि वे ऐसा करते हैं)। समाज के दृष्टिकोण से, इस उदाहरण में भुगतान करने की इच्छा क्रेताओं के लाभ का एक अच्छा माप नहीं है, और उपभोक्ता अधिशेष आर्थिक कल्याण का एक अच्छा माप नहीं है, क्योंकि नशेड़ी अपने स्वयं के सर्वोत्तम हितों की देखभाल नहीं कर रहे हैं। अधिकांश बाजारों में, हालांकि, उपभोक्ता अधिशेष आर्थिक कल्याण को दर्शाता है। अर्थशास्त्री आमतौर पर यह मानते हैं कि क्रेता निर्णय लेते समय तर्कसंगत होते हैं। तर्कसंगत लोग अपने अवसरों को देखते हुए अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए हर संभव कोशिश करते हैं। अर्थशास्त्री भी आमतौर पर यह मानते हैं कि लोगों की प्राथमिकताओं का सम्मान किया

जाना चाहिए। इस मामले में, उपभोक्ता सबसे अच्छे न्यायाधीश होते हैं क्योंकि वे जानते हैं कि अपने द्वारा खरीदे गए सामान से कितना लाभ प्राप्त कर रहे हैं।

3.8.2 Producer's Surplus (उत्पादक का अधिशेष)

अब हम बाजार के दूसरे पक्ष की ओर मुड़ते हैं और उन लाभों पर विचार करते हैं जो विक्रेताओं को बाजार में भाग लेने से प्राप्त होते हैं। जैसा कि आप देखेंगे, विक्रेताओं के कल्याण का हमारा विश्लेषण क्रेताओं के कल्याण के हमारे विश्लेषण के समान है।

3.8.2.1 Cost and the Willingness to Sell (लागत और बेचने की इच्छा)

अब कल्पना कीजिए कि आप एक गृहस्वामी (household) हैं और आप अपने घर को रंगना चाहते हैं। आप पेंटिंग सेवाओं के चार विक्रेताओं की ओर मुड़ते हैं: मैरी, फ्रिडा, जॉर्जिया और ग्रंड्मा। अगर कीमत सही है तो हर पेंटर आपके लिए काम करने को तैयार है। आप चार चित्रकारों painters (विक्रेताओं) से बोलियां लेने और उस चित्रकार painter (विक्रेता) को काम नीलाम करने का निर्णय लेते हैं जो सबसे कम कीमत पर काम करेगा। प्रत्येक चित्रकार painter (विक्रेता) काम लेने के लिए तैयार होता है यदि उसे प्राप्त होने वाली कीमत काम करने की उसकी लागत से अधिक हो जाती है। यहां शब्द लागत को चित्रकारों painters (विक्रेताओं) की अवसर लागत के रूप में व्याख्या किया जाना चाहिए: इसमें चित्रकारों painters के आउट-ऑफ-पॉकेट खर्च (पेंट, ब्रश आदि के लिए) के साथ-साथ वह मूल्य भी शामिल है जो चित्रकार painter अपने समय पर रखते हैं। तालिका 3.8 प्रत्येक चित्रकार की लागत दर्शाती है। क्योंकि एक चित्रकार की लागत वह न्यूनतम कीमत है जिसे वह अपने काम के लिए स्वीकार करेगी, लागत उसकी सेवाओं को बेचने की उसकी इच्छा का एक माप है।

तालिका 3.8

The Costs of Four Possible Sellers

Seller	Cost
Mary	$900
Frida	800
Georgia	600
Grandma	500

प्रत्येक चित्रकार अपनी सेवाओं को अपनी लागत से अधिक कीमत पर बेचने के लिए उत्सुक होगा और अपनी सेवाओं को अपनी लागत से कम कीमत पर बेचने से इंकार कर देगा। अपनी लागत के बराबर कीमत पर, वह अपनी सेवाओं को बेचने के प्रति उदासीन होगी: वह नौकरी पाने या किसी अन्य उद्देश्य के लिए अपने समय और ऊर्जा का उपयोग करने के लिए समान रूप से खुश होगी। जब आप चित्रकारों से बोलियां लेते हैं, तो कीमत ऊंची शुरू हो सकती है, लेकिन यह जल्दी ही गिर जाती है क्योंकि चित्रकार काम के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। एक बार जब ग्रंड्मा ने $600 (या थोड़ा कम) की बोली लगा दी, तो वह एकमात्र शेष बोलीदाता है। इस कीमत पर काम करने में ग्रंड्मा खुश हैं क्योंकि उनकी लागत केवल $500 है। मैरी, फ्रीडा और जॉर्जिया $ 600 से कम में काम करने को तैयार नहीं हैं। ध्यान दें कि काम उस पेंटर के पास जाता है जो सबसे कम कीमत पर काम कर सकता है। ग्रंड्मा को नौकरी मिलने से क्या लाभ होता है? क्योंकि वह $500 के लिए काम करने को तैयार है लेकिन उसे करने के लिए

$600 मिलते हैं, हम कहते हैं कि उसे **$ 100** का **निर्माता अधिशेष** प्राप्त होता है। **उत्पादक अधिशेष वह राशि है जिसे विक्रेता को उत्पादन की लागत घटाकर भुगतान किया जाता है।** उत्पादक अधिशेष एक बाजार में भाग लेने से विक्रेताओं को प्राप्त होने वाले लाभ को मापता है। अब थोड़ा अलग उदाहरण पर विचार करें। मान लीजिए कि आपके पास दो घर हैं जिन पर आप कली paint करवाना चाहते हैं । फिर से, आप चार चित्रकारों को नौकरियों की नीलामी करते हैं। चीजों को सरल रखने के लिए, मान लें कि कोई भी चित्रकार दोनों घरों को पेंट करने में सक्षम नहीं है और आप प्रत्येक घर को पेंट करने के लिए समान राशि का भुगतान करेंगे। इसलिए, कीमत तब तक गिरती है जब तक कि दो चित्रकार painters नहीं रह जाते। इस मामले में, बोली लगाना बंद हो जाता है जब जॉर्जिया और ग्रंड्मा प्रत्येक $800 (या थोड़ा कम) की कीमत पर काम करने की पेशकश करते हैं। जॉर्जिया और ग्रंड्मा इस कीमत पर काम करने को तैयार हैं, जबकि मैरी और फ्रिडा कम कीमत की बोली लगाने को तैयार नहीं हैं। $800 की कीमत पर, ग्रंड्मा को $300 का उत्पादक अधिशेष मिलता है और जॉर्जिया को $200 का उत्पादक अधिशेष मिलता है। बाजार में कुल उत्पादक अधिशेष $500 है।

3.8.2.2 Using the Supply Curve to Measure Producer Surplus (उत्पादक अधिशेष को मापने के लिए पूर्ति वक्र का उपयोग करना)

जैसे उपभोक्ता अधिशेष मांग वक्र से निकटता से संबंधित है, उत्पादक अधिशेष पूर्ति वक्र से निकटता से संबंधित है। यह देखने के लिए कि कैसे, आइए अपना उदाहरण जारी रखें। हम पेंटिंग सेवाओं के लिए पूर्ति अनुसूची खोजने के लिए चार चित्रकारों की लागत का उपयोग करके शुरू करते हैं। चित्र 3.37 की तालिका पूर्ति अनुसूची को दिखाती है जो तालिका 2 की लागतों से मेल खाती है।

चित्र 3.37

The Supply Schedule and the Supply Curve

The table shows the supply schedule for the sellers (listed in Table 2) of painting services. The graph shows the corresponding supply curve. Note that the height of the supply curve reflects the sellers' costs.

Price	Sellers	Quantity Supplied
$900 or more	Mary, Frida, Georgia, Grandma	4
$800 to $900	Frida, Georgia, Grandma	3
$600 to $800	Georgia, Grandma	2
$500 to $600	Grandma	1
Less than $500	None	0

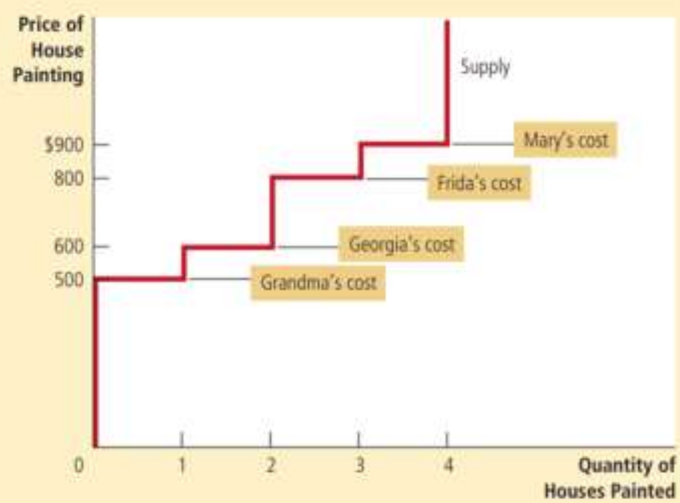

यदि कीमत $500 से कम है, तो चार चित्रकारों में से कोई भी काम करने के लिए तैयार नहीं है, इसलिए पूर्ति की मात्रा शून्य है। यदि कीमत $500 और $600 के बीच है, तो केवल ग्रंड्मा ही काम करने के लिए तैयार हैं, इसलिए

पूर्ति की गई मात्रा 1 है। यदि कीमत $600 और $800 के बीच है, तो ग्रंड्मा और जॉर्जिया काम करने को तैयार हैं, इसलिए पूर्ति की गई मात्रा 2 है , और इसी तरह। इस प्रकार, पूर्ति अनुसूची चार चित्रकारों की लागत से प्राप्त होती है। चित्र 4 में ग्राफ पूर्ति वक्र दिखाता है जो इस पूर्ति अनुसूची से मेल खाता है। ध्यान दें कि पूर्ति वक्र की ऊंचाई विक्रेता की लागत से संबंधित है। किसी भी मात्रा में, पूर्ति वक्र द्वारा दी गई कीमत सीमांत विक्रेता की लागत को दर्शाती है, विक्रेता जो कीमत कम होने पर पहले बाजार छोड़ देगा। उदाहरण के लिए, 4 घरों की मात्रा पर, पूर्ति वक्र की ऊंचाई $900 है, वह लागत जो मैरी (सीमांत विक्रेता) को अपनी पेंटिंग सेवाएं प्रदान करने के लिए खर्च करनी पड़ती है। 3 घरों की मात्रा पर, पूर्ति वक्र की ऊंचाई $800 है, जो कि फ्रिडा (जो अब सीमांत विक्रेता है) की लागत है।

क्योंकि पूर्ति वक्र विक्रेताओं की लागत को दर्शाता है, हम इसका उपयोग निर्माता अधिशेष को मापने के लिए कर सकते हैं। चित्र 3.38 हमारे दो उदाहरणों में निर्माता अधिशेष की गणना करने के लिए पूर्ति वक्र का उपयोग करता है। पैनल (a) में, हम मानते हैं कि कीमत $600 (या थोड़ा कम) है। इस मामले में, पूर्ति की मात्रा 1 है। ध्यान दें कि कीमत के नीचे और पूर्ति वक्र के ऊपर का क्षेत्र $100 के बराबर है। यह राशि वास्तव में निर्माता अधिशेष है जिसे हमने ग्रंड्मा के लिए पहले गणना की थी। चित्र 3.38 का पैनल (b) $800 (या थोड़ा कम) की कीमत पर निर्माता अधिशेष दिखाता है। इस मामले में, कीमत के नीचे और पूर्ति वक्र के ऊपर का क्षेत्र दो आयतों के कुल क्षेत्रफल के बराबर होता है। यह क्षेत्र $500 के बराबर है, निर्माता अधिशेष की गणना हमने पहले जॉर्जिया और ग्रंड्मा के लिए की थी जब दो घरों को पेंटिंग की आवश्यकता थी। इस उदाहरण से सबक सभी पूर्ति वक्रों पर लागू होता है: कीमत के नीचे और पूर्ति वक्र के ऊपर का क्षेत्र एक बाजार में निर्माता के अधिशेष को मापता है। तर्क सीधा है: पूर्ति वक्र की ऊंचाई विक्रेताओं की लागतों को मापती है, और कीमत और उत्पादन लागत के बीच का अंतर प्रत्येक विक्रेता का उत्पादक अधिशेष है। इस प्रकार, कुल क्षेत्रफल सभी विक्रेताओं के उत्पादक अधिशेष का योग है।

चित्र 3.38

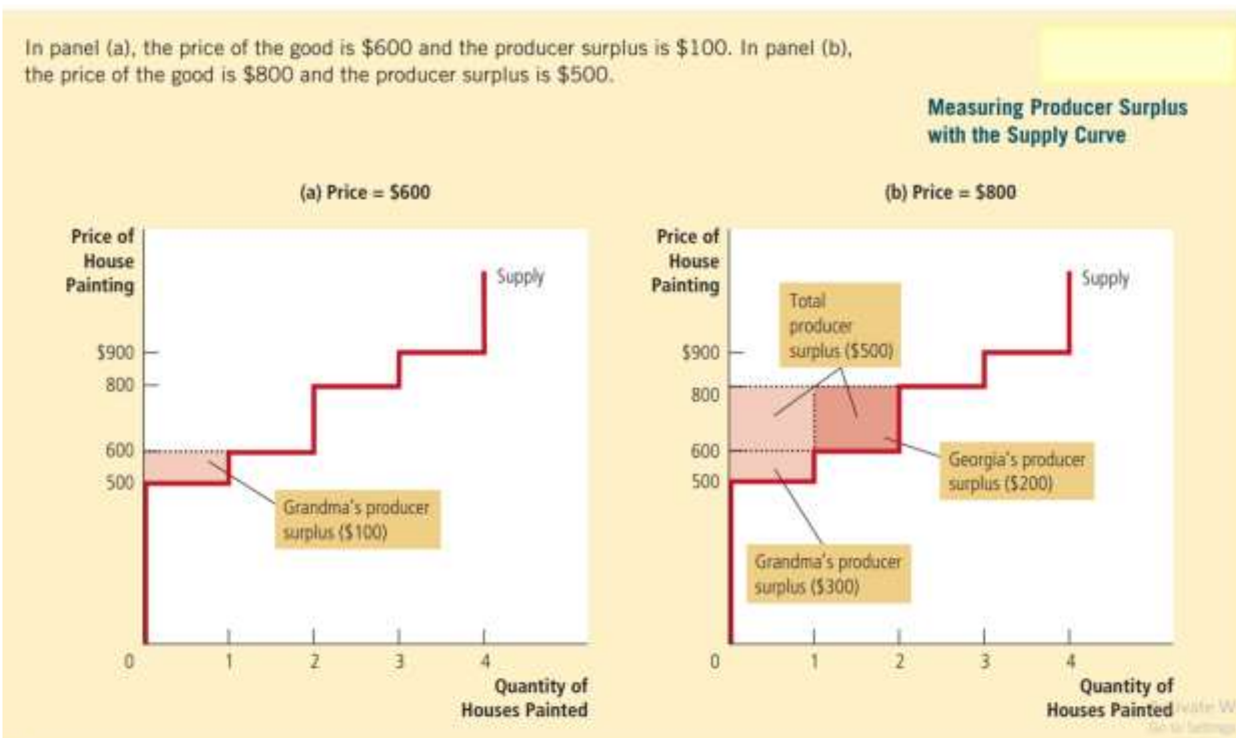

3.8.2.3 How a Higher Price Raises Producer Surplus (कैसे एक उच्च कीमत निर्माता अधिशेष को बढ़ाती है)

आपको यह सुनकर आश्चर्य नहीं होगा कि विक्रेता हमेशा अपने द्वारा बेची जाने वाली वस्तुओं के लिए अधिक कीमत प्राप्त करना चाहते हैं। लेकिन अधिक कीमत के जवाब में विक्रेताओं की भलाई कितनी बढ़ जाती है? निर्माता अधिशेष की अवधारणा इस प्रश्न का सटीक उत्तर प्रदान करती है। चित्र 3.39 एक विशिष्ट ऊपर की ओर झुका हुआ आपूर्ति वक्र दिखाता है जो कई विक्रेताओं के साथ एक बाजार में उत्पन्न होगा। हालांकि यह पूर्ति वक्र पिछले चित्र से आकार में भिन्न है, हम निर्माता अधिशेष को उसी तरह मापते हैं: निर्माता अधिशेष कीमत के नीचे और आपूर्ति वक्र के ऊपर का क्षेत्र है। पैनल (a) में, कीमत P1 है और निर्माता अधिशेष त्रिकोण/ त्रिभुज ABC का क्षेत्र है। पैनल (b) दिखाता है कि क्या होता है जब कीमत P1 से P2 तक बढ़ जाती है। निर्माता अधिशेष अब क्षेत्रफल ADF के बराबर है। उत्पादक अधिशेष में इस वृद्धि के दो भाग हैं। सबसे पहले, वे विक्रेता जो पहले से ही Q1 को कम कीमत P1 पर बेच रहे थे, बेहतर स्थिति में हैं क्योंकि अब वे जो बेचते हैं उसके लिए उन्हें अधिक मिलता है। मौजूदा विक्रेताओं के लिए निर्माता अधिशेष में वृद्धि आयत BCED के क्षेत्रफल के बराबर है। दूसरा, कुछ नए विक्रेता बाजार में प्रवेश करते हैं क्योंकि वे उच्च कीमत पर वस्तु का उत्पादन करने के इच्छुक होते हैं, जिसके परिणामस्वरूप आपूर्ति की मात्रा Q1 से Q2 तक बढ़ जाती है। इन नवागंतुकों का उत्पादक अधिशेष त्रिभुज CEF का क्षेत्रफल है। जैसा कि इस विश्लेषण से पता चलता है, हम विक्रेताओं की भलाई को मापने के लिए निर्माता अधिशेष का उपयोग उसी तरह करते हैं जैसे हम खरीदारों की भलाई को मापने के लिए उपभोक्ता अधिशेष का उपयोग करते हैं। क्योंकि आर्थिक कल्याण के ये दो माप इतने समान हैं, इनका एक साथ उपयोग करना स्वाभाविक है। और वास्तव में, ठीक यही हम अगले भाग में करते हैं।

चित्र 3.39

How Price Affects Producer Surplus

In panel (a), the price is P_1, the quantity demanded is Q_1, and producer surplus equals the area of the triangle ABC. When the price rises from P_1 to P_2, as in panel (b), the quantity supplied rises from Q_1 to Q_2 and the producer surplus rises to the area of the triangle ADF. The increase in producer surplus (area BCFD) occurs in part because existing producers now receive more (area BCED) and in part because new producers enter the market at the higher price (area CEF).

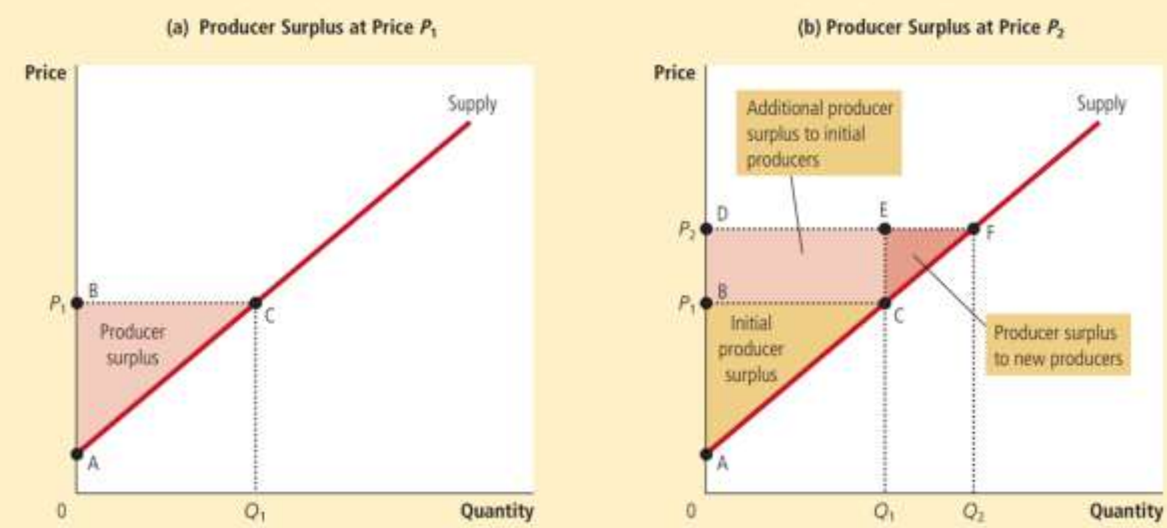

3.8.3 Market Efficiency (बाज़ार की कार्यक्षमता)

उपभोक्ता अधिशेष और उत्पादक अधिशेष बुनियादी उपकरण हैं जिनका अर्थशास्त्री बाजार में क्रेताओं और विक्रेताओं के कल्याण का अध्ययन करने के लिए उपयोग करते हैं। ये उपकरण मूलभूत आर्थिक प्रश्न को हल करने में हमारी सहायता कर सकते हैं: जैसे कि, क्या मुक्त बाजारों द्वारा निर्धारित संसाधनों का आवंटन वांछनीय है?

3.8.3.1 The Benevolent Social Planner (एक परोपकारी सामाजिक नियोजक)

बाजार के परिणामों का मूल्यांकन करने के लिए, हम अपने विश्लेषण में एक नए, काल्पनिक चरित्र का परिचय देते हैं जिसे परोपकारी सामाजिक योजनाकार (benevolent social planner) कहा जाता है। परोपकारी सामाजिक योजनाकार एक सर्वज्ञ, सर्वशक्तिशाली, सुविचारित तानाशाह है। योजनाकार समाज में सभी के आर्थिक कल्याण को अधिकतम करना चाहता है। इस योजनाकार को क्या करना चाहिए? क्या उसे खरीदारों और विक्रेताओं को सिर्फ उस संतुलन बिंदु पर छोड़ देना चाहिए जिस तक वे स्वाभाविक रूप से अपने आप पहुंच सकें? या क्या वह किसी तरह से बाजार के परिणाम बदलकर आर्थिक कल्याण में वृद्धि कर सकती है?

इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए, योजनाकार को सबसे पहले यह तय करना होगा कि किसी समाज के आर्थिक कल्याण को कैसे मापना है। **एक संभावित माप उपभोक्ता अधिशेष और उत्पादक अधिशेष का योग है**, जिसे हम **कुल अधिशेष** कहते हैं। उपभोक्ता अधिशेष वह लाभ है जो क्रेता बाजार में भाग लेने से प्राप्त करते हैं, और निर्माता अधिशेष वह लाभ है जो विक्रेता प्राप्त करते हैं। इसलिए समाज के आर्थिक कल्याण के माप के रूप में कुल अधिशेष का उपयोग करना स्वाभाविक है।

आर्थिक कल्याण के इस माप को बेहतर ढंग से समझने के लिए, याद करें कि हम उपभोक्ता और उत्पादक अधिशेष को कैसे मापते हैं। हम उपभोक्ता अधिशेष को परिभाषित करते हैं

उपभोक्ता अधिशेष = क्रेताओं के लिए मूल्य - क्रेताओं द्वारा भुगतान की गई राशि

(Consumer surplus = Value to buyers -Amount paid by buyers)

इसी प्रकार, हम निर्माता अधिशेष को परिभाषित करते हैं

निर्माता अधिशेष = विक्रेताओं द्वारा प्राप्त राशि- विक्रेताओं को लागत।

(Producer surplus = Amount received by sellers- Cost to sellers)

जब हम उपभोक्ता और उत्पादक अधिशेष को एक साथ जोड़ते हैं, तो हमें प्राप्त होता है

कुल अधिशेष = (क्रेताओं के लिए मूल्य - क्रेताओं द्वारा भुगतान की गई राशि) + (विक्रेताओं द्वारा प्राप्त राशि - विक्रेताओं को लागत)।

(Total surplus = (Value to buyers - Amount paid by buyers) + (Amount received by sellers - Cost to sellers))

खरीदारों द्वारा भुगतान की गई राशि विक्रेताओं द्वारा प्राप्त राशि के बराबर होती है (क्रेताओं द्वारा भुगतान की गई राशि = विक्रेताओं द्वारा प्राप्त राशि), इसलिए इस अभिव्यक्ति में मध्य दो पद एक दूसरे को रद्द करते हैं। परिणामस्वरूप, हम कुल अधिशेष को इस प्रकार लिख सकते हैं

कुल अधिशेष = क्रेताओं के लिए मूल्य - विक्रेताओं के लिए लागत।

(Total surplus = Value to buyers - Cost to sellers)

उच्च मूल्यांकन वाले खरीदार के लिए कम मूल्यांकन कुल अधिशेष बढ़ाएगा।

एक बाजार में **कुल अधिशेष** वस्तु के क्रेताओं के लिए कुल मूल्य है, जो कि उनकी भुगतान करने की उनकी इच्छा में से उस वस्तु को उपलब्ध कराने के लिए विक्रेताओं की कुल लागत को घटा कर मापा जाता है। यदि संसाधनों का आवंटन कुल अधिशेष को अधिकतम करता है, तो हम कहते हैं कि यह आवंटन दक्षता (efficiency) को दर्शाता है। यदि आवंटन कुशल नहीं है, तो क्रेताओं और विक्रेताओं के बीच व्यापार से होने वाले कुछ संभावित लाभों का पता नहीं लग पायेगा। उदाहरण के लिए, एक आवंटन अदक्ष (inefficient) है यदि विक्रेताओं द्वारा एक वस्तु का उत्पादन न्यूनतम लागत पर नहीं किया जा रहा है। इस संबंध में, उत्पादन को उच्च लागत वाले उत्पादक से कम लागत वाले उत्पादक तक ले जाने से विक्रेताओं की कुल लागत कम होगी और कुल अधिशेष बढ़ेगा। इसी तरह, एक आवंटन अदक्ष (inefficient) है यदि इस वस्तु का उपभोग उस क्रेता द्वारा नहीं किया जा रहा जो इसे सबसे अधिक महत्व देता है।

दक्षता के अतिरिक्त, सामाजिक योजनाकार समानता के बारे में भी ध्यान दे सकता है- अर्थात, बाजार में विभिन्न क्रेताओं और विक्रेताओं के पास आर्थिक कल्याण का समान स्तर है या नहीं। संक्षेप में, बाजार में व्यापार से लाभ बाजार सहभागियों के बीच साझा किए जाने वाले पाई (pie) की तरह है। कार्यकुशलता का प्रश्न इस बात से संबंधित है कि पाई यथासंभव बड़ी है या नहीं। समानता का प्रश्न इस बात से संबंधित है कि केक कैसे काटा जाता है और समाज के सदस्यों के बीच भागों/टुकड़ों (shares) को कैसे वितरित किया जाता है। इस अध्याय में, हम सामाजिक योजनाकार के लक्ष्य के रूप में कार्यकुशलता (efficiency) पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। हालाँकि, ध्यान रखें कि वास्तविक नीति निर्माता अक्सर समानता की भी परवाह करते हैं।

3.8.3.2 Evaluating the Market Equilibrium (बाजार संतुलन का मूल्यांकन)

चित्र 3.40 उपभोक्ता अधिशेष और उत्पादक अधिशेष को दर्शाता है जब बाजार संतुलन (पूर्ति = मांग) में है। याद रखें कि उपभोक्ता अधिशेष मांग वक्र के तहत मूल्य के ऊपर के क्षेत्र के बराबर है और निर्माता अधिशेष पूर्ति वक्र पर कीमत के नीचे के क्षेत्र के बराबर है। इस प्रकार, पूर्ति और मांग के बीच का कुल क्षेत्र संतुलन के बिंदु तक इस बाजार में कुल अधिशेष का प्रतिनिधित्व करता है।

चित्र 3.40

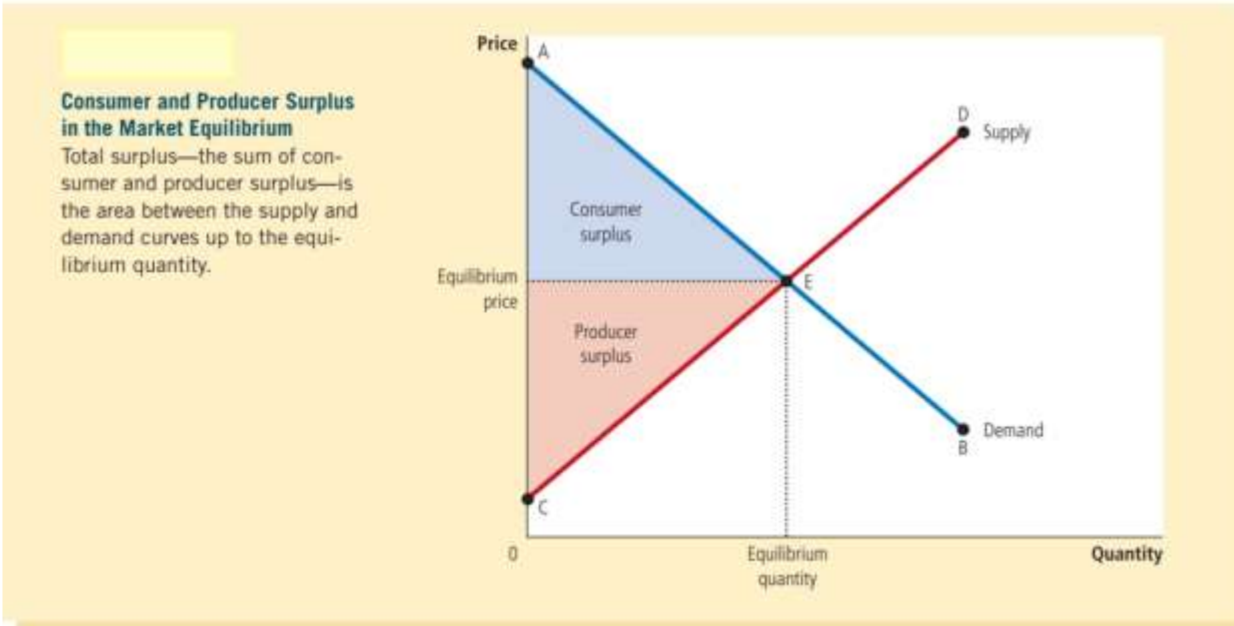

क्या संसाधनों का यह संतुलन आवंटन कुशल है? यानी क्या यह कुल अधिशेष को अधिकतम करता है? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए, याद रखें कि जब बाजार संतुलन में होता है, तो कीमत यह बात निर्धारित करती है कि कौन से क्रेता और विक्रेता बाजार में भाग लेते हैं। क्रेता जो वस्तु को बाजार कीमत से अधिक महत्व देते हैं उस वस्तु को खरीद पाते हैं और जो क्रेता उस वस्तु को बाजार कीमत से कम महत्व देते हैं वह इस वस्तु को नहीं खरीद पाते अर्थात वे बाजार से बाहर हो जाते हैं(सेगमेंट EB द्वारा प्रतिनिधित्व) । इसी प्रकार वे विक्रेता जिनकी लागत कीमत से कम है वस्तु उत्पादन और बिक्री करना पसंद करते हैं अर्थात वस्तु को उत्पादित करते हैं और उसको बेचते हैं (पूर्ति वक्र पर खंड CE द्वारा दर्शाया गया है) । और वे विक्रेता जिनकी लागत कीमत से अधिक है वह बाजार से बाहर हो जाते हैं अर्थात वे वस्तु का उत्पादन नहीं करते वस्तु को नहीं बेचते (खंड ED द्वारा दर्शाया गया है)।

ये अवलोकन बाजार के परिणामों के बारे में दो अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं:

1. मुक्त बाजार उन क्रेताओं को वस्तु की पूर्ति आवंटित करते हैं जो उन्हें सबसे अधिक महत्व देते हैं, जैसा कि भुगतान करने की उनकी इच्छा से मापा जाता है।

2. मुक्त बाजार उन विक्रेताओं को वस्तु की मांग आवंटित करता है जो उन्हें न्यूनतम लागत पर उत्पादित कर सकते हैं।

इस प्रकार, बाजार संतुलन में उत्पादित और बेची गई मात्रा को देखते हुए, सामाजिक योजनाकार खरीदारों के बीच खपत के आवंटन या विक्रेताओं के बीच उत्पादन के आवंटन को बदलकर आर्थिक कल्याण में वृद्धि नहीं कर सकता है।

3. मुक्त बाजार वस्तु की उस मात्रा का उत्पादन करता है जो उपभोक्ता और उत्पादक अधिशेष के योग को अधिकतम करता है।

चित्र 3.41

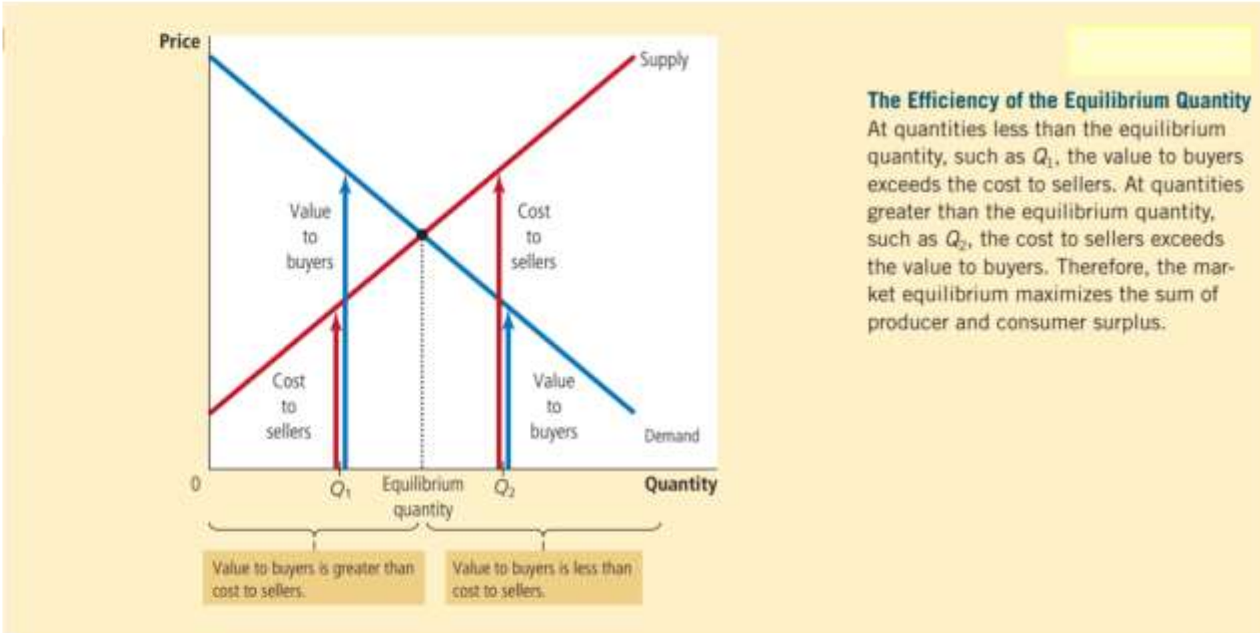

चित्र 3.41 दिखाता है कि यह सच क्यों है। इस आंकड़े की व्याख्या करने के लिए, ध्यान रखें कि मांग वक्र क्रेताओं के मूल्य को दर्शाता है और आपूर्ति वक्र विक्रेताओं को लागत दर्शाता है। संतुलन स्तर से नीचे की किसी भी मात्रा पर, जैसे कि Q1, सीमांत खरीदार का मूल्य सीमांत विक्रेता की लागत से अधिक हो जाता है। नतीजतन, उत्पादन और खपत की मात्रा में वृद्धि से कुल अधिशेष बढ़ता है। यह तब तक सही रहता है जब तक मात्रा संतुलन स्तर तक नहीं पहुंच जाती। इसी तरह, संतुलन स्तर से परे किसी भी मात्रा पर, जैसे Q2, सीमांत खरीदार के लिए मूल्य सीमांत विक्रेता की लागत से कम है। इस मामले में, मात्रा घटने से कुल अधिशेष बढ़ जाता है, और यह तब तक सही रहता है जब तक मात्रा संतुलन स्तर तक नहीं गिर जाती। कुल अधिशेष को अधिकतम करने के लिए, सामाजिक नियोजक उस मात्रा का चयन करेगा जहां पूर्ति और मांग वक्र प्रतिच्छेद करते हैं।

ऊपर की तीन बातों से हमें यह पता लगता है कि बाजार वह स्थान है (वह मंच है) जो उपभोक्ता के अधिशेष और उत्पादक के अधिशेष दोनों को जितना बड़ा हो सके उतना बड़ा कर देता है अर्थात अधिकतम कर देता है। यदि अन्य शब्दों में बात करें तो इसका अर्थ यह हुआ कि बाजार संसाधनों का इष्टतम आवंटन कर देता है करता है। इसलिए परोपकारी सामाजिक योजनाकार, बाजार के परिणाम को वैसे ही छोड़ देता है जैसा वह पाता है। इसे लाइसेज़ फेयर (*laissez faire)* नीति कहा जाता है जो कि फ्रांसीसी भाषा से लिया गया है जिसका अर्थ होता है "करने के लिए छोड़ना" अर्थात "लोगों को जैसा वे चाहते हैं वैसा करने दें।"

3.8.4 Price Rationing (मूल्य राशनिंग)

युद्ध के समय मूल्य नियंत्रण लागू करना काफी सामान्य है और द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान कई देशों द्वारा इसकी शुरुआत की गई थी। शांतिकाल में भी, महंगाई के खिलाफ गरीबों की मदद करने के लिए कई देशों में आवश्यक वस्तुओं पर मूल्य नियंत्रण लागू किया गया है। मूल्य नियंत्रण के तहत किसी वस्तु की अधिकतम कीमत तय की जाती है, जिसके ऊपर कीमत विक्रेता उपभोक्ताओं से वसूल नहीं कर सकता है।

मूल्य नियंत्रण या मूल्य सीमा को संतुलन मूल्य से नीचे सेट किया जाता है। इसका कारण यह है कि यदि कीमत की सीमा उस संतुलन कीमत से ऊपर निर्धारित की जाती है जो पूर्ति और मांग को संतुलित करती है, तो इसका कोई प्रभाव नहीं होगा या दूसरे शब्दों में, यह बाध्यकारी नहीं होगा। चित्र 3.42 पर विचार करें। जहां कीमत P_1 पर मांग और पूर्ति एक दूसरे को संतुलित करते हैं। इस संतुलन कीमत पर क्रेता और विक्रेता दोनों संतुष्ट हैं, क्रेता इस संतुलन कीमत पर जितनी मात्रा में वस्तु खरीदना चाहते हैं उतनी मात्रा में प्राप्त कर रहे हैं और विक्रेता जो बेचना चाहते हैं वह इस कीमत पर बेच रहे हैं। इसलिए, सरकार द्वारा निर्धारित उच्च कीमत P_2 का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। जब यह महसूस किया जाता है कि किसी वस्तु की संतुलन कीमत बहुत अधिक है और फलस्वरूप कुछ क्रेता असंतुष्ट हो जाते हैं, क्योंकि उनके पास इसके लिए भुगतान करने के साधनों की कमी होती है, तो सरकार एक कानून पारित कर सकती है जिसके माध्यम से वह वस्तु की अधिकतम कीमत एक स्तर पर संतुलन कीमत से नीचे तय करती है। । अब, संतुलन कीमत से कम कीमत पर, मांग की मात्रा पूर्ति की मात्रा से अधिक होगी और इस प्रकार वस्तु की कमी सामने आएगी; कुछ उपभोक्ता जो उस कीमत पर खरीदने के इच्छुक और सक्षम हैं, वे असंतुष्ट हो जाएंगे। यदि अनुमति दी जाती है, तो खरीदार कीमत को संतुलन स्तर तक बढ़ा देंगे। लेकिन सरकार द्वारा मूल्य नियंत्रण के तहत, कीमत आपूर्ति की मात्रा के साथ मांग की मात्रा के बराबर जाने के लिए स्वतंत्र नहीं है। इस प्रकार, जब सरकार किसी वस्तु के लिए अधिकतम कीमत तय करने के लिए हस्तक्षेप करती है, तो कीमत अपने राशनिंग डिवाइस के महत्वपूर्ण कार्य को खो देती है।

मूल्य नियंत्रण और इसके द्वारा उठाई गई समस्याओं को चित्र 3.43 में चित्रित किया गया है जहां चीनी की मांग और पूर्ति वक्र, DD और SS दिए गए हैं। जैसा कि इस चित्र से देखा जा सकता है कि मांग और पूर्ति वक्र बिंदु E पर प्रतिच्छेद करते हैं और तदनुसार OP_1 चीनी की संतुलन कीमत है। मान लीजिए कि चीनी की यह संतुलन कीमत OP_1 बहुत अधिक है, जिससे बहुत से गरीब लोग इसकी कोई मात्रा प्राप्त करने में सक्षम नहीं हैं। इसलिए, सरकार हस्तक्षेप करती है और OP_0 के स्तर पर चीनी की अधिकतम कीमत तय करती है जो संतुलन कीमत OP_1 से नीचे है। जैसा कि चित्र 3.43 से नियंत्रित मूल्य OP_0 पर देखा जाएगा, मांग की गई मात्रा, पूर्ति की गई मात्रा से अधिक है। कीमत OP_0 पर, जबकि निर्माता चीनी की P_0R मात्रा की आपूर्ति करने की पेशकश करते हैं, उपभोक्ता इसकी P_0T मात्रा खरीदने के लिए तैयार होते हैं। नतीजतन, RT के बराबर चीनी की कमी सामने आई है और कुछ उपभोक्ता असंतुष्ट हो जाएंगे।

चित्र 3.42

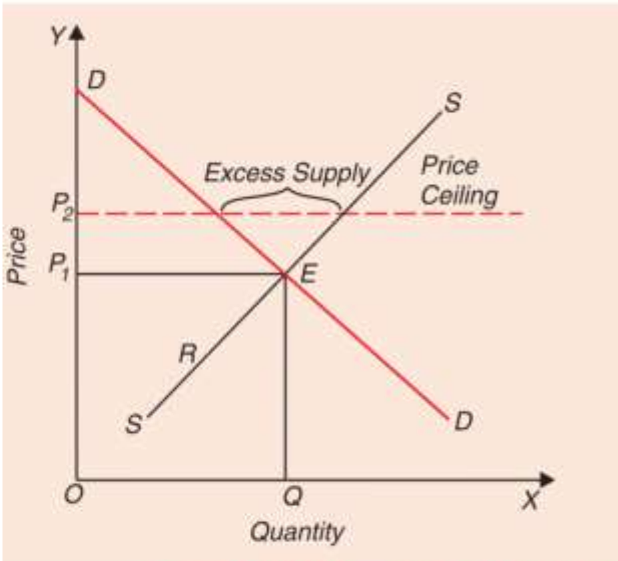

Price Ceiling above the Equilibrium Price is not Binding and is Ineffective.

चित्र 3.43

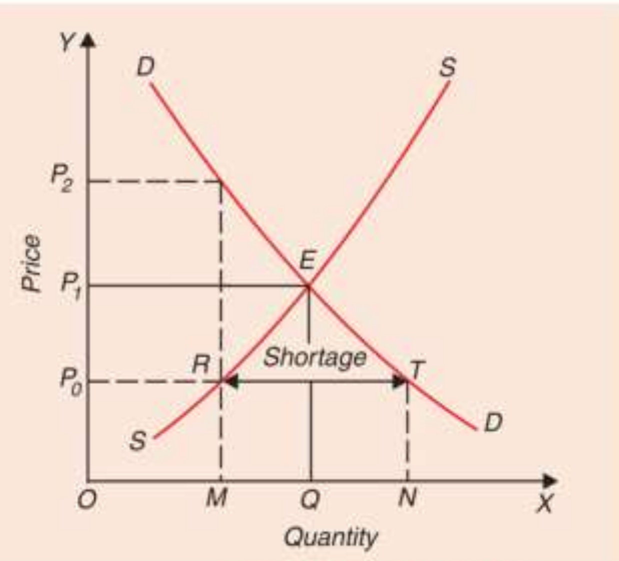

Effect of Price Control (i.e. Fixing Price Ceiling below the Equilibrium Level)

OP_0 स्तर पर अधिकतम कीमत तय करने वाले सरकारी हस्तक्षेप की अनुपस्थिति में, RT के बराबर अतिरिक्त मांग कीमत में संतुलन स्तर OP_1 तक बढ़ जाती है, जहां मांग की गई मात्रा पूर्ति की मात्रा के बराबर होती है। लेकिन, सरकार द्वारा मूल्य नियंत्रण के तहत, कानूनी रूप से निर्धारित अधिकतम मूल्य OP_0 से अधिक कीमत वसूलना कानून के तहत दंडनीय है। इसलिए, निर्धारित मूल्य OP_0 पर उपलब्ध पूर्ति OM को किसी तरह उपभोक्ताओं के बीच आवंटित या राशन किया जाना है। राशन कई रूप ले सकता है। उपलब्ध पूर्ति OM की राशनिंग का यह कार्य उत्पादकों या विक्रेताओं द्वारा स्वयं किया जा सकता है। विक्रेता "पहले आओ पहले पाओ" के सिद्धांत को अपना सकते हैं और चीनी की उपलब्ध पूर्ति को उन लोगों के बीच वितरित कर सकते हैं जो अपनी दुकानों के सामने सबसे पहले कतार में हैं। इसलिए राशनिंग की इस प्रणाली को **क्यू राशनिंग** कहा जाता है। राशनिंग या वस्तु पूर्ति के आवंटन की दूसरी विधि इसे "**विक्रेताओं की पसंद द्वारा आवंटन**" के आधार पर वितरित करना है। इसके अंतर्गत, वस्तु की उपलब्ध आपूर्ति को विक्रेताओं द्वारा कुछ पसंदीदा उपभोक्ताओं को नियंत्रित कीमत पर बेचा जाता है। विक्रेता अपने नियमित ग्राहकों को नियंत्रित कीमत पर वस्तु बेच सकते हैं। वे उपलब्ध पूर्ति को निश्चित जाति, धर्म, रंग आदि के खरीदारों को बेचने की नीति भी अपना सकते हैं और दूसरों को नहीं।

यदि सरकार "पहले आओ पहले पाओ" के आधार पर आबादी के बीच किसी वस्तु का राशनिंग पसंद नहीं करती है या विक्रेताओं की पसंद के आधार पर मनमाना आवंटन करती है, तो वह वस्तु का **कूपन राशनिंग** शुरू कर सकती है। कूपन राशनिंग प्रणाली के तहत उपभोक्ताओं को वस्तु की उपलब्ध मात्रा खरीदने के लिए पर्याप्त राशन कूपन दिए जाते हैं। किसी परिवार को जारी किए गए राशन कूपनों की संख्या उसके सदस्यों की आयु, लिंग और परिवार के सदस्यों की संख्या या वांछनीय माने जाने वाले किसी अन्य मानदंड पर निर्भर हो सकती है।

काला बाजार। ध्यान देने योग्य बात यह है कि राशनिंग के साथ या उसके बिना मूल्य नियंत्रण से वस्तु में ब्लैक-मार्केट को बढ़ावा मिलने की संभावना है। काला बाजार से हमारा अभिप्राय उत्पादकों या विक्रेताओं द्वारा नियंत्रित कीमत से अधिक कीमत पर किसी वस्तु की बिक्री से है। वस्तु का विकास होगा। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वस्तु के कुछ

खरीदार पूरी तरह से संतुष्ट नहीं होंगे क्योंकि वे नियंत्रित कीमत पर वस्तु की वह मात्रा प्राप्त करने में सक्षम नहीं होंगे जिसे वे खरीदना चाहते हैं। इसलिए, वे वस्तु की अधिक मात्रा प्राप्त करने के लिए अधिक कीमत चुकाने को तैयार होंगे, लेकिन वे ऐसा केवल कालाबाज़ारी में ही कर सकते हैं। विक्रेता भी वस्तु को काले बाजार में अधिक कीमत पर बेचने में दिलचस्पी लेंगे, कम से कम इसकी कुछ मात्रा, क्योंकि इससे उन्हें बड़ा मुनाफा मिलेगा।

यहां तक कि जब कूपन राशनिंग पेश की जाती है तो काला बाजार के विकास के लिए दबाव होगा। ऐसा इसलिए है क्योंकि उपभोक्ता नियंत्रित कीमत पर उपलब्ध वस्तु की तुलना में अधिक मात्रा में वस्तु खरीदने को तैयार हैं, जबकि राशनिंग केवल वस्तु की उपलब्ध मात्रा का वितरण करती है। इसलिए, जो उपभोक्ता राशन की राशि से अधिक मात्रा में खरीद करना चाहते हैं, वे काला बाजार में कुछ मात्रा प्राप्त करने के लिए अधिक कीमत चुकाने को तैयार होंगे।

मांग और पूर्ति विश्लेषण के आधार पर भविष्यवाणियों की पुष्टि करने के लिए भारत और विदेशों में पर्याप्त सबूत हैं। जब द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान और उसके बाद कुछ वस्तुओं की कमी के लिए मूल्य नियंत्रण और राशनिंग प्रणाली शुरू की गई, तो दंडात्मक उपायों के बावजूद काला बाजार विकसित हुआ।

3.8.5 Minimum Support Price/Price Floors (न्यूनतम समर्थन मूल्य/ कीमत तल)

मूल्य नियंत्रण में हमने उस मामले की जांच की जब सरकार ने इसे संतुलन स्तर तक बढ़ने से रोकने के लिए मूल्य सीमा (यानी अधिकतम कीमत) तय की। कई कृषि उत्पादों के लिए सरकार की नीति न्यूनतम मूल्य तय करने की रही है, यानी संतुलन स्तर से ऊपर का न्यूनतम समर्थन मूल्य जो किसानों के लिए कम और अलाभकारी माना जाता है। जबकि मूल्य नियंत्रण या मूल्य सीमा के निर्धारण के मामले में सरकार केवल उस अधिकतम मूल्य की घोषणा करती है जिसके ऊपर किसी उत्पाद के उत्पादकों या विक्रेताओं द्वारा मूल्य नहीं लगाया जा सकता है, न्यूनतम समर्थन मूल्य के मामले में, सरकार उत्पाद की एक सक्रिय खरीदार बन जाती है। यह केवल भारत में ही नहीं बल्कि संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे विकसित देशों में भी कृषि उत्पादों के लिए मूल्य समर्थन नीति है। यह किसानों को उचित मूल्य प्रदान करने और उनकी आय बढ़ाने के लिए अपनाया गया है। 1930 से 1973 तक, संयुक्त राज्य अमेरिका में संघीय सरकार ने एक मूल्य समर्थन नीति संचालित की जिसके तहत उसने न्यूनतम मूल्य निर्धारित किया। भारत में एक महत्वपूर्ण कृषि उत्पाद, गेहूं के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य लगाने के प्रभाव को चित्र 3.44 में दर्शाया गया है, जहां गेहूं की मांग वक्र DD और पूर्ति वक्र SS बिंदु E पर प्रतिच्छेद करती है। इस प्रकार यदि गेहूं की कीमत निर्धारित करने की अनुमति दी जाती है। गेहूं की मांग और पूर्ति का मुक्त कार्य, संतुलन मूल्य OP और संतुलन मात्रा OQ निर्धारित है।

अब मान लीजिए कि यह मुक्त बाजार निर्धारित संतुलन मूल्य OP (= ₹ 600 प्रति क्विंटल) को अलाभकारी माना जाता है जो किसानों को गेहूं का उत्पादन करने या इसके उत्पादन का विस्तार करने के लिए प्रोत्साहन प्रदान नहीं करता है। इसलिए, किसानों के हितों को बढ़ावा देने के लिए, सरकार हस्तक्षेप करती है और गेहूं के लिए उच्च न्यूनतम समर्थन मूल्य OP_1 (₹ 650 प्रति क्विंटल) तय करती है। चित्र 3.44 से यह देखा जाएगा कि गेहूँ की OP_1 कीमत पर, गेहूँ की माँग घटकर OQ_1 (= P_1A) हो जाती है। दूसरी ओर, उच्च कीमत पर OP_1 किसान अपने उत्पादन का विस्तार करते हैं और गेहूँ की अधिक मात्रा OQ_2 (= P_1B) की पूर्ति करते हैं। इस प्रकार न्यूनतम समर्थन मूल्य OP_1 पर किसानों द्वारा पूर्ति की जाने वाली गेहूं की मात्रा बाजार में उपभोक्ताओं द्वारा इसकी मांग की मात्रा से अधिक है। इसका मतलब यह है कि OP के संतुलन मूल्य से अधिक गेहूं का न्यूनतम समर्थन मूल्य लगाने से AB या Q_1Q_2 के बराबर गेहूं के अधिशेष का उदय होता है। यदि सरकार इस अधिशेष की खरीद नहीं करती है, तो यह अवसाद को बढ़ावा देगा। इसलिए, किसानों को गेहूं OP_1 (= ₹ 650 प्रति क्विंटल) का यह न्यूनतम मूल्य सुनिश्चित

करने के लिए सरकार को किसानों से संपूर्ण अधिशेष AB या Q_1Q_2 खरीदना होगा। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि किसानों से अधिशेष Q_1Q_2 खरीदने के लिए, सरकार को $OP_1 \times Q_1Q_2$ के बराबर व्यय करना होगा, अर्थात क्षेत्रफल Q_1ABQ_2 के बराबर। सरकार द्वारा अधिशेष गेहूं की खरीद पर होने वाले इस व्यय का वित्त पोषण किसके द्वारा किया जा सकता है? लोगों का कराधान।

चित्र 3.44

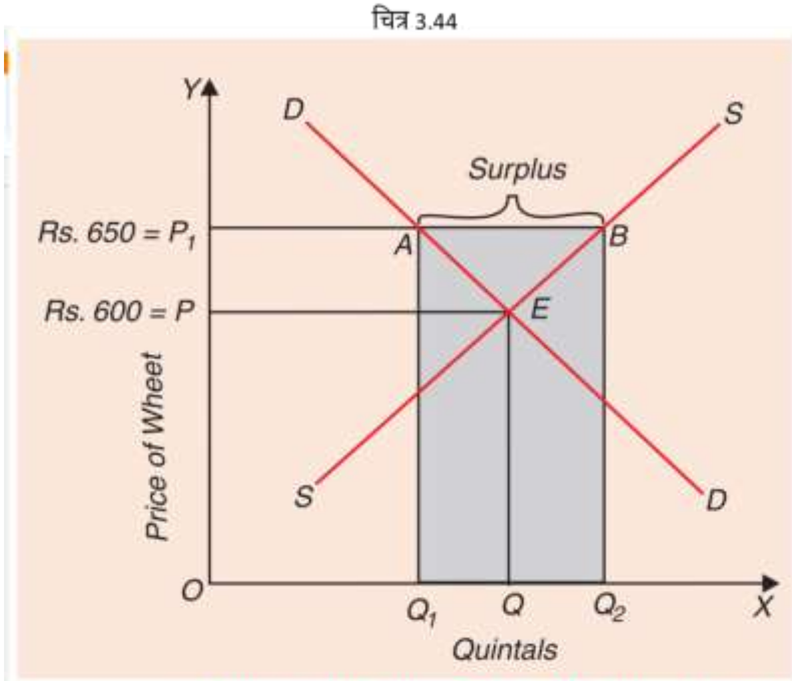

Minimum Support Price for Agriculture

उपरोक्त से यह पता चलता है कि न्यूनतम समर्थन मूल्य OP_1 के तहत किसान मुक्त बाजार में OQ_1 मात्रा में गेहूं और Q_1Q_2 मात्रा सरकार को बेचते हैं। मुक्त बाजार निर्धारित संतुलन मूल्य OP और मात्रा OP पर, किसानों की कुल आय OPEQ क्षेत्र के बराबर होगी। अब, OP_1 के बराबर न्यूनतम समर्थन मूल्य और OQ_2 के बराबर बेची गई कुल मात्रा के साथ, किसानों की आय OP_1BQ_2 तक बढ़ गई है। इस प्रकार न्यूनतम समर्थन मूल्य नीति ने किसानों को उनके उत्पाद के लिए प्राप्त होने वाले मूल्य और दोनों के संदर्भ में बहुत लाभान्वित किया है।

सरकार के सामने एक बड़ी समस्या यह है कि किसानों से खरीदे गए अतिरिक्त न्यूनतम समर्थन मूल्य पर उसका निपटान कैसे किया जाए। यदि सरकार इसे बाजार में बेचती है तो बाजार में गेहूं की कीमत गिर जाएगी जो मूल्य समर्थन नीति के उद्देश्य को विफल कर देगी। वैकल्पिक रूप से, सरकार अधिशेष का भंडारण कर सकती है और इस मामले में सरकार भंडारण लागत वहन करेगी। इसके अलावा, गेहूं और कोई भी अन्य खाद्यान्न भंडारण डिब्बे में अधिक समय तक रखे जाने पर सड़ जाते हैं। इस प्रकार अधिशेष उत्पादन के लिए श्रम, उर्वरक, सिंचाई और अन्य आदानों जैसे मूल्यवान संसाधनों की आवश्यकता होती है, फिर भी इसे अक्सर सरकारी गोदामों में सड़ने के लिए छोड़ दिया जाता है। अमेरिका में अधिशेष के निपटान का एक महत्वपूर्ण तरीका उन्हें विकासशील देशों को खाद्य सहायता के रूप में देना था। लेकिन यह खाद्य सहायता बिना किसी समस्या के नहीं है। विकासशील देशों को अमेरिकी खाद्य सहायता ने इन देशों में खाद्यान्न की कीमतों को कम करने की प्रवृत्ति दिखाई है और इसलिए इन विकासशील देशों के किसानों के हितों को नुकसान पहुँचाया है।

भारत में भारतीय खाद्य निगम सरकार की ओर से गेहूं और चावल के न्यूनतम खरीद या समर्थन मूल्य के निर्धारण के परिणामस्वरूप बनाए गए गेहूं और चावल के उत्पादन के अधिशेष की खरीद करता है। भारतीय खाद्य निगम फिर इसे अपने गोदामों में रखता है। फिर अधिशेष खाद्यान्न का उपयोग सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) के

माध्यम से कम कीमत पर वितरण के लिए किया जाता है। चूंकि सरकार इन खाद्यान्नों को उच्च दर पर खरीदती है और उपभोक्ताओं को कम कीमत पर बेचती है, इसलिए सरकार खाद्यान्न की खपत पर सब्सिडी देती है और खाद्य सब्सिडी पर सालाना कई हजार करोड़ रुपये खर्च करने पड़ते हैं।

इसके अलावा, सरकार द्वारा खरीदे गए अधिशेष खाद्य का उपयोग 'काम के बदले भोजन' कार्यक्रम और भारत में शुरू की गई ऐसी अन्य विशेष रोजगार योजनाओं के तहत श्रमिकों को देने के लिए भी किया जाता है। मजदूरी का एक भाग भोजन के रूप में तथा एक भाग धन के रूप में दिया जाता है। कुछ वर्ष पहले गेहूँ के अतिरिक्त खाद्यान्न ने भारत में सरकार के लिए एक समस्या खड़ी कर दी थी। सरकार के पास खाद्य अधिशेष बढ़ रहा था। जून 2004 में इसके लगभग 50 मिलियन टन होने का अनुमान लगाया गया था। दूसरी ओर, सार्वजनिक वितरण प्रणाली से उठाव काफी कम था। भारतीय खाद्य निगम के गोदामों में इन अधिशेष खाद्य पदार्थों के सड़ने का वास्तविक खतरा था। इसलिए, भारत सरकार ने कुछ गेहूं निर्यात करने का फैसला किया।

यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि भारत में सरकार साल दर साल गेहूं और चावल के लिए खरीद या समर्थन मूल्य बढ़ा रही है। इससे अर्थव्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र में खाद्य लागत में वृद्धि होती है, जिसके कारण चौतरफा कीमतों में वृद्धि होनी चाहिए। इस प्रकार, गेहूं और चावल की खरीद कीमतों में वृद्धि एक महत्वपूर्ण कारक रहा है जिसने भारतीय अर्थव्यवस्था में मुद्रास्फीति के दबावों को बनाया है।

3.9 अपनी प्रगति की जाँच करें (Check Your Progress)

3.9.1 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही है या गलत है।

1. जब मांग पूर्णतया लोचदार होती है तो लोच का गुणांक शून्य होता है।
2. एक सरल मांग वक्र की लोच बढ़ती जाती है जैसे-जैसे आप वक्र के निचले भाग की ओर चलते जाते हैं।
3. जब कीमत के कम होने पर कुल व्यय बढ़ता है तो मांग की लोच इकाई से अधिक कहलाती है।
4. पूरक वस्तुओं की मांग की आड़ी लोच धनात्मक होती है।
5. गिफिन पदार्थों की आय लोच ऋणात्मक होती है।
6. मांग की कीमत सापेक्षता AR तथा MR से ज्ञात की जा सकती है।

3.9.2 कोष्ठकों में दिए गए शब्दों में से रिक्त स्थान भरें

1. मांग इकाई से अधिक लोचदार होती है जब कीमत कम होने से कुल व्यय .... है। (बढ़ता/घटता)
2. विभिन्न उपयोगों वाली वस्तुओं की मांग .... होती है। (लोचदार/बेलोचदार)
3. जब वस्तु की मांग में, कीमत में परिवर्तन होने पर कोई परिवर्तन नहीं होता तो मांग .... कहलाती है। (पूर्णतया लोचदार/पूर्णतया बेलोचदार)
4. मांग की लोच .... है यदि कीमत में परिवर्तन होने पर कुल व्यय में कोई परिवर्तन नहीं होता। (इकाई/इकाई से कम)
5. कीमत में कम परिवर्तन होने से यदि मांग में अधिक परिवर्तन आ जाता है तो मांग .... है। (लोचदार/ बेलोचदार)
6. जब वस्तु की कीमत में परिवर्तन होने पर मांग में अनुपातिक परिवर्तन कम होता है तो वस्तु की मांग .... होती है। (लोचदार/बेलोचदार)
7. एक सरल मांग वक्र के मध्य बिंदु पर मांग की मूल्य लोच ....होगी। (इकाई/इकाई से अधिक)
8. एक एकाधिकारी ऊंची कीमत ले सकता है यदि वस्तु की मांग .... है। (लोचदार/बेलोचदार)
9. अनिवार्यताओं की मांग .... होती है। (लोचदार/बेलोचदार)
10. रोटी की मांग .... होती है। (लोचदार/बेलोचदार)

3.9.3 सही विकल्प चुनिए

1. मांग का नियम बताता है।

(A) जब मांग बढ़ती है तो कीमत बढ़ती है

(B) जब आय बढ़ती है तो मांग बढ़ती है
(C) जब कीमत घटती है तो मांग बढ़ती है
(D) जब मांग घटती है तो कीमत भी घटती है
2. मांग रेखा का ढाल किस प्रकार का होता है।
(A) ऋणात्मक
(B) धनात्मक
(C) शून्य
(D) उपर्युक्त सभी
3. कीमत एवं पूर्ति के बीच धनात्मक संबंध को व्यक्त करने वाले वक्र का नाम है।
(A) कीमत वक्र
(B) पूर्ति वक्र
(C) लागत वक्र
(D) मांग वक्र
4. अन्य बातें समान रहने पर धनात्मक ढाल वाली पूर्ति रेखा के साथ एक वस्तु की कीमत में वृद्धि के परिणाम स्वरूप जो होगा उसे कहा जाएगा।
(A) पूर्ति में वृद्धि
(B) पूर्ति में विस्तार
(C) पूर्ति में कमी
(D) पूर्ति में संकुचन

3.10 सारांश (Summary)

इस अध्याय के अध्ययन के बाद आप जान चुके हैं कि कीमत का मांग एवं पूर्ति के साथ क्या संबंध है। किसी वस्तु की कीमत का मांग के साथ विपरीत तथा पूर्ति के साथ सीधा संबंध होता है। इसीलिए मांग वक्र ऋणात्मक ढाल वाला तथा पूर्ति वक्र धनात्मक ढाल वाला होता है। इस अध्याय के अध्ययन के बाद आप मांग एवं पूर्ति के नियम की व्याख्या सहज रूप से कर सकेंगे तथा नीति निर्माण में इनके अनुप्रयोगों की महत्वता को समझ चुके हैं। मांग एवं पूर्ति विश्लेषण का उपभोगता के अधिशेष , उत्पादक के अधिशेष , कीमत राशनिंग तथा कीमत तल इत्यादि के निर्धारण में क्या भूमिका है।
इसके अतिरिक्त हमने सीखा है कि मांग एवं पूर्ति की लोच क्या होती है। कीमत में अनुपातिक परिवर्तन के कारण मांग एवं पूर्ति की मात्रा में किस अनुपात में कितना परिवर्तन किस दिशा में होता है। इनको मापने की विधियां कौन-कौन सी है। इस को प्रभावित करने वाले कारक कौन-कौन से हैं। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप मांग एवं पूर्ति की लोच तथा इसको मापने की विधियों की व्याख्या करनी सीख चुके हैं।

3.11 कीवर्ड (Keywords)

बाजार- बाजार एक विशेष वस्तु या सेवा के क्रेताओं और विक्रेताओं का एक समूह है। एक समूह के रूप में खरीदार वस्तु की मांग का निर्धारण करते हैं, और विक्रेता एक समूह के रूप में वस्तु की पूर्तिका निर्धारण करते हैं।

मांग का नियम- अन्य बातें समान होने पर, जब एक वस्तु कीमत की बढ़ती है, तो उस वस्तु की मांगी गई मात्रा गिरती है, और जब उस वस्तु की कीमत गिरती है, तो मांग की गई मात्रा बढ़ जाती है। मांग का नियम कीमत और मात्रा के बीच एक व्युत्क्रम संबंध (Inverse Relation) का वर्णन करता है।

पूर्ति का नियम- पूर्ति के नियम में कीमत और पूर्ति का धनात्मक संबंध होता है। दूसरे शब्दों में अन्य बातें समान रहने पर किसी वस्तु की पूर्ति के बढ़ने की प्रवृत्ति तब होती है जब उस वस्तु की कीमत में वृद्धि होती है और पूर्ति में कमी तब होती है, जब वस्तु की कीमत में कमी आती है। इस प्रकार, कीमत आरै पूर्ति के बीच सीधा संबंध है।

सामान्य वस्तु- यदि आय में गिरावट आने पर किसी वस्तु की मांग गिरती है, तो उस वस्तु को सामान्य वस्तु (Normal Goods) कहा जाता है। कोई वस्तु सामान्य वस्तु है कि नहीं इसका पता उपभोक्ता के लिए वस्तु की मांग एवं उपभोक्ता की आय संबंध के आधार पर पता लगा सकते हैं। सामान्यय वस्तु की मांग उपभोक्ता की आय बढने पर बढ़ती है तथा आय घटने पर मांग भी घटती है अर्थात आय एवं मांग में सीधा संबंध होता है।

घटिया वस्तु- यदि आय में गिरावट आने पर किसी वस्तु की मांग बढ़ जाती है, तो उस वस्तु को घटिया वस्तु (Inferior Goods) कहा जाता है। घटिया वस्तुएँ उन वस्तुओं को कहते हैं जिनकी माँग क्रेता/ उपभोक्ता की आय के बढ़ने पर घटती है। अत: आय और मांग में ऋणात्मक संबंध पाया जाता है।

स्थानापन्न वस्तुएँ- जब एक वस्तु की कीमत में गिरावट से दूसरी वस्तु की मांग कम हो जाती है, तो दो वस्तुओं को स्थानापन्न वस्तुएँ (Substitute Goods/Competitive Goods) कहा जाता है। स्थानापन्न वस्तुएँ अक्सर उन वस्तुओं के जोड़े होते हैं जो एक दूसरे के स्थान पर उपयोग किए जाते हैं, जैसे हॉट डॉग और हैमबर्गर, स्वेटर और स्वेटशर्ट, और मूवी टिकट और डीवीडी किराए पर लेना इत्यादि।

पूरक वस्तुएँ- जब एक वस्तु की कीमत में गिरावट से दूसरी वस्तु की माँग बढ़ जाती है, तो दोनों वस्तुएँ पूरक (complements/ complementary goods) कहलाती हैं। पूरक अक्सर वस्तुओं के जोड़े होते हैं जो एक साथ उपयोग किए जाते हैं, जैसे गैसोलीन और ऑटोमोबाइल, कंप्यूटर और सॉफ्टवेयर, और मूंगफली का मक्खन और जेली इत्यादि। पूरक वस्तुएँ वे होती हैं जिनका प्रयोग किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए साथ-साथ किया जाता है। इनमें एक वस्तु की माँग तथा दूसरी वस्तु की कीमत में ऋणात्मक संबंध होता है अर्थात् एक वस्तु की कीमत में वृद्धि होने पर दूसरी वस्तु की माँग कम हो जाती है अथवा विपरीत।

उत्पादक अधिशेष- उत्पादक अधिशेष वह राशि है जिसे विक्रेता को उत्पादन की लागत घटाकर भुगतान किया जाता है।

उपभोक्ता अधिशेष = वह राशि है जो एक क्रेता एक वस्तु के लिए भुगतान करने को तैयार है - वह राशि जो कि क्रेता वास्तव में इसके लिए भुगतान करता है

3.12 स्व-मूल्यांकन परीक्षण (Self-Assessment Test)

1. मांग के नियम से क्या तात्पर्य है? इस को प्रभावित करने वाले तत्वों की विवेचना कीजिए।
2. पूर्ति के नियम को समझाइए। इसको प्रभावित करने वाले कारकों का विश्लेषण कीजिए।
3. मांग की कीमत लोच से क्या अभिप्राय है मांग की लोच को मापने की विभिन्न विधियों का वर्णन कीजिए
4. मांग की कीमत लोच से क्या अभिप्राय है इसकी विभिन्न श्रेणियों का विस्तार से वर्णन कीजिए
5. मांग की आय लोच से क्या अभिप्राय है इसकी विभिन्न श्रेणियों का विस्तार से वर्णन कीजिए
6. मांग की आड़ी लोच से क्या अभिप्राय है इसकी विभिन्न श्रेणियों का विस्तार से वर्णन कीजिए
7. पूर्ति की लोच से क्या अभिप्राय है इसके विभिन्न श्रेणियों का वर्णन कीजिए
8. मांग तथा पूर्ति विश्लेषण के विभिन्न अनुप्रयोगों का विस्तार से वर्णन कीजिए

3.13 उत्तर आपकी प्रगति की जांच करने के लिए (Answers to Check Your Progress)

उत्तर 3.9.1=> 1. गलत, 2. गलत, 3.सही, 4. गलत, 5. सही, 6. सही

उत्तर 3.9.2=> 1. बढ़ता, 2. लोचदार, 3. पूर्णतया बेलोचदार, 4. इकाई, 5. लोचदार, 6. बेलोचदार, 7. इकाई, 8. बेलोचदार, 9. बेलोचदार, 10. बेलोचदार

उत्तर 3.9.3=> 1. (C), 2. A, 3. B, 4.B

3.14 संदर्भ/सुझाई गई पुस्तकें (References/ Suggested Readings)

1. Koutsoyinuis. A. (1979) Modern Microeconomics (2nd Edition), Macmillian Press, London.
2. Mankiw. N.G. (2015) Principles of Microeconomics (7th Edition), Cengage Learning, USA.
3. Ahuja, H.L. (2017) Advanced Economic Theory: Microeconomic Analysis (21st Edition), S & Chand Publishing House.
4. Jhingan, M. L. (2015) Economics, Vrinda Publication Pvt. Ltd. Delhi.

विषय: अर्थशास्त्र (व्यष्टिगत अर्थशास्त्र के सिद्धांत)	
विषय क्रमांक: बीए BECO-101	लेखक: डॉ. सोमनाथ परूथी
अध्याय: 4	वेट्टर:
उपयोगिता और उपयोगिता सिद्धांत	

संरचना (Structure)

4.0 सीखने के उद्देश्य (Learning Objectives)

4.1 परिचय (Introduction)

4.2 उपभोक्ता के इष्टतम व्यवहार के अंग (Components of Consumer's Optimal Behavior)

4.2.1 उपयोगिता का अर्थ (Meaning of Utility)

4.2.2 उपयोगिता के प्रकार (Types of Utility)

4.2.3 कुल उपयोगिता तथा सीमांत उपयोगिता के बीच संबंध (The Relationship between Total Utility and Marginal Utility)

4.2.4 घटती सीमांत उपयोगिता का नियम (Law of Deminishing Marginal Utility):

4.3 अध्याय का आगे मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

4.3 गणनावाचक/कार्डिनल उपयोगिता सिद्धांत (The Cardinal Utility Theory)

4.3.1 उपभोक्ता का संतुलन (Equilibrium of the consumer)

4.3.2 उपभोक्ता के संतुलन की गणितीय व्युत्पत्ति (Mathematical derivation of the equilibrium of the consumer)

4.3.3 उपभोक्ता की मांग की व्युत्पत्ति (Derivation of the Demand of the Consumer)

4.3.4 कार्डिनल दृष्टिकोण की आलोचना (Critique of the Cardinal Approach)

4.4 हीरा-जल विरोधाभास (Diamond–Water Paradox)

4.5 क्रमवाचक उपयोगिता विश्लेषण (Ordinal Utility Analysis)

4.5.1 तटस्थता वक्र विश्लेषण (Indifference Curve Analysis)

4.5.2 बजट रेखा या कीमत रेखा (Budget Line or Price Line)

4.5.3 उपभोक्ता के संतुलन की व्युत्पत्ति (Derivation of the Equilibrium of the Consumer)

4.5.4 बजट रेखा या कीमत रेखा का स्थानांतरण (Shifts in Budget Line/Price Line)

4.5.5 उदासीनता-वक्र दृष्टिकोण का उपयोग करके मांग वक्र की व्युत्पत्ति (Derivation of the Demand Curve using the Indifference-Curves Approach)

4.6 अपनी प्रगति की जाँच करें (Check Your Progress)

4.7 सारांश (Summary)

4.8 कीवर्ड (Keywords)

4.9 स्व-मूल्यांकन परीक्षण (Self-Assessment Test)

4.10 उत्तर आपकी प्रगति की जांच करने के लिए (Answers to Check Your Progress)

4.11 संदर्भ/सुझाई गई पुस्तकें (References/ Suggested Readings)

4.0 सीखने के उद्देश्य (Learning Objectives)

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के बाद आप बता सकेंगे की

1. उपयोगिता का क्या अर्थ है
2. घटती सीमांत उपयोगिता का नियम क्या है
3. गणना वाचक उपयोगिता क्या है
4. क्रम वाचक उपयोगिता क्या है
5. उपभोक्ता का इष्टतम व्यवहार क्या है
6. घटती सीमांत उपयोगिता का नियम अर्थशास्त्र के किन किन सिद्धांतों के प्रमुख आधार है
7. सीमांत उपयोगिता तथा कुल उपयोगिता में क्या संबंध है
8. सीमांत उपयोगिता विश्लेषण से मांग वक्र कैसे ज्ञात किया जा सकता है

4.1 परिचय (Introduction)

मांग का पारंपरिक सिद्धांत उपभोक्ता के व्यवहार की जांच से शुरू होता है, क्योंकि बाजार की मांग को व्यक्तिगत उपभोक्ताओं की मांगों का योग माना जाता है। इस प्रकार हम पहले व्यक्तिगत उपभोक्ता के लिए मांग की व्युत्पत्ति की जांच करेंगे।

उपभोक्ता को तर्कसंगत/विवेकशील माना जाता है। वह अपनी आय और विभिन्न वस्तुओं की बाजार कीमतों को देखते हुए, वह अपनी आय के खर्च की योजना बनाता है ताकि वह उच्चतम संभव संतुष्टि या उपयोगिता प्राप्त कर सके। यह उपयोगिता अधिकतमकरण का स्वयंसिद्ध कथन (axiom) है। पारंपरिक सिद्धांत में यह माना जाता है कि उपभोक्ता को अपने निर्णय से संबंधित सभी सूचनाओं का पूरा ज्ञान होता है, यानी उसे सभी उपलब्ध वस्तुओं, उनकी कीमतों और अपनी आय का पूरा ज्ञान होता है। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए उपभोक्ता को विभिन्न ' वस्तुओं

की टोकरी' (baskets of goods) की उपयोगिता (संतुष्टि) की तुलना करने में सक्षम होना चाहिए जिसे वह अपनी आय से खरीद सकता है। उपयोगिताओं की तुलना की समस्या के लिए दो बुनियादी दृष्टिकोण हैं, कार्डिनलिस्ट/गणनावाचक दृष्टिकोण और ऑर्डिनल/क्रमवाचक दृष्टिकोण।

कार्डिनलिस्ट/ गणनावाचक स्कूल के विद्वानों ने माना कि उपयोगिता को मापा जा सकता है। उपयोगिता के मापन के लिए विभिन्न सुझाव दिए गए हैं। निश्चितता के तहत (योजना अवधि में बाजार की स्थितियों और आय के स्तर का पूरा ज्ञान) कुछ अर्थशास्त्रियों ने सुझाव दिया है कि उपयोगिता को मौद्रिक इकाइयों में मापा जा सकता है, उस राशि से जो उपभोक्ता किसी वस्तु की दूसरी इकाई के लिए त्याग करने को तैयार है। दूसरों ने व्यक्तिपरक इकाइयों में उपयोगिता के माप का सुझाव दिया, जिसे युटिल (util) कहा जाता है।

ऑर्डिनलिस्ट/ क्रमवाचक स्कूल के विद्वानों ने माना कि उपयोगिता मापने योग्य नहीं है, बल्कि एक क्रमिक परिमाण है। उपभोक्ता को अपनी पसंद बनाने के लिए विशिष्ट इकाइयों में विभिन्न वस्तुओं की उपयोगिता जानने की आवश्यकता नहीं है। उसके लिए यह पर्याप्त है कि वह प्रत्येक बंडल से मिलने वाली संतुष्टि के अनुसार विभिन्न ' वस्तुओं की टोकरियाँ' (basket of goods) को रैंक करने में सक्षम हो। वह वस्तुओं के विभिन्न बंडलों के बीच अपनी पसंद के क्रम को निर्धारित करने में सक्षम होना चाहिए। मुख्य क्रमिक सिद्धांत उदासीनता-वक्र दृष्टिकोण और प्रकट अधिमान परिकल्पना हैं।

उपरोक्त दृष्टिकोणों की जांच में हम पहले प्रत्येक दृष्टिकोण में अंतर्निहित मान्यताओं को बताएंगे, उपभोक्ता के संतुलन को प्राप्त करेंगे, और इससे व्यक्तिगत वस्तुओं के लिए उसकी मांग का निर्धारण करेंगे। अंत में हम प्रत्येक दृष्टिकोण की कमजोरियों को इंगित करते हैं।

4.2 उपभोक्ता के इष्टतम व्यवहार के अंग (Components of Consumer's Optimal Behavior)

इष्टतम (Optimum) का अर्थ होता है अधिकतम संतुष्टि अर्थात एक उपभोक्ता द्वारा प्राप्त सर्वश्रेष्ठ स्तर (Best Level of Satisfaction) । अतः इष्टतम प्रक्रिया (Optimization) का अर्थ है वस्तुओं तथा सेवाओं के सभी सहयोग में से उस संयोग का चुनाव करना जिससे सर्वश्रेष्ठ संतुष्टि प्राप्त होती है। उपभोक्ता के इष्टतम व्यवहार के दो अंग है:

1. **उद्देश्य (Objectives):** उपभोक्ता के इष्टतम व्यवहार का पहला अंग किसी उद्देश्य का अस्तित्व है। उपभोक्ता के इष्टतम व्यवहार का उद्देश्य उपयोगिता को अधिकतम करना है। अर्थशास्त्रियों द्वारा उपयोगिता शब्द का प्रयोग किसी आर्थिक वस्तु के उपभोग से मिलने वाले संतुष्टि के लिए किया जाता है। उपयोगिता की परिभाषा किसी वस्तु की आवश्यकता को संतुष्ट करने की शक्ति के रूप में दी जाती है। इस कथन से कि मुझे टीवी प्रोग्राम देखने से कोई उपयोगिता प्राप्त नहीं होती का अर्थ यह है कि प्रोग्राम देखने से मुझे कोई संतुष्टि या लाभ प्राप्त नहीं होता। इस कथन का प्रोग्राम के अच्छाई या बुराई से कोई संबंध नहीं है। उपयोगिता लाभकारक भी हो सकती है और हानिकारक भी हो सकती है।
2. **बाधाएं (Constraints):** उपभोक्ता के इष्टतम व्यवहार का दूसरा अंग कुछ बाधाएं या सीमाएं है। बाधाएं उपभोक्ता की आय या वस्तुओं की कीमत के रूप में हो सकती है।

4.2.1 उपयोगिता का अर्थ (Meaning of Utility): सामान्य बोलचाल की भाषा में उपयोगिता का अर्थ किसी वस्तु के उपयोग या प्रयोग से मिलने वाले लाभ से लगाया जाता है, परन्तु अर्थशास्त्र में इस शब्द का अर्थ सामान्य अर्थ से कुछ अलग तथा व्यापक होता है। अर्थशास्त्र में उपयोगिता किसी वस्तु की क्षमता अथवा वह गुण है जिससे मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। Utility लाभकारक भी हो सकती है और हानिकारक भी हो सकती है।

4.2.1.1 उपयोगिता की विशेषताएँ (Features of Utility)

अमूर्त: – Utility अमूर्त होती है अर्थात इसका कोई भौतिक स्वरूप नहीं होता है। इसे न तो देखा जा सकता है और न ही स्पर्श किया जा सकता है। इसे केवल महसूस किया जा सकता है।

आत्मनिष्ठ धारणा – उपयोगिता एक आत्मनिष्ठ धारणा है। यह किसी वस्तु का निजी गुण न होकर एक मनोवैज्ञानिक विचार है जो उपभोक्ता की मानसिक स्थिति पर निर्भर करता है।

नैतिकता से सम्बन्धित नहीं – उपयोगिता का नैतिकता से कोई सम्बन्ध नहीं होता है अर्थात विभिन्न वस्तुओं के उपभोग में आर्थिक दृष्टि से तो उपयोगिता होती है, किन्तु यह सामाजिक मान्यताओं से अनैतिक या कानूनी दृष्टि से गलत होता है।

4.2.2 उपयोगिता के प्रकार (Types of Utility)

4.2.2.1 सीमांत उपयोगिता: सीमांत उपयोगिता वस्तु की एक अतिरिक्त इकाई के उपभोग द्वारा कुल उपयोगिता में होने वाली वृद्धि है। इसे किसी वस्तु की अंतिम इकाई के उपभोग से प्राप्त उपयोगिता के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। आइए हम सीमांत उपयोगिता की अवधारणा को एक उदाहरण की सहायता से समझने की कोशिश करते हैं; मान लीजिए एक उपभोक्ता एक संतरे का उपभोग करके 10 यूटिल तथा दो संतरों का उपभोग करके 18 युटिल कुल उपयोगिता प्राप्त करता है तो वह दूसरे संतरे के उपभोग से 8 युटिल उपयोगिता प्राप्त करता है। अतः दूसरे संतरे की सीमांत उपयोगिता 8 युटिल है। यदि तीन संतरों से प्राप्त कुल उपयोगिता 24 यूटिल है तो तीसरे संतरे की सीमांत उपयोगिता 24 - 18 अर्थात 6 युटिल है इस स्थिति में तीसरा संतरा अंतिम संतरा है इस प्रकार तीसरे संतरे की सीमांत उपयोगिता 6 युटिल है। सीमांत उपयोगिता की गणना निम्नलिखित सूत्र के द्वारा की जा सकती है:

$$MU_n = TU_n - TU_{n-1}$$

Or

$$MU = \frac{\Delta TU}{\Delta X}$$

MUn= वस्तु की nवीं इकाई की सीमांत उपयोगिता

TUn=n इकाइयों की कुल उपयोगिता

TUn-1= n-1 इकाइयों की कुल उपयोगिता

4.2.2.2 कुल उपयोगिता: कुल उपयोगिता किसी वस्तु की सभी संभव इकाइयों के उपयोग से प्राप्त कुल संतुष्टि है। उदाहरण के लिए यदि पहला संतरा आपको 10 यूटेल दूसरा संतरा 8 यूटेल और तीसरा संतरा 6 युटिल की संतुष्टि देता है तो तीन संतरों की कुल उपयोगिता 10 + 8 + 6 = 24 युटिल होगी। कुल उपयोगिता एक वस्तु की विभिन्न इकाइयों के उपभोग से प्राप्त सीमांत उपयोगिता ओं का जोड़ है। इस प्रकार कुल उपयोगिता की गणना इस प्रकार की जा सकती है;

$$TU_n = MU_1 + MU_2 + MU_3 + \cdots + MU_n$$

or

$$TU_n = \sum MU$$

TU_n =दी हुई वस्तु की n इकाइयों से कुल उपयोगिता

TU_1 ,TU_2, TU_3 ,TU_n =पहली, दूसरी, तीसरी, तथा nवीं इकाई से सीमांत उपयोगिताएं

4.2.3 कुल उपयोगिता तथा सीमांत उपयोगिता के बीच संबंध (The Relationship between Total Utility and Marginal Utility)

कुल उपयोगिता तथा सीमांत उपयोगिता के बीच के संबंध को हम निम्नलिखित सारणी द्वारा समझ सकते हैं:

तालिका 4.1 कुल उपयोगिता तथा सीमांत उपयोगिता के बीच संबंध

उपयोग किए गए संतरों की इकाइयां	सीमांत उपयोगिता (युटिल)	कुल उपयोगिता (युटिल)	
0	0	0	जब सीमांत उपयोगिता धनात्मक है तो कुल उपयोगिता बढ़ती है।
1	10	10	
2	8	18	
3	6	24	
4	2	26	जब सीमांत उपयोगिता शून्य है।
5	0	26	जब सीमांत उपयोगिता शून्य है तो कुल उपयोगिता अधिकतम है।
6	-2	24	जब सीमांत उपयोगिता ऋणात्मक है तो कुल उपयोगिता घटती है।

चित्र 4.1 कुल उपयोगिता तथा सीमांत उपयोगिता के बीच संबंध

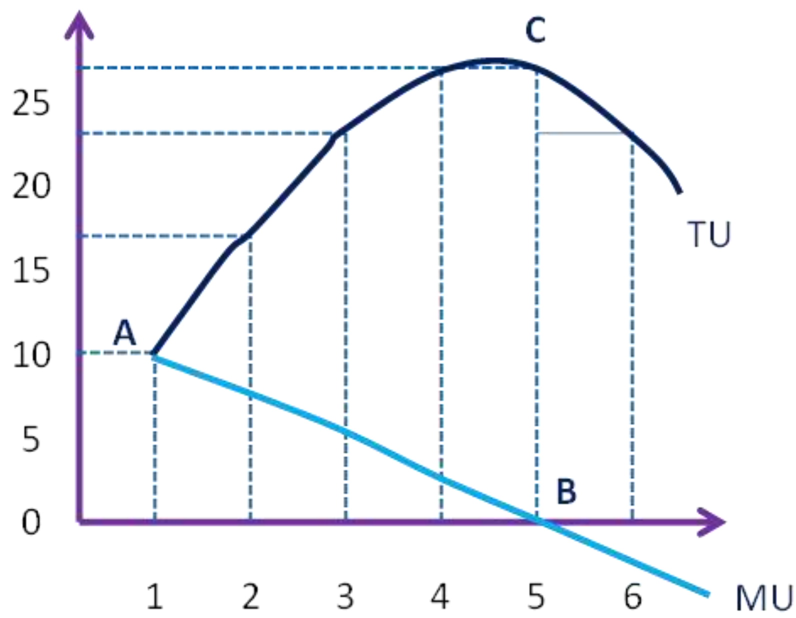

1. सीमांत उपयोगिता कुल उपयोगिता में परिवर्तन की दर है इसका अर्थ यह है कि जब सीमांत उपयोगिता धनात्मक है कुल उपयोगिता में वृद्धि होती है सारणी से पता चलता है कि AB के विस्तार के बीच सीमांत उपयोगिता कम हो रही है लेकिन धनात्मक है अतः कुल उपयोगिता घटती दर से बढ़ रही है
2. जब सीमांत उपयोगिता शून्य है तो कुल उपयोगिता अधिकतम होती है बिंदु B पर सीमांत उपयोगिता शून्य है और कुल उपयोगिता अनुरूप बिंदु C पर है जहां पर कुल उपयोगिता अधिकतम है
3. जब सीमांत उपयोगिता ऋण आत्मक हो जाती है अर्थात शून्य से कम हो जाती है तो कुल उपयोगिता घटना शुरू हो जाती है

4.2.4 घटती सीमांत उपयोगिता का नियम (Law of Deminishing Marginal Utility): प्राय यह देखने में आता है कि जब हम किसी वस्तु की अधिकाधिक इकाइयां प्राप्त करते जाते हैं तो उस वस्तु के लिए हमारी इच्छा की तीव्रता में कमी होनी शुरू हो जाती है। घटती सीमांत उपयोगिता का नियम भी इसी बात की व्याख्या करता है। इसके अनुसार जैसे-जैसे किसी वस्तु की अधिकाधिक इकाइयों का उपभोग किया जाता है तो प्रत्येक अगली इकाई से प्राप्त होने वाली सीमांत उपयोगिता कम होती चली जाती है। उपयुक्त नियम को एक उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है; मान लीजिए एक प्यासा आदमी पानी पीता है। पहला गिलास पानी जो वह पीता है उससे उसे अधिकतम संतुष्टि मानले 20 यूटिल प्रदान करता है। दूसरा गिलास पानी भी उसे उपयोगिता देता है लेकिन उतनी नहीं जितनी पहला गिलास क्योंकि पहला गिलास पानी पीने से उसकी उसकी कुछ प्यास बुझ चुकी है। मान लीजिए दूसरे गिलास से उसे 10 यूटिल मिलती है यह भी संभव है कि उसे तीसरे गिलास से 0 यूटिल उपयोगिता मिले क्योंकि अब उसकी प्यास की संतुष्टि हो चुकी है। चौथा गिलास पानी से ऋणात्मक उपयोगिता मिलेगी। कोई भी विवेकशील उपभोक्ता अतिरिक्त गिलास पानी का उपयोग नहीं करेगा जब उससे उसे ऋणात्मक उपयोगिता अर्थात अन-उपयोगिता (disutility) मिले।

4.2.4.1 घटती सीमांत उपयोगिता के नियम की मान्यताएं Assumptions of the Law of Deminishing Marginal Utility

घटती सीमांत उपयोगिता का नियम कुछ विशेष दशाओं में ही कार्य करता है। इन्हें इस नियम की मान्यताएं कहते हैं। इस नियम की कुछ महत्वपूर्ण मान्यताएं इस प्रकार है:

1. यह मान लिया गया है कि उपयोगिता को मापा जा सकता है और एक उपभोक्ता अपनी संतुष्टि को संख्यात्मक जैसे 1,2,3,4 इत्यादि के रूप में व्यक्त कर सकता है। हम पहले ही कह चुके हैं कि उपयोगिता को मापने की इकाई युटिल है। अतः उपयोगिता होती है।
2. वस्तु की गुणवत्ता में कोई परिवर्तन नहीं होना चाहिए। ऊपर दिए गए उदाहरण पानी के गिलास को ले, गुणवत्ता की दृष्टि से एक उपभोक्ता जो एक गिलास ठंडा पानी पीता है उसे उसी प्रकार का पानी आगे भी पीना चाहिए। वह उसकी गुणवत्ता को ठंडे से सामान्य में परिवर्तन नहीं कर सकता क्योंकि सामान्य पानी भिन्न प्रकार की संतुष्टि प्रदान करता है।
3. उपभोग में समय का अंतराल नहीं होना चाहिए। यह लगातार प्रक्रिया होनी चाहिए, ऊपर के उदाहरण में दूसरे गिलास पानी का उपभोग पहले गिलास पानी के यदि 2 घंटे बाद किया जाता है तो वह अधिक कम अथवा समान संतुष्टि प्रदान कर सकता है।
4. उपभोक्ता विवेकशील व्यक्ति होना चाहिए। इससे अभिप्राय यह है कि वह किसी वस्तु की कम मात्रा की अपेक्षा अधिक मात्रा को चुनना पसंद करता है।
5. उपभोग की अवधि बहुत लंबी नहीं होनी चाहिए। यदि समय का अंतराल अधिक है तो उपभोक्ता की रुचि, आदत, आय में परिवर्तन हो सकता है।
6. स्थानापन्न तथा पूरक वस्तुओं की कीमत में परिवर्तन नहीं होना चाहिए। यदि इन कीमतों में परिवर्तन होता है तो दी गई वस्तु से प्राप्त होने वाली उपयोगिता के बारे में भविष्यवाणी करना कठिन हो जाएगा।

4.2.4.2 घटती सीमांत उपयोगिता के नियम के अपवाद Exceptions to the Law of Deminishing Marginal Utility

इस नियम के कुछ मुख्य अपवाद निम्नलिखित हैं:

1. एक कंजूस व्यक्ति इस नियम के लिए उपयुक्त पात्र नहीं है संपत्ति की प्रत्येक वृद्धि के साथ उसकी और अधिक संपत्ति की इच्छा वास्तव में बढ़ती जाती है।
2. दुर्लभ वस्तुएं जैसे डाक टिकट, सिक्के, पेंटिंग आदि को एकत्र करने वाला व्यक्ति इस नियम से बच सकता है।
3. माधुर्य पाठ अथवा अति सुंदर दृश्य के मामले में यह नियम लागू नहीं होता। वास्तव में केवल यही नियम के वास्तविक अपवाद है, तथा यह भी नियम के उपयोग में बाधा सिद्ध नहीं होते। यह कल्पना करना आसान है कि एक कंजूस अथवा डाक टिकट एकत्रित करने वाला अथवा एक संगीतकार की नियम के कथन अनुसार सीमांत उपयोगिता घटने की बजाय बढ़ती है। परंतु यह प्रवृत्ति अधिक देर तक नहीं रह सकती। एक विशिष्ट अवस्था पर पहुंचने पर नियम क्रियाशील हो जाता है।

4.3 गणनावाचक/कार्डिनल उपयोगिता सिद्धांत (The Cardinal Utility Theory)

गणनावाचक उपयोगिता विश्लेषण का विकास जेवेंस, मेंजर, वालरस, मार्शल आदि नव-परंपरावादी अर्थशास्त्रियों ने किया था। यह विश्लेषण इस मान्यता पर आधारित है कि उपयोगिता का माप गणना वाचक संख्याओं अर्थात 1,2,3,4 में किया जा सकता है। गणना वाचक उपयोगिता विश्लेषण के अनुसार एक उपभोक्ता इष्टतम उपयोगिता प्राप्त करने का यह नियम है कि उसे किसी वस्तु को उस सीमा तक खरीदना चाहिए जहां पर उस वस्तु की सीमांत उपयोगिता तथा कीमत का अनुपात अन्य वस्तुओं की सीमांत उपयोगिता तथा कीमतों के अनुपात के बराबर हो जाए। यह सिद्धांत निम्नलिखित मान्यताओं पर आधारित है:

1. **तर्कसंगतता।** उपभोक्ता तर्कसंगत/विवेकशील है। वह अपनी दी गई आय द्वारा लगाए गए अवरोध के अधीन अपनी उपयोगिता को अधिकतम करने का लक्ष्य रखता है।

2. **कार्डिनल उपयोगिता।** प्रत्येक वस्तु की उपयोगिता मापने योग्य है। उपयोगिता एक प्रमुख अवधारणा है। सबसे सुविधाजनक उपाय पैसा है: उपयोगिता को मौद्रिक इकाइयों द्वारा मापा जाता है, जब तक कि उपभोक्ता वस्तु की दूसरी इकाई के लिए भुगतान करने के लिए तैयार नहीं होता है।

3. **धन की निरंतर सीमांत उपयोगिता।** यह धारणा आवश्यक है यदि मौद्रिक इकाई का उपयोग उपयोगिता के माप के रूप में किया जाता है। मापन की एक मानक इकाई की अनिवार्य विशेषता यह है कि यह स्थिर रहती है। यदि आय बढ़ने (या घटने) के रूप में पैसे की सीमांत उपयोगिता बदल जाती है, तो उपयोगिता के लिए मापने वाली छड़ी एक लोचदार शासक की तरह हो जाती है, माप के लिए अनुपयुक्त।

4. **घटती सीमांत उपयोगिता।** किसी वस्तु की क्रमिक इकाइयों से प्राप्त उपयोगिता कम हो जाती है। दूसरे शब्दों में, जब उपभोक्ता बड़ी मात्रा में वस्तु का अधिग्रहण करता है तो उसकी सीमांत उपयोगिता कम हो जाती है। यह ह्रासमान सीमांत उपयोगिता का स्वयंसिद्ध कथन (axiom) है।

5. वस्तुओं की टोकरी' की कुल उपयोगिता व्यक्तिगत वस्तुओं की मात्रा पर निर्भर करती है। यदि बंडल में मात्रा x_1, x_2, x_3, x_n के साथ n वस्तुएं हैं।

कुल उपयोगिता $TU = f(x_1, x_2, x_3, x_n)$

उपभोक्ता व्यवहार के सिद्धांत के बहुत प्रारंभिक संस्करणों में यह माना गया था कि

कुल उपयोगिता योगात्मक है, $TU = U_1(x_1) + \ U_2(x_2), + U_3(x_3) + U_4(x_4) + .. + U_n(x_n)$

कार्डिनल यूटिलिटी थ्योरी के बाद के संस्करणों में योगात्मकत धारणा को हटा दिया गया था। योगात्मकता का तात्पर्य बंडल में विभिन्न वस्तुओं की स्वतंत्र उपयोगिताओं से है, यह धारणा स्पष्ट रूप से अवास्तविक है, और कार्डिनल सिद्धांत के लिए अनावश्यक है।

4.3.1 उपभोक्ता का संतुलन (Equilibrium of the consumer)

हम एक वस्तु x के सरल मॉडल से प्रारंभ करते हैं। उपभोक्ता या तो x खरीद सकता है या अपनी आय Y को बिना खर्चे अपने पास रख सकता है। इन शर्तों के तहत उपभोक्ता संतुलन में तब होता है जब x की सीमांत उपयोगिता उसके बाजार मूल्य (Px) के बराबर होती है·

प्रतीकात्मक रूप से हमारे पास है $MU_x = P_x$

यदि x की सीमांत उपयोगिता इसकी कीमत से अधिक है $MU_x > P_x$, तो उपभोक्ता x की अधिक इकाइयाँ खरीदकर अपने कल्याण को बढ़ा सकता है। इसी प्रकार यदि x की सीमांत उपयोगिता इसकी कीमत से कम है $MU_x < P_x$, तो उपभोक्ता x की मात्रा में कटौती करके और अपनी अधिक आय को बिना खर्चे अपने पास रखकर अपनी कुल संतुष्टि में वृद्धि कर सकता है। इसलिए, MUx = Px होने पर वह अपनी उपयोगिता का अधिकतम लाभ प्राप्त करता है

यदि अधिक वस्तुएं हैं, तो उपभोक्ता के संतुलन के लिए शर्त व्यक्तिगत वस्तुओं की सीमांत उपयोगिताओं के अनुपातों की उनकी कीमतों में समानता है।

$$\frac{MU_x}{P_x} = \frac{MU_y}{P_y} = \frac{MU_z}{z} = \cdots = \frac{MU_n}{P_n}$$

4.3.2 उपभोक्ता के संतुलन की गणितीय व्युत्पत्ति (Mathematical derivation of the equilibrium of the consumer)

उपयोगिता फलन $U = f(Q_x)$

जहां उपयोगिता को मौद्रिक इकाइयों में मापा जाता है। यदि उपभोक्ता Q_x खरीदता है तो उसका व्यय $Q_x.P_x$ है। संभवतः उपभोक्ता अपनी उपयोगिता और अपने व्यय के बीच के अंतर को अधिकतम करना चाहता है।

$$U - Q_x.P_x$$

अधिकतम के लिए आवश्यक शर्त यह है कि qx के संबंध में फलन का आंशिक अवकलज (partial derivative) शून्य के बराबर हो। इस प्रकार:

$$\frac{\partial U}{\partial Q_x} - \frac{\partial (Q_x.P_x)}{\partial Q_x} = 0$$

पुनर्व्यवस्थित करने पर हमें प्राप्त होता है

$$\frac{\partial U}{\partial Q_x} = P_x \quad Or \quad MU_x = P_x$$

पैसे की एक अतिरिक्त इकाई खर्च करने से प्राप्त उपयोगिता सभी वस्तुओं के लिए समान होनी चाहिए। यदि उपभोक्ता किसी एक वस्तु से अधिक उपयोगिता प्राप्त करता है, तो वह उस वस्तु पर अधिक और अन्य पर कम खर्च करके अपने कल्याण को बढ़ा सकता है, जब तक कि उपरोक्त संतुलन की स्थिति पूरी नहीं हो जाती।

4.3.3 उपभोक्ता की मांग की व्युत्पत्ति (Derivation of the Demand of the Consumer)

मांग की व्युत्पत्ति, घटती सीमांत उपयोगिता के स्वयंसिद्ध कथन (axiom) पर आधारित है। कमोडिटी x की सीमांत उपयोगिता को एक ऋणात्मक ढलान वाली रेखा द्वारा दर्शाया जा सकता है (चित्र 2.2)। गणितीय रूप से x की सीमांत उपयोगिता कुल उपयोगिता फलन U = f(qx) का ढाल है। मात्रा x तक कुल उपयोगिता बढ़ जाती है, लेकिन घटती दर पर, और फिर x के बाद घटने लगती है (आकृति 2.1)। तदनुसार x की सीमांत उपयोगिता लगातार घटती जाती है, और मात्रा x के बाद ऋणात्मक हो जाती है। यदि सीमांत उपयोगिता को मौद्रिक इकाइयों में मापा जाता है तो x के लिए मांग वक्र सीमांत उपयोगिता वक्र के सकारात्मक भाग के समान होता है। x1 पर सीमांत उपयोगिता MU1 (आकृति 2.3) है।

यह परिभाषा के अनुसार P1 के बराबर है। इसलिए P1 पर उपभोक्ता x1 मात्रा की मांग करता है (आकृति 2.4)। इसी तरह x2 पर सीमांत उपयोगिता MU2 है, जो P2 के बराबर है • इसलिए P2 पर उपभोक्ता x2 मात्रा खरीदेगा, इत्यादि। MU वक्र का नकारात्मक भाग मांग वक्र का हिस्सा नहीं बनता है, क्योंकि अर्थशास्त्र में नकारात्मक मात्रा का कोई मतलब नहीं है।

चित्र 4.2 उपभोक्ता की मांग वक्र की व्युत्पत्ति

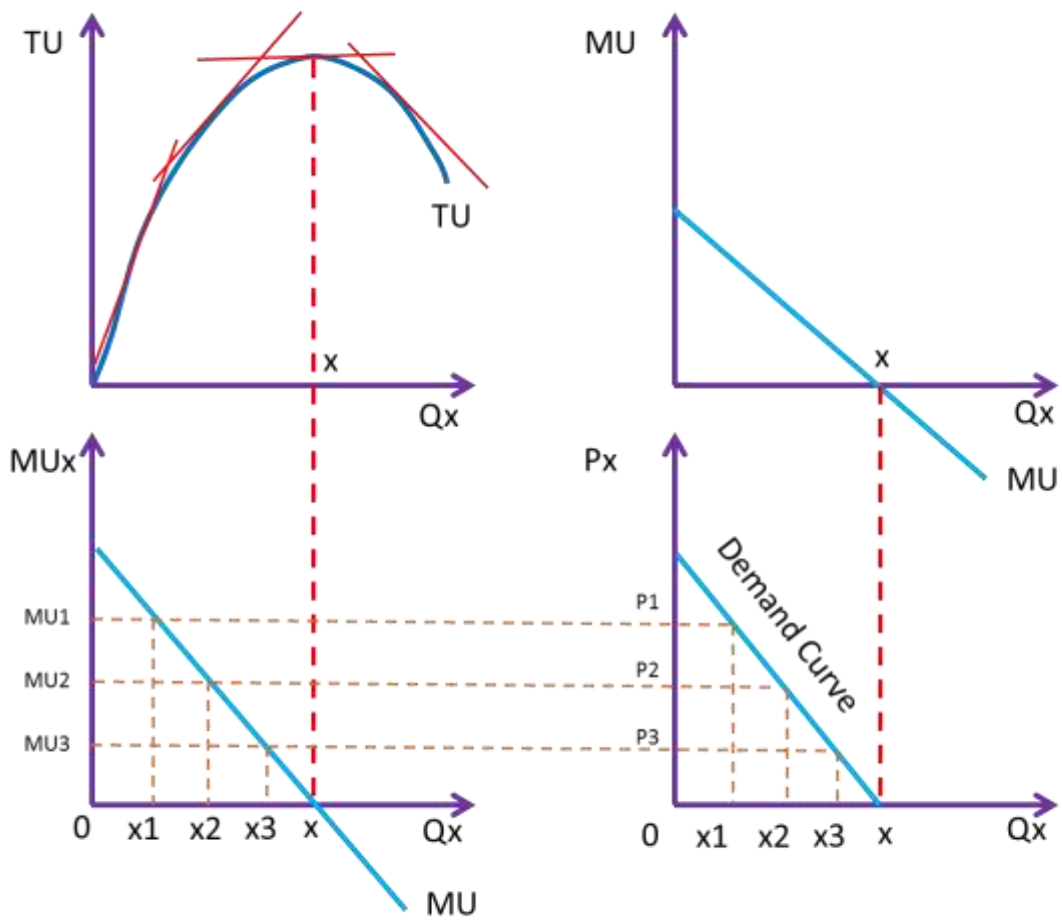

4.3.4 कार्डिनल दृष्टिकोण की आलोचना (Critique of the Cardinal Approach)

कार्डिनलिस्ट दृष्टिकोण में तीन बुनियादी कमजोरियां हैं। कार्डिनल उपयोगिता की धारणा अत्यंत संदिग्ध है। विभिन्न वस्तुओं से प्राप्त संतुष्टि को निष्पक्ष रूप से नहीं मापा जा सकता है। उपयोगिता की माप के लिए वालरस द्वारा व्यक्तिपरक इकाइयों (बर्तन) का उपयोग करने का प्रयास कोई संतोषजनक समाधान प्रदान नहीं करता है। धन की निरंतर उपयोगिता की धारणा भी अवास्तविक है। जैसे-जैसे आय बढ़ती है धन की सीमांत उपयोगिता में परिवर्तन होता है। इस प्रकार पैसे को मापने की छड़ी के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता क्योंकि इसकी अपनी उपयोगिता बदल जाती है। अंत में, ह्रासमान सीमांत उपयोगिता का स्वयंसिद्ध आत्मनिरीक्षण से 'स्थापित' किया गया है, यह एक मनोवैज्ञानिक कानून है जिसे स्वीकार किया जाना चाहिए।

4.4 हीरा-जल विरोधाभास (Diamond–Water Paradox)

मानव जीवन के लिए हीरे की तुलना में जल अधिक उपयोगी है, फिर भी बाजार में हीरे का मूल्य जल की तुलना में बहुत अधिक होता है। यह विरोधाभास मूल्य विरोधाभास (paradox of value या diamond–water paradox) कहलाता है।

क्लासिकल अर्थशास्त्री कीमत और उपयोगिता के बीच पाए जाने वाले घनिष्ठ संबंध से परिचित नहीं थे बल्कि उनका निश्चय पूर्ण यह मानना था की कीमत और उपयोगिता के बीच कोई संबंध नहीं होता इस संदर्भ में एडम स्मिथ ने प्रसिद्ध हीरक जल विरोधाभास का प्रसिद्ध उदाहरण दिया था उनके अनुसार जल की ऊंची उपयोगिता होती है पर उसकी कीमत नहीं होती है या बहुत कम होती है इसके विपरीत हीरे की उपयोगिता तो कम होती है लेकिन उसकी कीमत बहुत ऊंची होती हैं

क्लासिकल अर्थशास्त्री इस विरोधाभास को सपष्ट करने में असमर्थ रहे हैं परंतु मार्शल के सीमांत उपयोगिता के कारण इसे हम आसानी से हल कर सकते हैं जल जीवन के लिए अति आवश्यक है जिससे उसकी कुल उपयोगिता अनंत होती है परंतु प्रकृति मैं प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होने के कारण इसकी सीमांत उपयोगिता शून्य होती है यही कारण है कि जल की कीमत भी नगण्य होती है इसके विपरीत हीरे की कुल उपयोगिता बहुत कम होती हैं लेकिन प्रकृति में कम मात्रा में उपलब्ध होने के कारण उसकी सीमांत उपयोगिता अधिक होती है जिससे उसकी कीमत भी ऊंची होती है इस प्रकार किसी वस्तु की कीमत का निर्धारण उसकी सीमांत उपयोगिता द्वारा होता है कुल उपयोगिता द्वारा नहीं

4.5 क्रमवाचक उपयोगिता विश्लेषण (Ordinal Utility Analysis)

कर्मवाचक उपयोगिता विश्लेषण का विकास पैरेटो स्लास्की हिक्स तथा एलेन आदि अर्थशास्त्रियों ने किया था। यह विश्लेषण इस मान्यता पर आधारित है कि उपयोगिता को क्रमवाचक संख्याओं में मापा जा सकता है। इस विश्लेषण के अनुसार एक उपभोक्ता की इस्तम उपयोगिता का नियम यह है कि उपभोक्ता को X वस्तु तथा Y वस्तु के इस संयोग को खरीदना चाहिए जिस पर X वस्तु तथा Y वस्तु की सीमांत प्रतिस्थापन दर (marginal rate of substitution) वस्तु X तथा Y की कीमत के अनुपात के बराबर हो अर्थात

$$MRS_{xy} = \frac{P_x}{P_y}$$

MRS_{xy} = X वस्तु तथा Y वस्तु की सीमांत प्रतिस्थापन दर

उपभोक्ता संतुलन की उपरोक्त शर्त को समझने के लिए हमें दो यंत्रों की जरूरत पड़ती है पहला है **तटस्थता वक्र** और दूसरा है **कीमत रेखा** हम इन दोनों की आगे विस्तार से बात करेंगे।

4.5.1 तटस्थता वक्र विश्लेषण (Indifference Curve Analysis)

आधुनिक मांग सिद्धांत यह समझने के लिए कि कोई उपभोक्ता आर्थिक चुनाव कैसे करता है, एक विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण का प्रयोग करता है जिसे तटस्थता वक्र विश्लेषण कहा जाता है। यह दृष्टिकोण क्रमवाचक उपयोगिता (ordinal utility) विश्लेषण पर आधारित है। क्रमवाचक शब्द का अर्थ है प्रथम, द्वितीय, तृतीय, आदि क्रम देना। यह क्रमवाचक संख्याएं हैं। इनका अभिप्राय कर्म या श्रेणी से है। तटस्थता वक्र विश्लेषण क्रम वाचक माप पर आधारित है। क्रमवाचक संख्याएं विभिन्न वस्तुओं के लिए एक उपभोक्ता की प्राथमिकता (preferences) को प्रकट करती है।

तटस्थता वक्र विश्लेषण का प्रतिपादन सबसे पहले अंग्रेज अर्थशास्त्री एजवर्थ ने सन 1881 में अपनी पुस्तकMathematical Physics *मैथमेटिकल फिजिक्स* में किया था। इस धारणा का विकास इटली के अर्थशास्त्री पैरिटो ने सन 1906, में ब्रिटिश अर्थशास्त्री डब्ल्यू. ई. जॉनसन ने सन 1913 में और रूसी अर्थशास्त्री स्लास्की ने सन 1915 में किया था। इस विश्लेषण को मांग सिद्धांत का महत्वपूर्ण उपकरण बनाने का श्रेय सन 1934 के बाद सिक्स तथा एलएन को जाता है उन्होंने अपने एक लेख मूल्य सिद्धांत पर पुनर्विचार में इसे वैज्ञानिक रूप में प्रस्तुत किया फिक्स ने अपनी पुस्तक मूल्य तथा पूंजी में इसका विस्तृत वर्णन किया है।

4.5.1.1 तटस्थता वक्र विश्लेषण की मान्यताएँ (Assumptions of Indifference Curve Analysis)

तटस्थता वक्र विश्लेषण निम्नलिखित मान्यताओं पर आधारित है-

1. **विवेकपूर्ण उपभोक्ता** -यह माना जाता है कि उपभोक्ता का व्यवहार विवेकपूर्ण होगा। हम यह मान लेते हैं कि उपभोग निर्णयों से संबंधित स्थितियों के बारे में उपभोक्ता को पूर्ण सूचना प्राप्त है। बाजार में उपलब्ध सभी वस्तुओं तथा सेवाओं के बारे में, उनकी कीमत तथा अपनी मौद्रिक आय के बारे में उपभोक्ता को जानकारी प्राप्त है। इस सूचना के आधार पर उपभोक्ता यह निर्णय ले सकता है कि कौन-सा संयोग बेहतर है अथवा कौन-सा संयोग समान संतुष्टि प्रदान करता है। प्रत्येक उपभोक्ता अपनी सीमित आय से अधिकतम संतुष्टि प्राप्त करने का प्रयास करेगा।

2. **क्रमवाचक उपयोगिता** -तटस्थता वक्र विश्लेषण क्रमवाचक उपयोगिता की मान्यता पर आधारित है। इसे क्रमवाचक उपयोगिता इसलिए कहा जाता है क्योंकि इसे क्रमवाचक संख्याओं के रूप में व्यक्त किया जाता है। क्रमवाचक संख्याएँ वे संख्याएँ हैं जो शृंखलाओं में श्रेणी को व्यक्त करती हैं जैसे प्रथम, द्वितीय और तृतीय। इसके अनुसार उपभोक्ता वस्तुओं के विभिन्न संयोगों के लिए अपनी प्राथमिकताओं को श्रेणियों को व्यक्त कर सकते हैं। उन्हें किसी वस्तु की उपयोगिता को गणनावाचक संख्याओं में व्यक्त करने की आवश्यकता नहीं है। एक उपभोक्ता विभिन्न वस्तुओं से मिलने वाली उपयोगिता की तुलना करके उपयोगिता को 'अधिक' या 'कम' के रूप में व्यक्त करता है न कि उसको 2, 4, 6, 8 आदि संख्याओं के रूप में।

3. **घटती सीमांत प्रतिस्थापन दर** -बोमोल के अनुसार, ''तटस्थता वक्र विश्लेषण की यह मान्यता है कि सीमांत प्रतिस्थापन दर घटती जाती है।'' इसका अभिप्राय यह हुआ कि एक उपभोक्ता के पास जैसे-जैसे किसी वस्तु की मात्र बढ़ती है वह उस वस्तु का अन्य वस्तु से प्रतिस्थापन घटती दर पर करता है।

4. **पूर्ण संतुष्टि नहीं** -उपभोक्ता पूर्ण संतुष्टि के स्तर पर नहीं पहुँचता। उपभोक्ता एक वस्तु की अधिक मात्र को कम मात्र की तुलना में अधिक पसंद करता है। जैसे दो रसगुल्लों के स्थान पर पाँच रसगुल्ले। यदि उपभोक्ता को किसी वस्तु की कम मात्र की तुलना में अधिक मात्र को पसंद करना है, तब उसके पास उस वस्तु की इतनी मात्र होनी चाहिए कि और अधिक लेने से उसे कोई भी संतुष्टि प्राप्त न हो।

5. **चुनाव में सामंजस्य** -उपभोक्ता के व्यवहार में सामंजस्य पाया जाता है। इसक अर्थ हुआ कि उपभोक्ता यदि किसी एक समय में वस्तुओं के A संयोग को वस्तुओं के B संयोग से अधिक पसंद करता है तो वह किसी दूसरे समय में भी वस्तुओं के A संयोग की तुलना में वस्तुओं के B संयोग की अधिक पसंद नहीं करेगा। यदि A > B, तब B > A इसे पढ़ा जाएगा यदि A, B से अधिक (>) है तो B, A । अधिक (>) नहीं हो सकता।

6. **सकर्मकता** -इस विश्लेषण की यह भी मान्यता है कि तटस्थता और प्राथमिकता के संबंध में सकर्मकता पाई जाती है। इसका अभिप्राय यह हुआ कि यदि उपभोक्ता (A) संयोग से (B) संयोग को अधिक पसंद करता है

तथा ष्ठष् संयोग को (B) संयोग से अधिक पसंद करता है तो वह (A) संयोग को (B) संयोग की तुलना में अवश्य ही अधिक पसंद करेगा। इस प्रकार यदि उपभोक्ता (A) तथा (B) के नोट बीच तटस्थ है तथा (B) और (B) के बीच तटस्थ है तो वह (A) और (B) के बीच भी तटस्थ होगा।

4.5.1.2 तटस्थता वक्र क्या है (What is an Indifference Curve)?

तटस्थता वक्र वह वक्र है जो दो वस्तुओं के उन विभिन्न संयोगों को प्रकट करती है जिन से उपभोक्ता को सामान संतुष्टि प्राप्त होती है। इसका अभिप्राय यह हुआ कि एक तटस्थता वक्र पर जितने बिंदु होते हैं वह दो वस्तुओं के उन संयोगों को प्रकट करते हैं जिनसे उपभोक्ता सामान संतुष्टि प्राप्त करता है। क्योंकि प्रत्येक बिंदु द्वारा प्रकट किए गए संयोग से समान संतुष्टि प्राप्त होती है इसलिए उपभोक्ता उनके चुनाव के संबंध में तटस्थ रहता है अर्थात एक प्रस्ताव वक्र पर दिए सभी संयोगों को समान महत्व देता है।

4.5.1.3 तटस्थता अनुसूची (Indifference Schedule)

एक तटस्थता अनुसूची से अभिप्राय एक ऐसी सूची से है जो दो वस्तुओं के विभिन्न संयोगों को दर्शाती है जिससे उपभोक्ता को सामान संतुष्टि प्राप्त होती है। इसीलिए उपभोक्ता इन में से प्रत्येक सहयोग को समान महत्व देता है। अर्थात इनके प्रति वह तटस्थ होता है। मान लीजिए एक उपभोक्ता दो वस्तुएं सेब तथा संतरों का उपभोग करता है; निम्नलिखित तालिका सेब तथा संतरों के उन विभिन्न आयोगों को दर्शाती है जिन से उसे समान संतुष्टि प्राप्त होती है:

तालिका 4.2 तटस्थता अनुसूची

Combinations of Apples and Oranges	Apples	Oranges
A	1+	10
B	2+	7
C	3+	5
D	4+	4

उपरोक्त तालिका यह दर्शाती है कि सेब तथा संतरों के चार संयोगों A,B,C,D से उपभोक्ता सामान संतुष्टि प्राप्त करेगा। संयोग A में 1 सेब तथा 10 संतरे हैं संयोग B में 2 सेब तथा 7 संतरे हैं संयोग C में 3 सेब तथा पांच संतरे हैं और संयोग D में 4 सेब और 4 संतरे हैं। उपभोक्ता सेब लेने के लिए संतरों की कुछ मात्रा का त्याग इस प्रकार कर रहा है कि प्रत्येक संयोग से मिलने वाली संतुष्टि के स्तर में कोई परिवर्तन न हो।

4.5.1.4 तटस्थता वक्र का रेखा चित्र प्रस्तुतिकरण (Graphical Presentation of Indiffrence Curve)

चित्र 4.3 तटस्थता वक्र

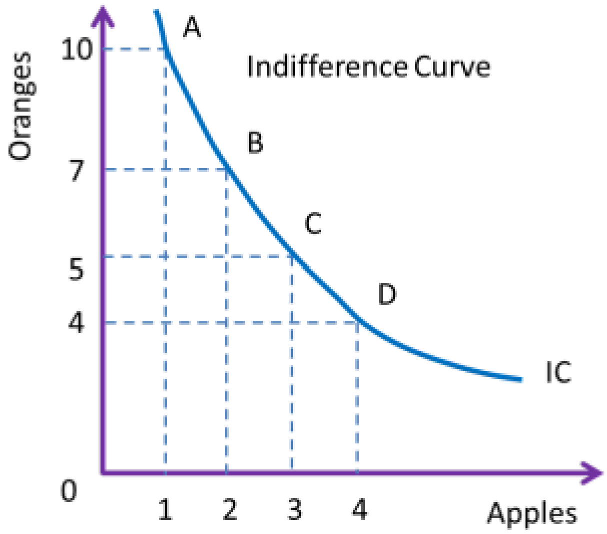

IC वक्र तटस्थता वक्र है। इसके विभिन्न संयोग विभिन्न बिंदुA,B,C तथा D सेब तथा संतरों के ऐसे संयोगों को प्रकट कर रहे हैं जिनसे कि उपभोक्ता को सामान संतुष्टि प्राप्त हो रही है इसलिए इस वक्र को **समान उपयोगिता (Iso-Utility Curve)** वक्र भी कहा जाता है।

4.5.1.5 घटती सीमांत प्रतिस्थापन की दर (Deminishing Marginar Rate of Sustitution)

तटस्थता वक्र के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उपभोक्ता जब एक वस्तु X की अधिक इकाई प्राप्त करता है तो उसकी संतुष्टि में वृद्धि होती है। यदि उपभोक्ता अपने संतुष्टि के स्तर को सामान रखना चाहता है अर्थात वह उसी तटस्थता वक्र पर रहना चाहता है तो उपभोक्ता को Y वस्तु की कुछ इकाइयों का त्याग करना पड़ेगा। अन्य शब्दों में सेब की एक अतिरिक्त मात्रा से प्राप्त होने वाली संतुष्टि के बदले में उसे संतरों की कुछ मात्रा का त्याग करना पड़ेगा जिसकी संतुष्टि सेव से प्राप्त अतिरिक्त संतुष्टि के बराबर है। अन्य शब्दों में

Utility gained from Apple=Utility lost from Orange

प्रोफेसर लर्नर ने अपनी पुस्तक *इकोनॉमिक्स ऑफ कंट्रोल* में इस नियम का प्रतिपादन किया था। इस नियम के अनुसार किसी व्यक्ति के पास एक वस्तु X की जितनी मात्रा बढ़ती जाती है वह दूसरी वस्तु Y का वस्तु X के लिए प्रतिस्थापन घटी दर पर करता जाएगा ताकि वह उसी तटस्थता वक्र पर बना रहे। अन्य शब्दों में वस्तु Y के लिए वस्तु X की प्रतिस्थापन दर घटी जाएगी।

$$MRS_{xy} = -\frac{\Delta Y}{\Delta X} = Slope\ of\ Indifference\ Curve$$

ΔY-वस्तु Y की त्यागी गई मात्रा, ΔX-वस्तु X की प्राप्त की गई अतिरिक्त इकाई।

उपरोक्त तटस्था अनुसूची से ज्ञात होता है कि उपभोक्ता दूसरे सेब के लिए तीन संतरे, तीसरे सेब के लिए दो संतरे, तथा चौथे सेब के लिए एक संतरे का प्रतिस्थापन करेगा अर्थात जैसे-जैसे सेबों की अधिक संख्या लेता जाएगा संतरों की सेबों के लिए सीमांत प्रतिस्थापन दर कम होती जाएगी। क्योंकि यह अवश्य संभावी है इसलिए इसे घटती प्रतिस्थापन दर का नियम कहा जाता है। इस नियम के लागू होने के कुछ मुख्य कारण इस प्रकार है कि (i) विशेष आवश्यकताओं की

संतुष्टि (ii) वस्तुएं अपूर्ण स्थानापन्न होती है (iii) वस्तुओं के वैकल्पिक उपयोग होते हैं। यह नियम **(i) पूर्ण स्थानापन्न तथा (ii) पूर्ण पूरक वस्तुओं के संबंध में लागू नहीं होता।**

4.5.1.6 गणितीय रूप में तटस्थता वक्र का ढलान

किसी एक बिंदु पर वक्र का ढलान उस बिंदु पर स्पर्शरेखा के ढलान से मापा जाता है। एक स्पर्शरेखा का समीकरण कुल व्युत्पन्न (Total Derivative) या कुल अंतर (Total differential) द्वारा दिया जाता है, जो फ़ंक्शन के कुल परिवर्तन को दर्शाता है क्योंकि इसके सभी निर्धारक बदलते हैं।

दो वस्तुओं x और y के मामले में कुल उपयोगिता फलन है

$$U = f(X, Y)$$

एक अनधिमान वक्र का समीकरण है

$$U = f(X, Y) = k$$

जहां k एक स्थिरांक है। उपयोगिता फलन का कुल अंतर (Total differential) है:

$$dU = \frac{\partial U}{\partial Y} dY + \frac{\partial U}{\partial X} dX = 0$$

$$dU = MU_y dY + MU_x dX = 0$$

यह उपयोगिता में कुल परिवर्तन को दर्शाता है क्योंकि दोनों वस्तुओं की मात्रा में परिवर्तन होता है। Y और X (लगभग) में परिवर्तन के कारण U में कुल परिवर्तन, y में परिवर्तन को इसकी सीमांत उपयोगिता से गुणा किया जाता है, साथ ही x में परिवर्तन को इसकी सीमांत उपयोगिता से गुणा किया जाता है के योग के बराबर होता है ।

किसी विशेष अनधिमान वक्र के साथ परिभाषा के अनुसार कुल अंतर शून्य के बराबर होता है। अत: किसी अनधिमान वक्र के लिए

$$dU = MU_y dY + MU_x dX = 0$$

पुनर्व्यवस्थित करने पर हमें प्राप्त होता है

$$-\frac{\partial Y}{\partial X} = \frac{MU_x}{MU_y} = MRS_{xy} \quad Or -\frac{\partial X}{\partial Y} = \frac{MU_y}{MU_x} = MRS_{yx}$$

ध्यान दें कि किसी एक बिंदु पर अनधिमान वक्र का ढलान है

$$MRS_{xy} = MRS_{yx}$$

उदासीनता वक्र मूल बिन्दु के उत्तल होते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि एक उदासीनता वक्र का ढलान घटता है (पूर्ण शब्दों में) जैसे ही हम वक्र के साथ बाईं ओर से नीचे की ओर बढ़ते हैं: वस्तुओं के प्रतिस्थापन की सीमांत दर कम हो

रही है। यह स्वयंसिद्ध (axiom) आत्मनिरीक्षण से लिया गया है, जैसे कार्डिनलिस्ट स्कूल की 'ह्रासमान सीमांत उपयोगिता का नियम '। प्रतिस्थापन की घटती सीमांत दर का स्वयंसिद्ध व्यवहारिक नियम को व्यक्त करता है कि y की इकाइयों की संख्या x की मात्रा बढ़ने पर कम हो जाती है। x की एक अतिरिक्त इकाई प्राप्त करने के लिए y की इकाइयों की संख्या कम हो जाती है। जैसे-जैसे हम अनधिमान वक्र की ओर बढ़ते हैं, वैसे-वैसे y के स्थान पर x को प्रतिस्थापित करना कठिन होता जाता है।

4.5.1.7 तटस्थता वक्र की विशेषताएं Properties of Indifference Curve

1. **तटस्थता वक्र का ढलान सामान्यतया बाएँ से दाएँ नीचे की ओर होता है -**एक तटस्थता वक्र का ढलान बाएँ से दाएँ नीचे की ओर अर्थात् ऋणात्मक होता है। तटस्थता वक्र की यह विशेषता इस मान्यता पर आधारित है कि **उपभोक्ता यदि एक वस्तु की अधिक मात्र का उपयोग करता है तो वह दूसरी वस्तु की कम मात्र का उपयोग करेगा**, तभी वस्तुओं के विभिन्न संयोगों से मिलने वाली संतुष्टि समान होगी। चित्र 4.4 में IC वक्र बाएँ से दाएँ नीचे की ओर ढलान वाले तटस्थता वक्र को प्रकट कर रहा है। जैसा कि वक्र IC द्वारा प्रकट हो रहा है। तब उपभोक्ता को A तथा B संयोगों से समान संतुष्टि प्राप्त हो सकती है क्योंकि A संयोग में B संयोग की तुलना में संतरों की संख्या अधिक है तो B संयोग में सेबों की संख्या अधिक है। अतः तटस्थता वक्र का ढलान IC रेखा की भाँति ऋणात्मक होता है अर्थात् बाएँ से दाएँ नीचे की ओर झुका हुआ, मूल बिन्दु की ओर उन्नतोदर होता है।

चित्र 4.4

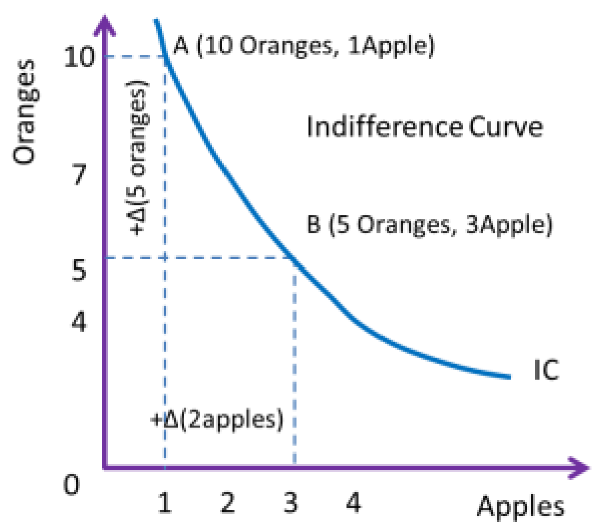

2. **मूल बिन्दु की ओर उन्नतोदर -**तटस्थता वक्र सामान्यतया मूल बिन्दु की ओर उन्नतोदर (नीचे की ओर झुका हुआ) होता है। वक्र उन्नतोदर होने से अभिप्राय मूल बिन्दु की ओर इसके अंदर को झुके होने से है। अन्य शब्दों में, तटस्थता वक्र का ढलान चपटा होता जाता है जैसे-जैसे उस वक्र पर आगे की ओर सरकते जाते हैं। तटस्थता वक्र का ढलान सीमांत प्रतिस्थापन की दर कहलाता है क्योंकि यह उस दर को प्रकट करता है जिस पर उपभोक्ता संतुष्टि के समान स्तर को कायम रखने के लिए एक वस्तु (जैसे सेब) का दूसरी वस्तु (जैसे संतरा) के लिए प्रतिस्थापन करता है। अन्य शब्दों में, तटस्थता वक्र की यह विशेषता **घटती सीमांत प्रतिस्थापन की दर** के नियम पर आधारित है। चित्र 4.5 में तटस्थता वक्र मूल बिन्दु "O" की ओर उन्नतोदर (Convex) है। इससे प्रकट होता है कि सेबों की संतरों के लिए सीमांत प्रतिस्थापन दर घटती जा रही है। इसके अर्थ है कि उपभोक्ता सेबों की जैसे-जैसे अधिक मात्र लेता जाएगा, वह संतरों की कम मात्र का त्याग करना चाहेगा। उपभोक्ता दूसरे अतिरिक्त सेब के लिए 3 संतरों (AB) का त्याग करेगा, तीसरे सेब के लिए

2 संतरों (CD) का तथा चौथे सेब के लिए 1 संतरे (EF) का त्याग करना चाहेगा। वास्तविक जीवन में इसी प्रकार की ही स्थिति होती है। इसीलिए तटस्थता वक्र मूल बिन्दु की ओर उन्नतोदर होती है।

चित्र 4.5

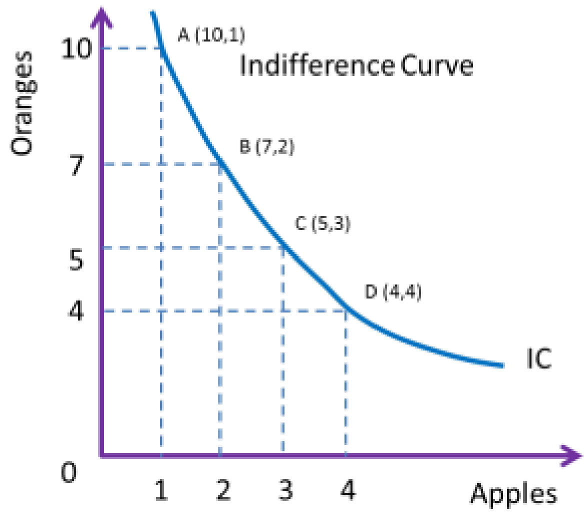

3. **दो तटस्थता वक्र एक दूसरे को न तो छूते और न ही काटते हैं -**प्रत्येक तटस्थता वक्र संतुष्टि के विभिन्न स्तर को प्रकट करता है, इसलिए ये एक दूसरे को न तो छूते और न ही काटते हैं। चित्र 4.6 में दो तटस्थता वक्र IC1 तथा IC2 एक दूसरे को बिन्दु 'A' पर काटते हुए दिखाए गए हैं, परंतु वास्तव में ऐसा संभव नहीं है। तटस्थता वक्र IC1 पर बिन्दु 'A' तथा बिन्दु 'C' समान संतुष्टि वाले संयोगों को प्रकट कर रहे हैं अर्थात् 'A' संयोग से प्राप्त संतुष्टि ='C' संयोग से प्राप्त संतुष्टि।इसी प्रकार तटस्थता वक्र IC2 पर बिन्दु 'A' तथा बिन्दु 'B' समान संतुष्टि को प्रकट कर रहे हैं अर्थात् 'A' संयोग से प्राप्त संतुष्टि =B संयोग से प्राप्त संतुष्टि A इसका अर्थ यह हुआ कि 'B' संयोग से प्राप्त संतुष्टि 'C' संयोग से प्राप्त संतुष्टि के बराबर है, परंतु यह संभव नहीं है क्योंकि संयोग 'B' में संयोग 'C' की तुलना में सेबों की मात्र अधिक है बेशक संतरों की मात्र समान है।

चित्र 4.6

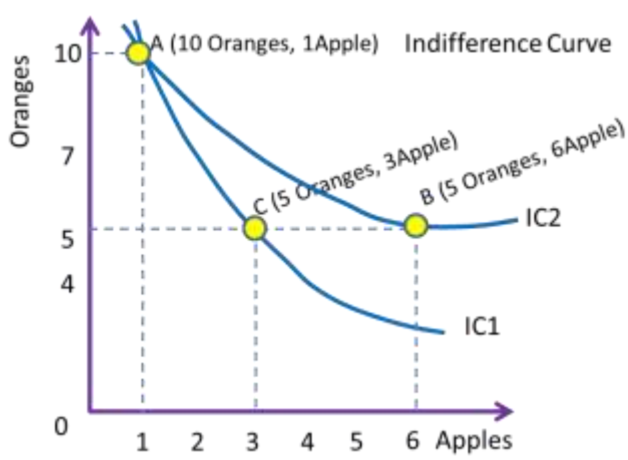

4. **उँचा तटस्थता वक्र संतुष्टि के अधिक स्तर को प्रकट करता है -** तटस्थता वक्रों की यह विशेषता है कि एक तटस्थता मानचित्र में ऊंचा तटस्थता वक्र अपने से नीचे तटस्थता वक्र की अपेक्षा अधिक संतुष्टि प्रकट करता है। इस विशेषता को चित्र 4.7 की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है। चित्र में IC2 उँचा तथा IC1

नीचा तटस्थता वक्र है। IC2 तटस्थता वक्र का B बिन्दु, IC1 तटस्थता वक्र के बिन्दु । की अपेक्षा सेबों की अधिक मात्र तथा संतरों की समान मात्र प्रकट कर रहा है। अतएव IC2 तटस्थता वक्र के बिन्द् B से IC1 तटस्थता वक्र के बिन्दु A की अपेक्षा अधिक संतुष्टि प्राप्त होगी। इससे स्पष्ट हो जाता है कि तटस्थता वक्र जितना उँचा होगा उतनी ही अधिक संतुष्टि प्रकट करेगा।

चित्र 4.7

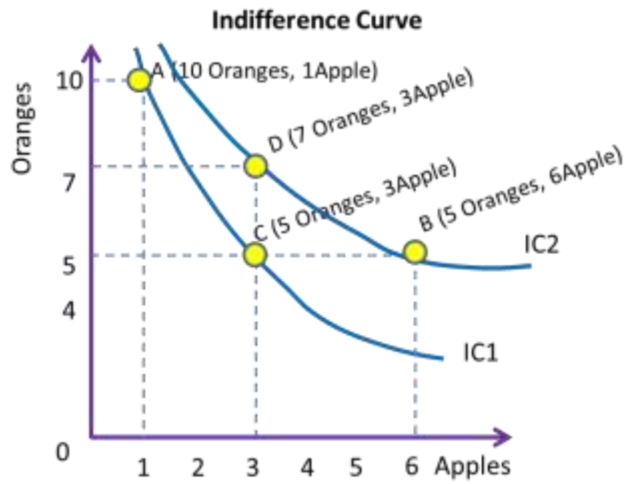

5. **तटस्थता वक्र सामान्यतया न तो OX-अक्ष को और न ही OX-अक्ष को छूता है -** यह मान लिया जाये कि उपभोक्ता वस्तुओं के संयोग खरीदता है। तो तटस्थता वक्र न तो OX-अक्ष और न ही OX-अक्ष को छूता है। यदि तटस्थता वक्र किसी भी अक्ष को छूता है तो इसका अर्थ यह होगा कि उपभोक्ता केवल एक ही वस्तु प्राप्त करना चाहता है। उसकी दूसरी वस्तु के लिए माँग शून्य है। ऐसा केवल उस समय हो सकता है जब दो वस्तुओं में से एक वस्तु मुद्रा है। यदि OY-अक्ष पर मुद्रा की मात्र प्रकट की गई है तो तटस्थता वक्र OY-अक्ष को स्पर्श कर सकता है। जैसा कि चित्र 4.8 में दिखाया गया है कि IC तटस्थता वक्र OY-अक्ष को बिन्दु M पर छू रहा है। इसका अर्थ यह हुआ कि उपभोक्ता मुद्रा की OM मात्र अपने पास रखना चाहता है और वह संतरों की कोई भी मात्र खरीदना नहीं चाहता। इसके विपरीत बिन्द् N से ज्ञात होता है कि उपभोक्ता मुद्रा की OP मात्र तथा सेबों की OQ मात्र के संयोग को पसंद करता है। इस संयोग से उपभोक्ता को उतनी ही संतुष्टि प्राप्त होगी जितनी उसे केवल मुद्रा को अपने पास रखने से अर्थात् OM संयोग से प्राप्त होती है।

चित्र 4.8

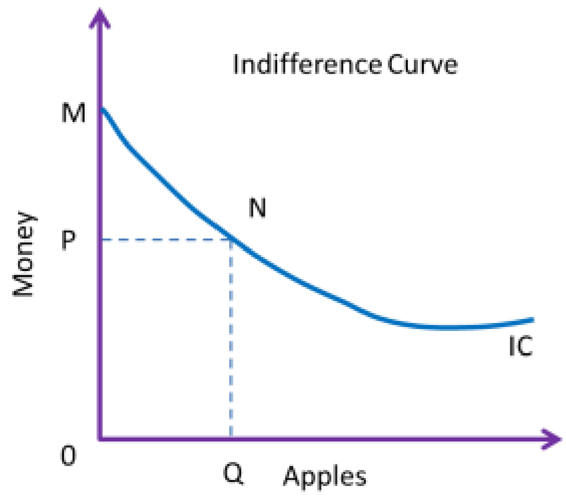

6. तटस्थता वक्रों का एक-दूसरे के समानांतर होना आवश्यक नहीं - जैसा कि चित्र 4.9 में दिखाया गया है कि तटस्थता वक्र एक दूसरे के समानांतर हो भी सकते हैं अथवा नहीं भी हो सकते। यह इस बात पर निर्भर करता है कि तटस्थता वक्र मानचित्र पर बनाई गई दो तटस्थता वक्रों की सीमांत प्रतिस्थापन दर क्या है। यदि दो वक्रों के विभिन्न बिन्दुओं की सीमांत प्रतिस्थापन दर एक स्थिर अनुपात में ही घटती है तो ये वक्र समानांतर होंगे अन्यथा ये समानांतर नहीं होगे।

चित्र 4.9

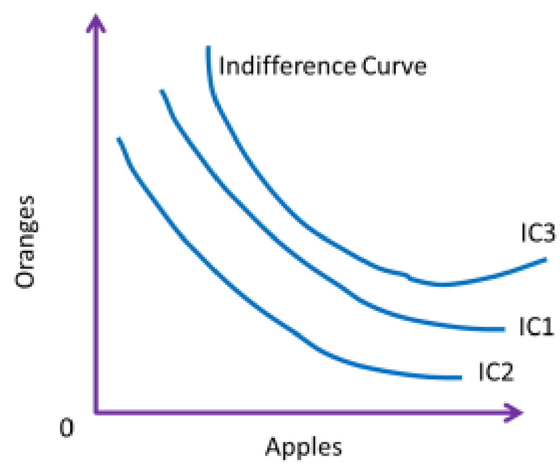

4.5.2 बजट रेखा या कीमत रेखा (Budget Line or Price Line)

तटस्थता वक्र स्वयं उपभोक्ता के व्यवहार की सामान्यता भविष्यवाणी नहीं कर सकता क्योंकि यह दो महत्वपूर्ण सूचनाओं को छोड़ देता है। वह है उपभोक्ता की आय तथा वस्तुओं की कीमतें। कीमत और आय की सूचना एक तटस्थता रेखा चित्र में एक अन्य रेखा द्वारा प्रदान की जाती है; इस रेखा को बजट रेखा या कीमत रेखा कहा जाता है। तटस्थता वक्र विश्लेषण द्वारा उपभोक्ता संतुलन की स्थिति का ज्ञान प्राप्त करने के लिए बजट रेखा का अध्ययन आवश्यक है। इस रेखा को कीमत रेखा (Price line), उपभोग संभावित रेखा (Consumption Possibility Curve) अथवा प्राप्त होने वाले संयोग ओं की रेखा (Line of Attainable Combinations) भी कहा जाता है।

उपभोक्ता का वास्तविक क्रय उसकी आय तथा उपभोग की वस्तुओं की कीमतों पर निर्भर करता है। इस प्रकार आय तथा उपभोग वस्तुओं की कीमतें उपभोक्ता के लिए उपभोग सीमा निर्धारित करती हैं।

बजट रेखा या कीमत रेखा वह रेखा है जो दो वस्तुओं के ऐसे सभी संयोगों को प्रदर्शित करती है जिन्हें उपभोक्ता दी गई आय तथा वस्तु कीमतों के साथ खरीद सकता है।

मान लीजिए उपभोक्ता की आय ₹4 है और वह सेबों और संतरों पर अपनी सारी आए खर्च करना चाहता है। संतरे की कीमत 50 पैसे प्रति संतरा तथा सेब की कीमत ₹1 प्रति सेव है। अपनी निश्चित आय तथा सेबों और संतरों की निश्चित कीमत से उपभोक्ता इन दोनों वस्तुओं के विभिन्न संयोग खरीद सकता है। उन्हें नीचे दी गई तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका 4.3

Income (Y^*) in ₹	Apple (Good X) (Price ₹1/Apple (X))	Orange (Good Y)(Price ₹0.50/Orange (Y))
4	0	8
4	1	6
4	2	4
4	3	2
4	4	0

चित्र 4.10 कीमत रेखा

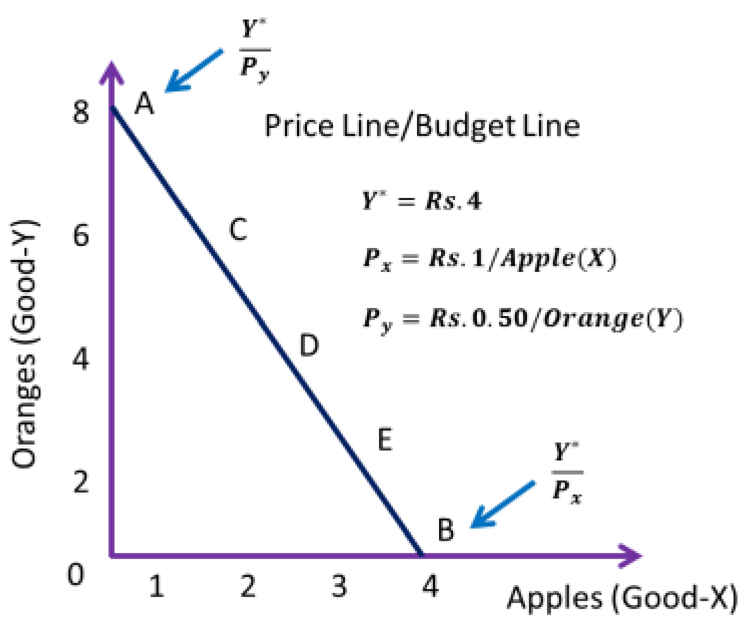

तालिका से ज्ञात होता है कि यदि उपभोक्ता केवल संतरे खरीदना चाहता है तो वह अपनी ₹4 की निश्चित आय से अधिक से अधिक 8 संतरे खरीद सकता है। इसके विपरीत यदि उपभोक्ता केवल सेब खरीदना चाहता है तो वह अपनी निश्चित आय से अधिक से अधिक 4 सेव खरीद सकता है। सेबों और संतरों की इन सीमाओं के बीच बनने वाले संयोग

जैसे 6 संतरे और एक सेब, चार संतरे दो सेब, दो संतरे तीन सेब भी खरीद सकता है। रेखा चित्र 4.10 में दो वस्तुओं के विभिन्न संयोगों को AB रेखा द्वारा दर्शाया गया है। इस रेखा को बजट रेखा या कीमत रेखा कहा जाता है। क्योंकि हम मान कर चलते हैं कि उपभोक्ता अपनी आय इन दोनों वस्तुओं के उपभोग पर खर्च करता है इसी लिए AB रेखा बजट रेखा या कीमत रेखा उपभोक्ता की सीमा रेखा है। बजट रेखा का ढलान उसके द्वारा प्रकट की गई दोनों वस्तुओं सेबों और संतरों की कीमत का अनुपात है।

उपभोक्ता की बजट बाधा। उपभोक्ता की एक निश्चित आय होती है जो उसके अधिकतम व्यवहार की सीमा निर्धारित करती है। उपयोगिता को अधिकतम करने के प्रयास में आय एक बाधा के रूप में कार्य करती है। दो वस्तुओं के मामले में आय बाधा (income constraint) को लिखा जा सकता है

$$Y = P_{x.}Q_x + P_y.Q_y$$

जब भी हम एक सीधी रेखा (नकारात्मक अथवा सकारात्मक) का ढलान ज्ञात करते हैं तो उसका सूत्र होता है ऊर्ध्वाधर भाग (vertical part) बटे (÷) क्षितिज भाग (horizontal part) अर्थात

$$Slope\ of\ budget\ Line = \frac{OA}{OB} \quad \leftarrow \textit{चित्र के अनुसार}$$

यदि एक उपभोक्ता अपनी समस्त आय को किसी एक वस्तु X के ऊपर व्यय करता है तो वह X की कितनी मात्राएं खरीद सकता है यदि वह Y वस्तु की कोई भी मात्रा ना खरीदें;

$$Y^* = P_{x.}Q_x + P_y.(0)$$

$$\frac{Y^*}{P_x} = Q_x = \textit{ जोकि चित्र में} OB\ (4\ apples\ or\ X)\ \textit{भाग के समान है}$$

इसी प्रकार यदि एक उपभोक्ता अपनी समस्त आय को केवल वस्तु Y को खरीदने के लिए खर्च करता है तथा X की कोई भी मात्रा नहीं खरीदा तो वह Y की अधिकतम कितनी मात्राएं खरीद सकता है यह इस प्रकार है;

$$Y^* = P_{x.}(0) + P_y.Q_y$$

$$\frac{Y^*}{P_y} = Q_y = \textit{ जोकि चित्र में} OA\ (8\ oranges/Y)\ \textit{भाग के समान है}$$

OA भाग को OB भाग से भाग (divide) देने पर हमें कीमत रेखा अथवा बजट रेखा का ढलान प्राप्त होता है जैसा कि नीचे दिखाया गया है

$$Slope\ of\ Budget\ Line\ (AB) = \frac{OA}{OB} = \frac{\frac{Y^*}{P_y}}{\frac{Y^*}{P_x}} = \frac{Y^*}{P_y} \times \frac{P_x}{Y^*} = \frac{P_x}{P_y} = \frac{1}{0.50} = 2$$

$$\frac{P_x}{P_y} = \frac{1}{0.50} = 2 \ldots \textit{ उपरोक्त कीमत रेखा के अनुसार}$$

यहां पर हमें प्राप्त होता है की कीमत रेखा का ढलान वस्तु X की कीमत (Px) तथा वस्तु Y की कीमत (Py) के अनुपात के बराबर है जो कि हमने तटस्थता वक्र के ढलान में भी प्राप्त किया था

4.5.3 उपभोक्ता के संतुलन की व्युत्पत्ति (Derivation of the Equilibrium of the Consumer)

जब उपभोक्ता अपनी आय और बाजार कीमतों को देखते हुए अपनी उपयोगिता को अधिकतम करता है तो वह संतुलन में होता है। उपभोक्ता के संतुलन में रहने के लिए दो शर्तों को पूरा करना होगा।

पहली शर्त यह है कि प्रतिस्थापन की सीमांत दर, वस्तु की कीमतों के अनुपात के बराबर हो

$$MRS_{xy} = \frac{MU_x}{MU_y} = \frac{P_x}{P_y}$$

यह संतुलन के लिए एक आवश्यक शर्त है लेकिन पर्याप्त शर्त नहीं है। दूसरी शर्त यह है कि अनधिमान वक्र मूल बिन्दु के उत्तल (convex to origin) हों। यह स्थिति घटती हुई MRSx,y• के अभिगृहीत द्वारा पूरी होती है, जिसमें कहा गया है कि जैसे-जैसे हम वक्र के साथ-साथ बाईं ओर से दाईं ओर बढ़ते हैं, उदासीनता वक्र का ढलान घटता है (निरपेक्ष रूप में)।

4.5.3.1 उपभोक्ता के संतुलन की चित्रमय प्रस्तुति (Graphical Presentation of the Equilibrium of the Consumer)

उपभोक्ता और उसकी बजट रेखा के उदासीनता मानचित्र को देखते हुए, **संतुलन** को उच्चतम संभव उदासीनता वक्र के साथ बजट रेखा की स्पर्शरेखा के बिंदु द्वारा परिभाषित किया जाता है (चित्र 4.11 में इंगित)।

चित्र 4.11 उपभोक्ता संतुलन

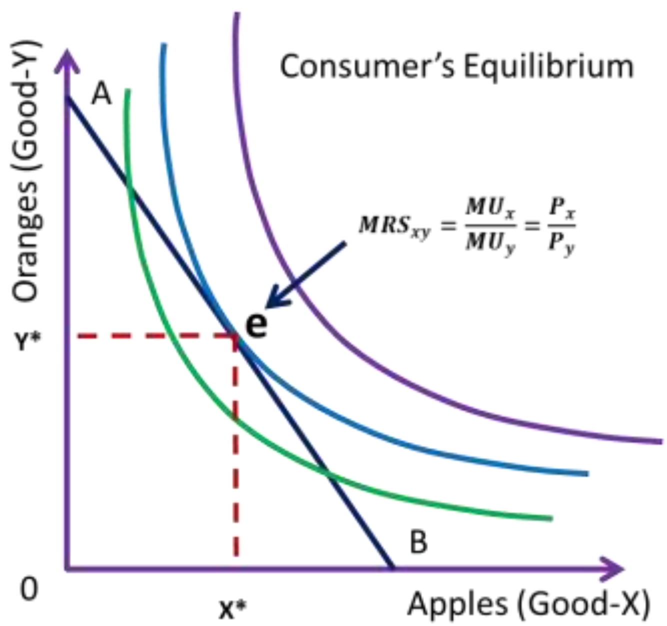

स्पर्शरेखा के बिंदु पर बजट रेखा (Px/Py) और उदासीनता वक्र (MRSx,y = MUx/MUy) के ढलान बराबर होते हैं:

$$\frac{MU_x}{MU_y} = \frac{P_x}{P_y}$$

इस प्रकार प्रथम-क्रम की शर्त को दो प्रासंगिक वक्रों की स्पर्शरेखा के बिंदु द्वारा रेखांकन द्वारा निरूपित किया जाता है। दूसरे क्रम की शर्त उदासीनता वक्रों के उत्तल (convex to origin) आकार से निहित है। उपभोक्ता दो वस्तुओं के x* और y* खरीदकर अपनी उपयोगिता को अधिकतम करता है।

4.5.4 बजट रेखा या कीमत रेखा का स्थानांतरण (Shifts in Budget Line/Price Line)

बजट रेखा की स्थिति तथा ढलान दो तत्वों पर निर्भर करता है उपभोक्ता की आय और नंबर दो उन दो वस्तुओं की कीमतें जिन्हें उपभोक्ता खरीदना चाहता है बजट रेखा में निम्न प्रकार से परिवर्तन हो सकता है

4.5.4.1 आय में परिवर्तन (Change in Income):

यदि दो वस्तुओं की कीमत में परिवर्तन ना हो परंतु उपभोक्ता की आय या बजट में परिवर्तन हो जाए तो कीमत रेखा स्थानांतरित हो जाती है। आय बढ़ने से बजट रेखा ऊपर की ओर सड़क जाएगी (A'B') और आय कम होने से बजट रेखा (A"B") नीचे की ओर सरक जाएगी। ऊपर की ओर से रखने का कारण यह है कि अब अब उपभोक्ता उन दो वस्तुओं की अधिक मात्राएं खरीद सकता है और नीचे की ओर से रखने का कारण यह है कि अब उसकी आय कम हो चुकी है परंतु वस्तुओं की कीमत अपरिवर्तित है तो इसलिए उपभोक्ता उतनी आय से कम वस्तुएं खरीद पाएगा। जैसा कि रेखा चित्र 4.12 में दर्शाया गया है यदि उपभोक्ता की आय ₹4 से बढ़कर ₹8 हो जाती है तो वह Y वस्तु की अधिकतम 16 इकाइयों तथा वस्तु की एक्स 8 इकाइयां खरीद सकता है और यदि उपभोक्ता की आय कम होकर ₹2 हो जाती है तो वह X वस्तु की अधिकतम 2 इकाइयां तथा Y वस्तु की अधिकतम 4 इकाइयां खरीद पाएगा। इसके मध्य में वह कोई और संयोग C,D भी खरीद सकता है। परंतु तीनों कीमत रेखाओं का ढलान सामान रहेगा क्योंकि वस्तुओं की कीमतों में कोई सापेक्षिक परिवर्तन नहीं हुआ है।

चित्र 4.12

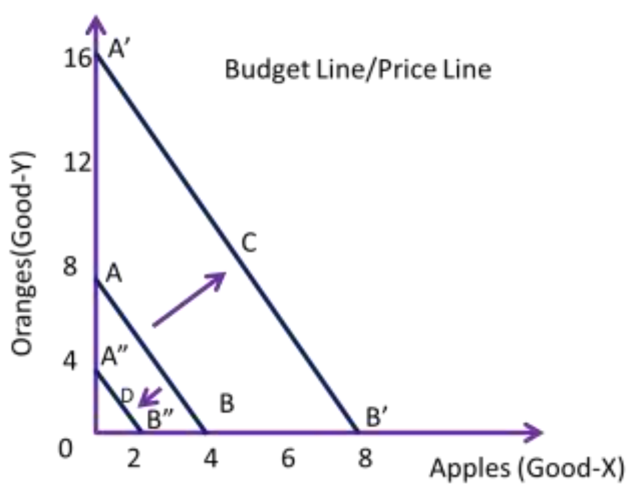

4.5.4.2 सभी कीमतों में अनुपातिक परिवर्तन

जब उपभोक्ता की मौद्रिक आय स्थिर रहने पर सभी कीमतों में एक ही अनुपात में परिवर्तन होता है तब बजट रेखा में समानांतर खिसकाव होता है कीमतें बढ़ने पर यह मूल बिंदु की ओर और कीमतें घटने पर यह मूल बिंदु से दूर की ओर सरक जाती है। अतएव कीमतों में अनुपातिक परिवर्तन के फल स्वरुप बजट रेखा की स्थिति में परिवर्तन आएगा परंतु बजट रेखा के ढलान में परिवर्तन नहीं आएगा। कीमतों के घटने पर यह ऊपर की ओर सरक जाएगी तथा कीमतों के बढ़ने पर यह नीचे की ओर सड़क जाएगी। इसका वही प्रभाव पड़ेगा जो वास्तविक आय में परिवर्तन का प्रभाव पड़ता है। रेखा चित्र 4.13 से स्पष्ट हो जाता है यदि सेब की कीमत 50 पैसे प्रति सेब तथा संतरे की कीमत 25 पैसे प्रति संतरा हो जाए तो इससे उपभोक्ता की वास्तविक आय में वृद्धि होगी। अब वह सेबों तथा संतरों की अधिक मात्राएं खरीद सकता है; जिस कारण कीमत रेखा ऊपर की ओर सड़क जाएगी। अब वह ₹4 की अपनी मौद्रिक आय से अधिकतम 16 इकाइयां वस्तु अधिकतम की तथा अधिकतम 4 इकाइयां वस्तु की खरीद सकता है। यदि वस्तुओं की कीमतें बढ़ जाए अर्थात सेब की कीमत ₹2 प्रति सेब हो जाए तथा संतरे की कीमत ₹1 प्रति संतरा हो जाए तो इससे उपभोक्ता की वास्तविक आय कम हो जाएगी। अब वह अपनी ₹4 की मौद्रिक आय से अधिकतम 2 इकाइयां सेब की तथा 4 इकाइयां संतों की खरीद सकता है।

चित्र 4.13

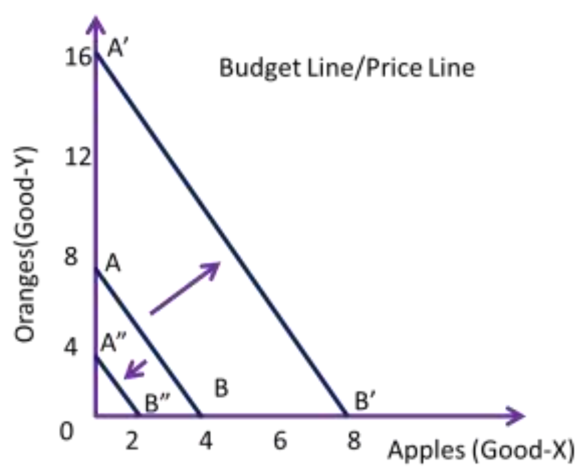

4.5.4.3 केवल एक वस्तु की कीमत में परिवर्तन (Change in the Price of Only One Commodity)

जब उपभोक्ता की मौद्रिक आय तथा एक वस्तु की कीमत स्थिर रहती है परंतु दूसरी वस्तु की कीमत में परिवर्तन आता है तब बजट रेखा के ढलान में भी परिवर्तन आ जाता है। इसका प्रभाव यह होगा की कीमत रेखा का एक सिरा अपने पहले स्थान पर ही बना रहेगा परंतु जिस वस्तु की कीमत में परिवर्तन आया है उस वस्तु की ओर वाला सिरा, यदि कीमत बढ़ती है तो अपने प्रारंभिक स्थान से पीछे अर्थात मूल बिंदु की ओर सरक जाएगा; परंतु यदि कीमत कम होती है तो अपने प्रारंभिक स्थान से आगे की ओर सरक जाएगा। अपने उदाहरण के अनुसार हम मान लेते हैं कि यदि सेब की कीमत ₹1 से कम होकर 50 पैसे प्रति सेब हो जाती है तो कीमत रेखा का स्थानांतरण बाहर की तरफ होगा; और अब यह कीमत रेखा AB से बदलकर AB′ हो जाएगी। और यदि हम मान ले कि सेब की कीमत ₹1 से बढ़कर ₹2 प्रति सेब हो जाती है तो कीमत रेखा का स्थानांतरण अंदर की ओर होगा अर्थात अब यह AB से बदलकर AB″ हो जाएगी (चित्र 4.14)।

चित्र 4.14

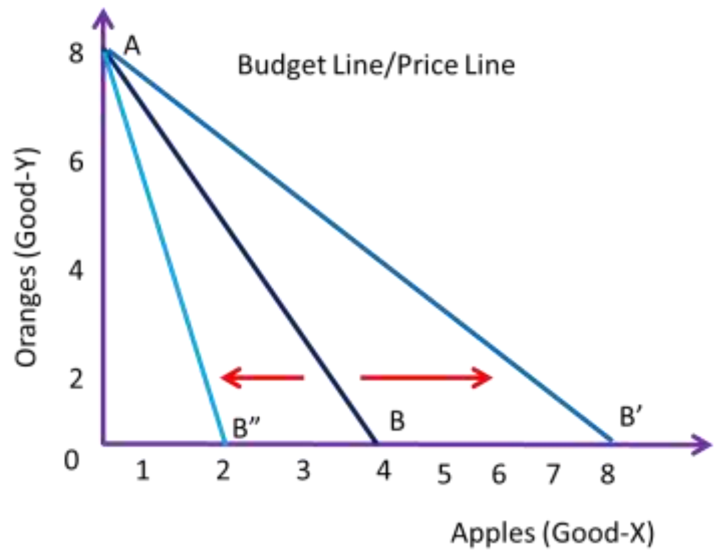

4.5.5 उदासीनता-वक्र दृष्टिकोण का उपयोग करके मांग वक्र की व्युत्पत्ति (Derivation of the Demand Curve using the Indifference-Curves Approach)

जैसे ही किसी वस्तु की कीमत, उदाहरण के लिए x की कीमत गिरती है, उपभोक्ता की क्रय शक्ति में वृद्धि के कारण उपभोक्ता की बजट रेखा अपनी प्रारंभिक स्थिति (AB) से एक नई स्थिति (AB') में दायीं ओर शिफ्ट हो जाती है । अधिक क्रय शक्ति के साथ उपभोक्ता अधिक X (और अधिक Y) खरीद सकता है। नई बजट रेखा एक उच्च उदासीनता वक्र (जैसे वक्र II) के स्पर्शरिखा है। नया संतुलन (e2) मूल संतुलन (e1) (सामान्य वस्तुओं के लिए) के दाईं ओर होता है। यह दर्शाता है कि जैसे-जैसे कीमत गिरती है, अधिक वस्तु खरीदी जाएगी। यदि हम x की कीमत को लगातार गिरने देते हैं और हम क्रमिक बजट रेखाओं और उच्च उदासीनता वक्रों की स्पर्शरिखा के बिंदुओं को जोड़ते हैं तो हम तथाकथित कीमत उपभोग रेखा (Price Consumption Line/Curve-PCC) बनाते हैं, जिससे हम वस्तु x के लिए मांग वक्र प्राप्त सकते हैं। बिंदु e1 पर उपभोक्ता P1 की कीमत पर X1 मात्रा खरीदता है। बिंदु e2 पर, P2 कीमत पर, जोकि P1 से कम है, और अधिक X2 (मांग की गई मात्रा बढ़कर x 2 हो गई) मात्रा खरीदता है, और इसी तरह आगे भी। जैसा कि चित्र 2.15 में दिखाया गया है, हम कीमत उपभोग रेखा (Price Consumption Curve-PCC) के विभिन्न संतुलन बिंदुओं द्वारा परिभाषित *कीमत तथा मांगी गई मात्रा* के विभिन्न संयोगओं से मांग वक्र खींच सकते हैं ।

सामान्य वस्तुओं के लिए मांग वक्र में हमेशा एक नकारात्मक ढलान होगा, जो 'मांग के नियम' को दर्शाता है, (कीमत गिरने पर खरीदी गई मात्रा बढ़ जाती है)।

चित्र 2.15

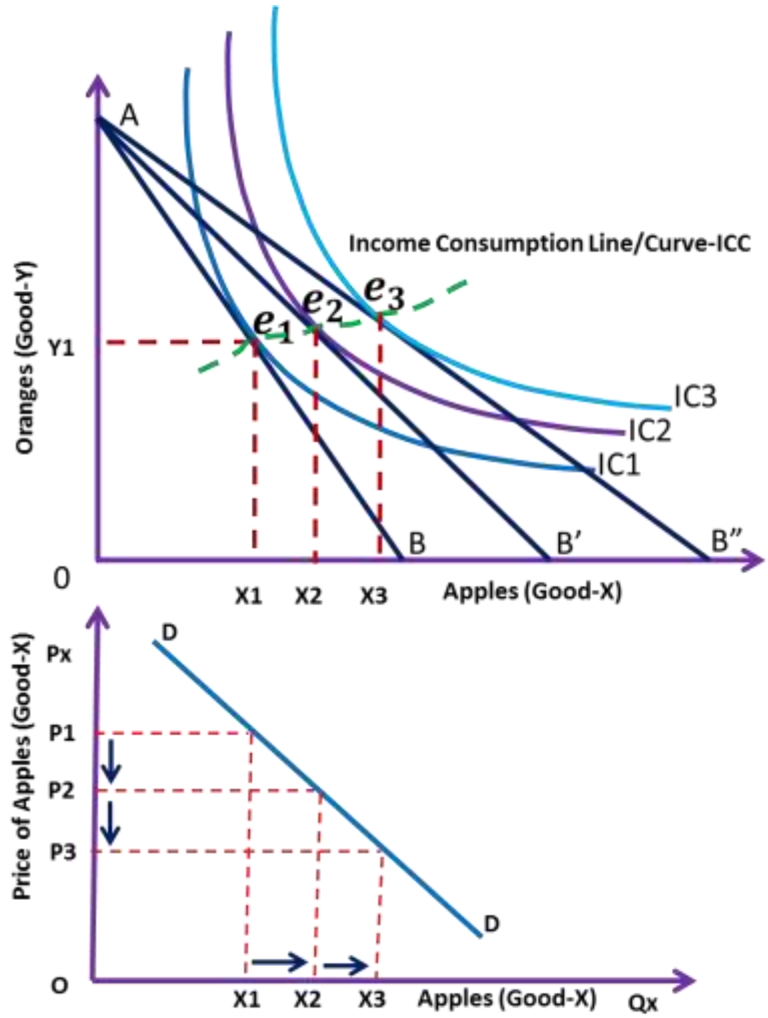

उदासीनता-वक्र दृष्टिकोण में 'मांग का नियम ' स्लटस्की के प्रमेय के रूप में जाना जाता है, जो बताता है कि मूल्य परिवर्तन का *प्रतिस्थापन प्रभाव हमेशा नकारात्मक* होता है। स्लटस्की के प्रमेय के औपचारिक प्रमाण में परिष्कृत गणित शामिल है। हालाँकि, हम इस प्रमेय के निहितार्थों को आरेखीय रूप से दिखा सकते हैं।

चित्र 2.16

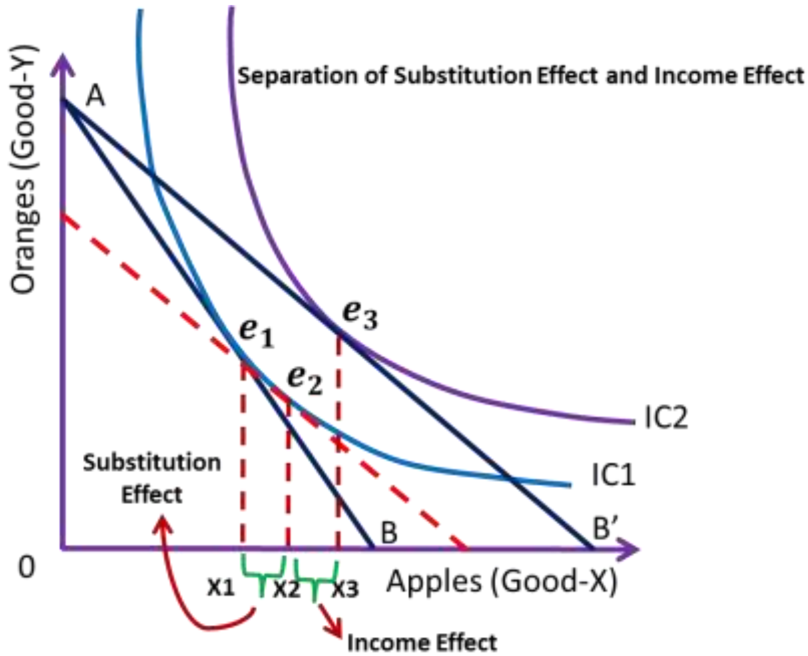

हमने देखा कि P1 से P2 तक की कीमत में गिरावट के परिणामस्वरूप मांग की गई मात्रा में X1 से X2 तक की वृद्धि हुई। यह ***कुल मूल्य/ कीमत प्रभाव*** है जिसे दो अलग-अलग प्रभावों, ***एक प्रतिस्थापन प्रभाव*** और एक ***आय प्रभाव*** में विभाजित किया जा सकता है। **प्रतिस्थापन प्रभाव** आय को 'समायोजित' करने के बाद ताकि उपभोक्ता की वास्तविक क्रय शक्ति पहले की तरह ही बनी रहे, वस्तु की कीमत में गिरावट के फल स्वरूप खरीदी गई मात्रा में वृद्धि है। आय में इस समायोजन को क्षतिपूर्ति परिवर्तन कहा जाता है और इसे नई बजट रेखा के समानांतर शिफ्ट द्वारा दिखाया जाता जब तक कि यह प्रारंभिक उदासीनता वक्र के स्पर्शरिखा न हो जाए। क्षतिपूर्ति परिवर्तन का उद्देश्य उपभोक्ता को कीमत परिवर्तन से पहले वाले संतुष्टि के समान स्तर पर बने रहने की अनुमति देना है।

क्षतिपूर्ति परिवर्तन का उपयोग इसलिए किया जाता है ताकि उपभोक्ता कीमत परिवर्तन से पहले वाले संतुष्टि के स्तर पर बना रहे। क्षतिपूर्ति बजट रेखा पहले वाले तटस्थता वक्र IC1 से बिंदु E2 स्पर्श होकर जाती है पर जो कि मूल संतुलन बिंदु E1 के दाएं तरफ पड़ता है ऐसा इसलिए है क्योंकि जो क्षतिपूर्ति बजट रेखा है नई कीमत रेखा के समानांतर है और नई कीमत रेखा पहले वाली कीमत रेखा की तुलना में कम ढाल वाली है क्योंकि वस्तु X की कीमत कम हो जाने के कारण यह कीमत रेखा क्षेतीज अक्ष (horizontal axis) पर दाएं तरफ शिफ्ट हो गई है। बिंदु E1 से E2 तक का *परिवर्तन कीमत परिवर्तन के प्रतिस्थापन प्रभाव* को दर्शाता है क्योंकि उपभोक्ता अब X वस्तु की अधिक मात्रा खरीदेगा क्योंकि यह सस्ती हो गई है अर्थात Y को X के लिए प्रतिस्थापित करेगा। हालाँकि, क्षतिपूर्ति परिवर्तन एक ऐसा उपकरण है जो प्रतिस्थापन प्रभाव को अलग करने में सक्षम बनाता है, लेकिन उपभोक्ता के नए संतुलन को नहीं दिखाता है। यह उच्च उदासीनता वक्र IC2 पर बिंदु e3 द्वारा परिभाषित किया गया है। उपभोक्ता के पास वास्तव में एक उच्च क्रय शक्ति है, और, यदि वस्तु सामान्य है, तो वह अपनी बढ़ी हुई वास्तविक आय का कुछ हिस्सा x पर खर्च करेगा, और इसलिए उपभोक्ता X2 से X3 की ओर बढ़ रहा है। *यह कीमत परिवर्तन का आय प्रभाव है।* सामान्य वस्तुओं के लिए मूल्य परिवर्तन का आय प्रभाव नकारात्मक होता है और यह नकारात्मक प्रतिस्थापन प्रभाव को पुष्ट करता है।

हालांकि, यदि, वस्तु निम्न कोटि की है, तो आय प्रभाव सकारात्मक होगा: जैसे-जैसे क्रय शक्ति बढ़ती है, X की कम मात्रा खरीदी जाएगी। फिर भी अधिकांश निम्न कोटि की वस्तुओं के लिए नकारात्मक प्रतिस्थापन प्रभाव सकारात्मक आय प्रभाव की क्षतिपूर्ति से अधिक होगा, जिससे कुल कीमत प्रभाव नकारात्मक होगा। इस प्रकार नकारात्मक प्रतिस्थापन प्रभाव ज्यादातर मामलों में 'मांग के नियम' को स्थापित करने के लिए पर्याप्त है।

('मांग के नियम ' का लागू नहीं होना तब होता जब आय प्रभाव सकारात्मक हो और बहुत मजबूत हो यह गिफेन वस्तुओं का मामला है, जो निम्न कोटि की वस्तु होती है और उनकी मांग वक्र में सकारात्मक ढलान है। वास्तविक जीवन में यह कम ही देखने को मिलती।)

4.6 अपनी प्रगति की जाँच करें (Check Your Progress)

1. कुल उपयोगिता अधिकतम होती है जब सीमांत उपयोगिता

(A).धनात्मक होती है (B). ऋणात्मक होती है (C). शून्य होती है (D).इनमें से कोई नहीं

2. पूर्ण तृप्ति के बिंदु पर:

(A).कुल उपयोगिता न्यूनतम होती है (B).अधिकतम होती है (C). शून्य होती है (D).अनंत होती है

3. घटती हुई सीमांत उपयोगिता का विचार प्रस्तुत करने वाले पहले व्यक्ति थे:

(A).मार्शल (B).गोसन (C).कैनन (D).वालरस

4. जब सीमांत उपयोगिता ऋणात्मक होती है तो कुल उपयोगिता:

(A).बढ़ती है (B).स्थिर रहती है (C).घटती है (D). शून्य होती है

5. हीरे का मूल्य अधिक होता है क्योंकि इसकी:

(A).सीमांत उपयोगिता अधिक होती है (B).सीमांत उपयोगिता कम होती है (C).सीमांत उपयोगिता शून्य होती है (D).कुल उपयोगिता अधिक होती है

6. उपभोक्ता संतुलन में होगा जब:

$(A).\frac{MU_X}{MU_Y} > \frac{P_X}{P_Y}$ $(B).\frac{MU_X}{MU_Y} < \frac{P_X}{P_Y}$ $(C).\frac{MU_X}{MU_Y} = \frac{P_X}{P_Y}$ $(D).$ *उपर्युक्त में से कोई नहीं*

7.तटस्थता वक्र वह वक्र है जिस पर स्थित दो वस्तुओं के विभिन्न संयोग उपभोक्ता को निम्न में से कौन-सी संतुष्टि प्रदान करते हैं

(A).ऋणात्मक (B). समान (C).न्यूनतम (D). इनमें से कोई नहीं

8. उपभोक्ता संतुलन वह स्थिति है जिसमें उपभोक्ता अपनी निश्चित आय और बाजार कीमतों से

(A). ऋणात्मक संतुष्टि प्राप्त करता है (B).न्यूनतम संतुष्टि प्राप्त करता है (C).अधिकतम संतुष्टि प्राप्त करता है (D).0 संतुष्टि प्राप्त करता है

9. उपभोक्ता संतुलन की स्थिति में होता है

(A).जहां कीमत रेखा तटस्थता वक्र को काटती है (B).कीमत रेखा तटस्थता वक्र के समानांतर होती है (C).कीमत रेखा तटस्थता वक्र की स्पर्श रेखा होती है (D).तटस्थता वक्र एक दूसरे को काटते हैं

10. तटस्थता वक्र मूल बिंदु के

(A). नतोदर (concave) होता है (B). उन्नतोदर (Convex) होता है (C). समकोणीय झुकी हुई होती है (D).मूल बिंदु से होकर गुजरती है

11. तटस्थता वक्र समकोणीय होती है

(A).पूर्ण स्थानापन्न वस्तुओं के लिए (B).पूरक वस्तुओं के लिए (C).सामान्य वस्तुओं के लिए (D).निम्नकोटि की वस्तुओं के लिए

4.7 सारांश (Summary)

इस अध्याय के अध्ययन से हमने जाना कि उपभोक्ता के व्यवहार के निर्धारण में उपयोगिता की अवधारणा का क्या महत्व है। उपयोगिता क्या होती है। यह कितने प्रकार की होती है। सीमांत उपयोगिता का क्या महत्व है। घटती सीमांत उपयोगिता के नियम का क्या महत्व है। तटस्थता वक्र विश्लेषण में घटती सीमांत उपयोगिता तथा घटती सीमांत प्रतिस्थापन दर के नियम का क्या महत्व है। उपभोक्ता संतुलन को कैसे प्राप्त करता है। तटस्थता वक्र की विशेषताओं के बारे में विस्तार से जाना। कीमत रेखा तथा इसकी विशेषताओं के बारे में पढ़ा और हम यह समझ पाए कि कीमत रेखा तथा तटस्थता वक्र किस प्रकार उपभोक्ता के लिए मांग वक्र उत्पन्न करते हैं। उपभोक्ता की आय तथा वस्तुओं की कीमत में होने वाले परिवर्तन का उपभोक्ता के संतुलन पर क्या प्रभाव पड़ता है। सीमांत उपयोगिता तथा कुल उपयोगिता के मध्य क्या संबंध है इत्यादि।

4.8 कीवर्ड (Keywords)

उपयोगिता: उपयोगिता किसी वस्तु की क्षमता अथवा वह गुण है जिससे मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। उपयोगिता लाभकारक भी हो सकती है और हानिकारक भी हो सकती है।

सीमांत उपयोगिता: सीमांत उपयोगिता वस्तु की एक अतिरिक्त इकाई के उपभोग द्वारा कुल उपयोगिता में होने वाली वृद्धि है। इसे किसी वस्तु की अंतिम इकाई के उपभोग से प्राप्त उपयोगिता के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है।

कुल उपयोगिता: कुल उपयोगिता किसी वस्तु की सभी संभव इकाइयों के उपयोग से प्राप्त कुल संतुष्टि है।

तटस्थता वक्र- तटस्थता वक्र वह वक्र है जो दो वस्तुओं के उन विभिन्न संयोगों को प्रकट करती है जिन से उपभोक्ता को सामान संतुष्टि प्राप्त होती है।

कीमत रेखा- बजट रेखा या कीमत रेखा वह रेखा है जो दो वस्तुओं के ऐसे सभी संयोगों को प्रदर्शित करती है जिन्हें उपभोक्ता दी गई आय तथा वस्तु कीमतों के साथ खरीद सकता है।

4.9 स्व-मूल्यांकन परीक्षण (Self-Assessment Test)

1. उदासीनता वक्र क्या है? इन की मुख्य विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

2. उपभोक्ता के संतुलन से आपका क्या अभिप्राय है? तटस्थता वक्र की सहायता से संतुलन की व्याख्या कीजिए।

3. तटस्थता वक्र क्या है? तटस्था वक्र की सहायता से मांग के नियम का वर्णन करें।

4. कुल उपयोगिता तथा सीमांत उपयोगिता में संबंध की स्पष्ट चर्चा कीजिए।

5. घटती सीमांत उपयोगिता नियम का उपयोग करते हुए उपभोक्ता के मांग वक्र को व्युत्पन्न कीजिए।

4.10 उत्तर आपकी प्रगति की जांच करने के लिए (Answers to Check Your Progress)

1.(C) 2.(B) 3.(B) 4.(C) 5.(A) 6.(C) 7.(B) 8.(C) 9.(C) 10.(B)

4.11 संदर्भ/सुझाई गई पुस्तकें (References/ Suggested Readings)

आहूजा, एच. एल. उच्चतर आर्थिक सिद्धांत (व्यष्टि पर आर्थिक विश्लेषण) एस चांद पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली

झिंगन, एम. एल. (2015) व्यष्टि अर्थशास्त्र वृंदा पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली

मैनकीव, एन. ग्रेगरी व्यष्टि अर्थशास्त्र के सिद्धांत सेनगेज लर्निंग, अमेरीका

कौट्सोयियनिस, ए. आधुनिक व्यष्टि अर्थशास्त्र मैकमिलन प्रेस लिमिटेड, दिल्ली

विषय: अर्थशास्त्र (व्यष्टिगत अर्थशास्त्र के सिद्धांत)	
विषय क्रमांक: बीए BECO-101	**लेखक: डॉ. सोमनाथ परूथी**
अध्याय: 5	**वेट्टर:**
उपभोक्ता का व्यवहार	

संरचना (Structure)

5.0 सीखने के उद्देश्य (Learning Objectives)

5.1 परिचय (Introduction)

5.2 उत्पादन फलन (Production Function)

5.2.1 समय अवधि (Time Period)

5.2.1.1 अल्पकाल (Short Run or Short Period)

5.2.1.2 दीर्घकाल (Long Run or Long Period)

5.2.2.1 अल्पकाल में उत्पादन में परिवर्तन
5.2.2.1.1 कुल उत्पादन (Total Product-TP)
5.2.2.1.2 औसत उत्पादन (Average Product-AP)
5.2.2.1.3 सीमांत उत्पादन (Marginal Product)

5.3 उत्पादन के नियम (Laws of Production)

5.3.1.1 के प्रतिफल (The Returns to a Factor)
5.3.1.2 पैमाने के प्रतिफल (The Returns to Scale)

5.3.1 साधन के प्रतिफल या एक परिवर्तनशील साधन के द्वारा उत्पादन (The Returns to a Factor or Production by One Variable Factor)

5.3.1.1.1 साधन के बढ़ते हुए प्रतिफल (Increasing Returns to a Factor)
5.3.1.1.2 साधन के स्थिर प्रतिफल (Constant Returns to a Factor)
5.3.1.1.3 साधन के घटते हुए प्रतिफल (Diminishing Returns to a Factor)

5.3.2 घटते-बढ़ते अनुपात का नियम (Law of Variable Proportions)

5.3.2.1 उचित निर्णय की अवस्था

5.4 सम उत्पाद वक्र विश्लेषण (Iso-Quant Curve Analysis)

5.4.1 सम उत्पाद वक्र का ढलान अथवा तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर

5.4.2 सम उत्पाद मानचित्र

5.4.3 सम-उत्पाद वक्रों की विशेषताएँ

5.4.4 सम-उत्पाद वक्र तथा तटस्थता वक्र के बीच अंतर

5.4.5 उत्पादन का आर्थिक क्षेत्र/ रिज रेखाएँ

5.5 सम-लागत रेखा Iso-Cost Line

5.6 उत्पादक संतुलन अथवा साधनों का इष्टतम संयोग अथवा न्यूनतम लागत सयोग

5.6.1 उत्पादक संतुलन अथवा साधनों का न्यूनतम लागत संयोग क्या है?

5.6.2 साधनों के इष्टतम सहयोग अथवा न्यूनतम लागत संयोग की शर्त

5.6.3 विस्तार पथ Expansion Path

5.7.2 पैमाने के प्रतिफल के नियम तथा सम उत्पाद विश्लेषण Laws of Return to Scale and Iso-Product Curve Analysis

5.7.2.1 पैमाने के बढ़ते प्रतिफल (Increasing Returns to Scale)

5.7.2.2 पैमाने के घटते प्रतिफल (Decreasing Returns to Scale)

5.7.2.3 पैमाने के समान प्रतिफल (Constant Returns to Scale)

5.8 अपनी प्रगति की जाँच करें (Check Your Progress)

5.9 सारांश (Summary)

5.10 कीवर्ड (Keywords)

5.11 स्व-मूल्यांकन परीक्षण (Self-Assessment Test)

5.12 उत्तर आपकी प्रगति की जांच करने के लिए (Answers to Check Your Progress)

5.13 संदर्भ/सुझाई गई पुस्तकें (References/ Suggested Readings)

5.0 सीखने के उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय के अध्ययन से आप;

1. उत्पादन फलन को समझ सकेंगे
2. परिवर्तनशील अनुपात के नियम की तीनों अवस्थाओं से अवगत हो जाएंगे
3. परिवर्तनशील अनुपात के नियम के लागू होने के कारणों को समझ सकेंगे
4. परिवर्तनशील साधन लागतो को कैसे प्रभावित करते हैं यह जान जाएंगे
5. सम उत्पाद वक्र की अवधारणा एवं विशेषताओं को समझ जाएंगे
6. पैमाने के प्रतिफल के नियम को समझने में सम उत्पाद वक्र के उपयोग को समझ जाएंगे
7. सम लागत रेखा तथा इसकी विशेषताओं को समझ पाएंगे
8. उत्पादक के संतुलन को समझ पाएंगे
9. उत्पादन के आर्थिक क्षेत्र के विषय में ज्ञान प्राप्त कर पाएंगे

5.1 परिचय (Introduction)

आप पढ़ चुके हैं की मांग के सिद्धांत में यह विश्लेषण किया जाता है कि एक उपभोक्ता अपने साधनों अर्थात आय का किस प्रकार प्रयोग करें कि जिससे उसे अधिकतम संतुष्टि प्राप्त हो सके। मांग के सिद्धांत की तरह ही उत्पादन के सिद्धांत का संबंध भी इस बात का विश्लेषण करने से है कि एक फर्म या उत्पादक अपने उत्पादन के साधनों का किस प्रकार कुशलतापूर्वक प्रयोग करें जिससे कि उसे अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके। उत्पादन के सिद्धांत का संबंध उस विश्लेषण से है जिसकी सहायता से उत्पादक एक निश्चित उत्पादन तकनीक के आधार पर विभिन्न उत्पादन के साधनों का कुशलतापूर्वक प्रयोग/ उपयोग करता है जिससे कि एक न्यूनतम लागत पर निश्चित मात्रा में उत्पादन किया जा सके।

5.2 उत्पादन फलन (Production Function)

उत्पादन फलन किसी वस्तु की उत्पादन की मात्रा तथा उसके उत्पादन के लिए आवश्यक उत्पादन के साधनों के भौतिक अथवा तकनीकी संबंध को बताता है।

उत्पादन फलन को गणित के निम्नलिखित सूत्र के रूप में प्रकट किया जा सकता है।

$$Y = f(L, K, S)$$

Y- उत्पादन, L- श्रम, K-, पूंजी, S- भूमि

इसे पढ़ा जाएगा कि उत्पादन, श्रम, पूंजी तथा भूमि का फलन है।

किसी वस्तु का उत्पादन उत्पादन के साधनों की मात्रा तथा उत्पादन तकनीक पर निर्भर करता है। यदि एक उत्पादक उत्पादन की मात्रा में परिवर्तन करना चाहता है तो वह यह परिवर्तन उत्पादन के साधनों की मात्रा में परिवर्तन करके प्राप्त कर सकता है। यदि उत्पादक केवल एक ही उत्पादन के साधन में वृद्धि अथवा कमी के द्वारा उत्पादन में परिवर्तन करता है तथा उसके फल स्वरुप उत्पादन के साधनों के मिश्रण का अनुपात बदलता है तो उत्पादन और उत्पादन के साधनों के इस आनुपातिक संबंध को **साधन के प्रतिफल** का नियम कहते हैं। इसके विपरीत यदि उत्पादक सभी साधनों में समान अनुपात में परिवर्तन करता है अर्थात उत्पादन के साधनों का मिश्रण स्थिर रहता है तो इस स्थिति में उत्पादन और उत्पादन के साधनों के अनुपातिक संबंध को उत्पादन के **पैमाने के प्रतिफल** का नियम कहा जाता है। किसी वस्तु के उत्पादन में वृद्धि करने के लिए या तो साधनों की मात्रा में वृद्धि करनी होगी या उत्पादन की तकनीक में सुधार करना होगा। मान लीजिए उत्पादन की तकनीक स्थिर रहती है तो उत्पादन की मात्रा में होने वाला परिवर्तन उत्पादन के साधनों की मात्रा पर निर्भर करेगा।

5.2.1 समय अवधि (Time Period)

यह ध्यान देने योग्य है कि साधनों की स्थिरता या परिवर्तनशीलता उस समय अवधि पर निर्भर करती है जिसके अंतर्गत उत्पादन की मात्रा में होने वाले परिवर्तन के अनुसार उत्पादन के साधनों की मात्रा में परिवर्तन करना आवश्यक हो जाता है। अर्थशास्त्री इस समय अवधि का निम्नलिखित दो भागों में वर्गीकरण करते हैं:

5.2.1.1 अल्पकाल (Short Run or Short Period)

अल्पकाल समय कि वह अवधि है जिसमें उत्पादन का कम से कम एक या एक से कुछ अधिक साधन स्थिर रहते हैं; तथा बाकी के साधन परिवर्तनशील होते हैं। अल्पकाल में परिवर्तनशील साधनों की मात्रा में परिवर्तन के द्वारा ही उत्पादन की मात्रा में वृद्धि की जा सकती है।

अन्य शब्दों में अल्पकाल में परिवर्तनशीलत तथा स्थिर दोनों प्रकार के ही साधन होते हैं। अतः यदि एक उत्पादक अल्पकाल में उत्पादन में वृद्धि करना चाहता है तो वह ऐसा मौजूदा प्लांट या मशीनों और औजारों के साथ कच्चे माल

तथा श्रम की अधिक मात्रा का प्रयोग करके ही कर सकते हैं। इसके विपरीत यदि वह अल्पकाल में उत्पादन में कमी करना चाहता है तो वह वह कच्चे माल की कम मात्रा तथा कम श्रमिकों का प्रयोग करके कर सकता है। परंतु वह कारखाने की इमारत या प्लांट को तुरंत परिवर्तित/ खत्म नहीं कर सकता चाहे अल्पकाल में उनका उपयोग बिलकुल भी नहीं किया जाए।

5.2.1.2 दीर्घकाल (Long Run or Long Period)

दीर्घकाल समय कि वह अवधि है जिसमें उत्पादन के सभी साधन परिवर्तनशील होते हैं। दीर्घकाल में कोई भी साधन स्थिर नहीं होता सभी साधन परिवर्तनशील होते हैं। अन्य शब्दों में दीर्घकाल से अभिप्राय समय की उस अवधि से है जिसमें सभी साधनों की मात्रा को घटाया-बढ़ाया जा सकता है। अतः दीर्घ काल में स्थिर तथा परिवर्तनशील साधनों के बीच कोई अंतर नहीं रहता क्योंकि सभी साधन परिवर्तनशील हो जाते हैं। दीर्घकाल में विभिन्न साधनों के बीच समायोजन आसानी से किया जा सकता है। प्लांट का आकार जो अल्प काल में सामान्यतः विभिन्न साधनों के बीच स्थिर बना/बंधा होता है दीर्घकाल में घटाया-बढ़ाया जा सकता है। अतः दीर्घकाल में उत्पादन के पैमाने में परिवर्तन लाया जा सकता है। दीर्घकाल (सामान्य काल) उत्पादन के पैमाने में परिवर्तन से जुड़ा होता है। परंतु उत्पादन की आधारभूत तकनीक को स्थिर मान लिया जाता है। इसके अतिरिक्त दीर्घकाल उस प्रचलन समय से संबंधित है जिसमें अल्पकालीन स्थिर साधनों को बदला जा जाता है। इसका संबंध किसी विशिष्ट समय अवधि से नहीं होता। अतः दीर्घकाल अवधि विभिन्न उद्योगों में बदलती रहती है।

5.2.3 अल्पकाल में उत्पादन में परिवर्तन

अल्पकाल में किसी वस्तु की विभिन्न मात्राओं का उत्पादन करने के लिए स्थिर साधन की एक दी हुई मात्रा के साथ परिवर्तनशील साधनों की अधिक या कम मात्राओं का प्रयोग किया जा सकता है। इस संबंध में उत्पादन की तीन महत्वपूर्ण अवधारणा है। (1) कुल उत्पादन (2) औसत उत्पादन (3) सीमांत उत्पादन।

5.2.3.1 **कुल उत्पादन (Total Product-TP)**: एक परिवर्तनशील साधन का कुल उत्पादन वह अधिकतम मात्रा है जो उस साधन की एक दी हुई मात्रा का स्थिर साधनों के साथ प्रयोग करने पर उत्पन्न होती है।

5.2.3.2 **औसत उत्पादन (Average Product-AP)**: परिवर्तनशील साधन के औसत उत्पादन से अभिप्राय उत्पादन की उस मात्रा से है जिसका अनुमान कुल उत्पादन को परिवर्तनशील साधन की प्रयोग की जाने वाली कुल इकाइयों से भाग देकर लगाया जाता है। इसके द्वारा परिवर्तनशील साधन की प्रत्येक इकाई का औसत उत्पादन ज्ञात होता है।

$$AP = \frac{TP}{L}$$

AP- औसत उत्पादन, TP- कुल उत्पादन, L- परिवर्तनशील साधन जैसे श्रम की कुल इकाइयां

5.2.3.3 **सीमांत उत्पादन (Marginal Product)**: परिवर्तनशील साधन का सीमांत उत्पाद उस साधन की एक अतिरिक्त इकाई के अधिक या कम प्रयोग करने से कुल उत्पादन में होने वाला परिवर्तन है। अन्य शब्दों में सीमांत उत्पाद परिवर्तनशील साधन की मात्रा में होने वाले परिवर्तन के कारण कुल उत्पादन में होने वाले परिवर्तन की दर का माप है।

$$MP = \frac{\Delta TP}{\Delta L} \; or \; MP_n = TP_n - TP_{n-1}$$

(यहां MP-सीमांत, ΔTP-उत्पाद कुल उत्पाद में परिवर्तन, ΔL-परिवर्तनशील साधन जैसे श्रम में परिवर्तन, TPn-nइकाइयों का कुल उत्पादन, TPn-1 => n -1 इकाइयों का कुल उत्पादन)।

उपरोक्त तीनों अवधारणाओं का उदाहरण सहित मतलब हम घटते बढ़ते अनुपात के नियम की व्याख्या करते समय समझेंगे।

5.3 उत्पादन के नियम (Laws of Production)

उत्पादन के नियम उन विधियों का वर्णन करते हैं जो उत्पादन के स्तर को बढ़ाने के लिए तकनीकी दृष्टि से संभव होते हैं। उत्पादन में कई तरीकों से वृद्धि की जा सकती है। उत्पादन फलन की प्रवृत्ति का विश्लेषण करते समय हम यह पढ़ चुके हैं कि अल्पकाल में परिवर्तनशील साधनों की मात्रा में वृद्धि करके ही उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। अतः अन्य सभी साधनों के स्थिर रहने पर केवल परिवर्तनशील साधन की मात्रा में परिवर्तन होने पर उत्पादन की मात्रा में होने वाले परिवर्तन की प्रक्रिया को साधन का प्रतिफल कहा जाता है। इसके विपरीत दीर्घकाल में सभी साधनों की मात्रा को बढ़ाकर उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। सभी साधनों के आकार या पैमाने में परिवर्तन करके उत्पादन में परिवर्तन करने की प्रक्रिया को पैमाने के प्रतिफल कहते हैं। अतः उत्पादन के दो नियम है:

5.3.2 साधन के प्रतिफल (The Returns to a Factor)

5.3.3 पैमाने के प्रतिफल (The Returns to Scale)

5.3.1 साधन के प्रतिफल या एक परिवर्तनशील साधन के द्वारा उत्पादन (The Returns to a Factor or Production by One Variable Factor)

एक उत्पादक उत्पादन के अन्य साधनों तथा उत्पादन तकनीक के स्थिर रहते हुए उत्पादन के केवल एक परिवर्तनशील साधन की मात्रा में परिवर्तन करके अपने उत्पादन में परिवर्तन कर सकता है। इसके फलस्वरूप उत्पादन के साधनों के संयोग के अनुपात में परिवर्तन हो जाता है। किसी वस्तु के उत्पादन की मात्रा तथा उत्पादन में परिवर्तनशील साधन के अनुपातिक संबंध को ***साधन का प्रतिफल*** कहा जाता है। साधनों के अनुपात में परिवर्तन होने के फलस्वरूप कुल उत्पादन में विभिन्न दरों में परिवर्तन होगा। शुरू में यह जब उत्पादन के साधनों के साथ परिवर्तनशील साधनों की अधिक इकाइयों का प्रयोग किया जाएगा कुल उत्पादन में बढ़ती हुई दर पर वृद्धि होगी, इसके पश्चात कुल उत्पादन में स्थिर दर से हो सकती है और अंत में एक अवस्था ऐसी आएगी जब कुल उत्पादन में घटती हुई दर में वृद्धि होगी। अतः साधन के प्रतिफल के तीन रूप हो सकते हैं;

5.3.1.2 साधन के बढ़ते हुए प्रतिफल (Increasing Returns to a Factor): साधन के बढ़ते हुए प्रतिफल से अभिप्राय उस स्थिति से है जिसमें परिवर्तनशील साधन की प्रत्येक अतिरिक्त इकाई का प्रयोग करने के फल स्वरुप फर्म के उत्पादन में अधिक वृद्धि हो जाती है। इस स्थिति में जैसे-जैसे परिवर्तनशील साधन की अधिक इकाइयों का प्रयोग किया जाता है उसका सीमांत उत्पादन बढ़ता जाता है।

5.3.1.3 साधन के स्थिर प्रतिफल (Constant Returns to a Factor): साधन के स्थिर प्रतिफल से अभिप्राय उस स्थिति से है जिसमें फर्म के परिवर्तनशील साधन की अतिरिक्त इकाई का प्रयोग करने से फर्म का कुल उत्पादन स्थिर दर से बढ़ता है। इस स्थिति में परिवर्तनशील साधन का सीमांत उत्पादन स्थिर रहता है।

5.3.1.4 साधन के घटते हुए प्रतिफल (Diminishing Returns to a Factor): साधन के घटते हुए प्रतिफल से अभिप्राय उस स्थिति से है जिसमें परिवर्तनशील साधन की अतिरिक्त इकाई का प्रयोग करने से फर्म के उत्पादन में कम वृद्धि होती है। इस स्थिति में जैसे-जैसे परिवर्तनशील साधन की अधिक इकाइयों का प्रयोग किया जाता है उनके सीमांत उत्पादन में कमी होती जाती है।

आधुनिक अर्थशास्त्री साधन के प्रतिफल की उपरोक्त तीनों अवस्थाओं का अध्ययन एक ही नियम के अंतर्गत करते हैं इस नियम को ***घटते-बढ़ते अनुपात का नियम*** कहा जाता है।

5.3.2 घटते-बढ़ते अनुपात का नियम (Law of Variable Proportions)

घटते बढ़ते अनुपात के नियम से ज्ञात होता है कि यदि एक साधन की घटती-बढ़ती मात्रा का अन्य साधनों की स्थिर मात्रा के साथ प्रयोग किया जाता है तो परिवर्तनशील साधन की प्रत्येक इकाई के लगाने से उत्पादन में वृद्धि होगी परंतु एक निश्चित बिंदु के पश्चात यह निरंतर कम होती जाएगी। परिणाम स्वरूप कुल उत्पाद अधिकतम स्तर पर पहुंचने के पश्चात अंत में कम होना शुरू कर देगा।

मान्यताएं Assumptions

1. उत्पादन का एक साधन परिवर्तनशील है तथा बाकी अन्य सभी साधन स्थिर है।
2. परिवर्तनशील साधन की सभी इकाइयां समरूप है या समान रूप से कुशल है।
3. उत्पादन तकनीक में कोई परिवर्तन नहीं होता।
4. उत्पादन के साधनों का विभिन्न अनुपातों में प्रयोग किया जा सकता है। उदाहरण के लिए 2 हेक्टेयर भूमि पर खेती करने के लिए एक श्रमिक का प्रयोग किया जा सकता है या 2 हेक्टेयर भूमि पर 4 श्रमिकों का प्रयोग किया जा सकता है।

नियम की व्याख्या (Explaination of the Law)

इस नियम की व्याख्या हम नीचे दी गई तालिका के द्वारा कर सकते हैं मान लीजिए आपके पास 1 हेक्टेयर का खेत है खेती करने के यंत्र है बीज है खाद है इत्यादि आपने खेत में आलू का उत्पादन करना है आपने यह निर्णय लेना है कि आलू का उत्पादन करने के लिए कितने श्रमिक काम पर लगाए जाए आप अपने खेत में बाकी साधनों को स्थिर रखते हुए श्रमिकों की मात्रा में जैसे-जैसे परिवर्तन करते जाएंगे श्रमिकों की कुल औसत तथा सीमांत उत्पादकता में होने वाले परिवर्तन नीचे दी गई तालिका में स्पष्ट किए गए हैं

S (Land)	L (Labour)	TP (Total Product)	MP (Marginal Product)	AP (Average Product)	Stages
1	1	2	2	2	1st Stage
1	2	5	3	2.5	
1	3	9	4	3	
1	4	12	3	3	2nd Stage
1	5	14	2	2.8	
1	6	15	1	2.5	
1	7	15	0	2.1	3rd Stage
1	8	14	-1	1.7	

तालिका से पता चलता है कि यदि भूमि की एक निश्चित मात्रा पर श्रमिकों की बढ़ती हुई इकाइयों का प्रयोग किया जाता है तो श्रम की 3 इकाइयों तक कुल उत्पादन में बढ़ती हुई दर पर वृद्धि होती है। इसके बाद इसमें घटती हुई दर पर वृद्धि होती है। जब 6 श्रमिकों का प्रयोग किया जाता है तो कुल उत्पादन अधिकतम होता है। श्रम की सातवीं इकाई लगाने से कुल उत्पादन में कोई परिवर्तन नहीं होता इसलिए सीमांत उत्पादन शून्य हो जाता है। श्रम की

आठवीं इकाई लगाने से कुल उत्पादन कम हो जाता है। इसलिए सीमांत उत्पादन ऋणआत्मक हो जाता है। श्रम का औसत उत्पादन पहले बढ़ता है परंतु धीरे-धीरे कम होने लगता है। जब सीमांत उत्पादन में कमी होनी शुरू हो जाती है तो वह औसत उत्पादन के बराबर हो जाता है। सीमांत उत्पादन में औसत उत्पादन की तुलना में अधिक तेजी से कमी होती है। अतः साधनों के अनुपात में परिवर्तन होने के कारण उत्पादन की मात्रा में विभिन्न दरों से परिवर्तन होगा। अर्थशास्त्र में इस प्रवृत्ति को ***घटते बढ़ते अनुपात का नियम*** कहा जाता है। इस नियम से ज्ञात होता है कि उत्पादन के साधनों के अनुपात में परिवर्तन करने से उत्पादन की मात्रा में पहले बढ़ते हुए अनुपात में परिवर्तन होता है उसके पश्चात समान अनुपात में परिवर्तन होता है तथा उसके बाद घटते हुए अनुपात में परिवर्तन होता है। परंपरावादी अर्थशास्त्री इस नियम को **घटते प्रतिफल का नियम** कहते हैं। उन्होंने इसका अध्ययन विशेष रूप से कृषि के संबंध में किया था। उनके अनुसार जब भूमि के एक निश्चित क्षेत्र पर श्रम की अधिक मात्रा का प्रयोग किया जाएगा तो घटते प्रतिफल प्राप्त होंगे। परंतु वास्तव में यह एक सामान्य सिद्धांत है जो कृषि, उद्योग, भवन निर्माण आदि किसी भी उत्पादन प्रक्रिया पर लागू होता है। आधुनिक समय में इसे सामान्यतः घटते बढ़ते अनुपात का नियम कहा जाता है। इसे **घटते सीमांत उत्पाद** का नियम या **घटते सीमांत प्रतिफल** या केवल **घटते प्रतिफल** कहा जा सकता है। इस संबंध में प्रोफेसर वेरियन का यह तर्क महत्वपूर्ण है कि" यह वास्तव में एक नियम नहीं है यह तो अधिकतर उत्पादन प्रक्रियाओं की एक सामान्य विशेषता है।"

चित्रमय प्रस्तुति (Graphical Presentation)

इस चित्र से ज्ञात होता है कि बिंदु E तक कुल उत्पादन बढ़ती दर से बढ़ रहा है। तथा E से G तक घटती दर से बढ़ रहा है। G बिंदु पर जहां श्रम की सात इकाइयां लगाई गई है यह कुल उत्पादन अधिकतम हो गया है। इसके पश्चात यह कम होना शुरू हो गया है। MP सीमांत उत्पाद वक्र है। बिंदु A तक सीमांत उत्पादन बढ़ रहा है। बिंदु A श्रम की 3 इकाइयां लगने पर सीमांत उत्पादन अधिकतम हो गया है। इसके पश्चात सीमांत उत्पादन घटता जा रहा है। बिंदु B से पहले सीमांत उत्पादन औसत उत्पादन से अधिक है। बिंदु B पर सीमांत उत्पादन तथा औसत उत्पादन एक दूसरे के बराबर है। बिंदु B के पश्चात सीमांत उत्पादन औसत उत्पादन से कम होता जा रहा है। बिंदु C पर सीमांत उत्पादन शून्य हो गया है। तथा C के पश्चात यह ऋणआत्मक हो गया है। AP वक्र औसत उत्पादन वक्र को प्रकट कर रही है। बिंदु B से पहले औसत उत्पादन सीमांत उत्पादन से कम है तथा बिंदु B पर औसत उत्पादन अधिकतम है। बिंदु B तक औसत उत्पादन बढ़ता जा रहा है। बिंदु B के पश्चात औसत उत्पादन कम होना प्रारंभ हो गया है।

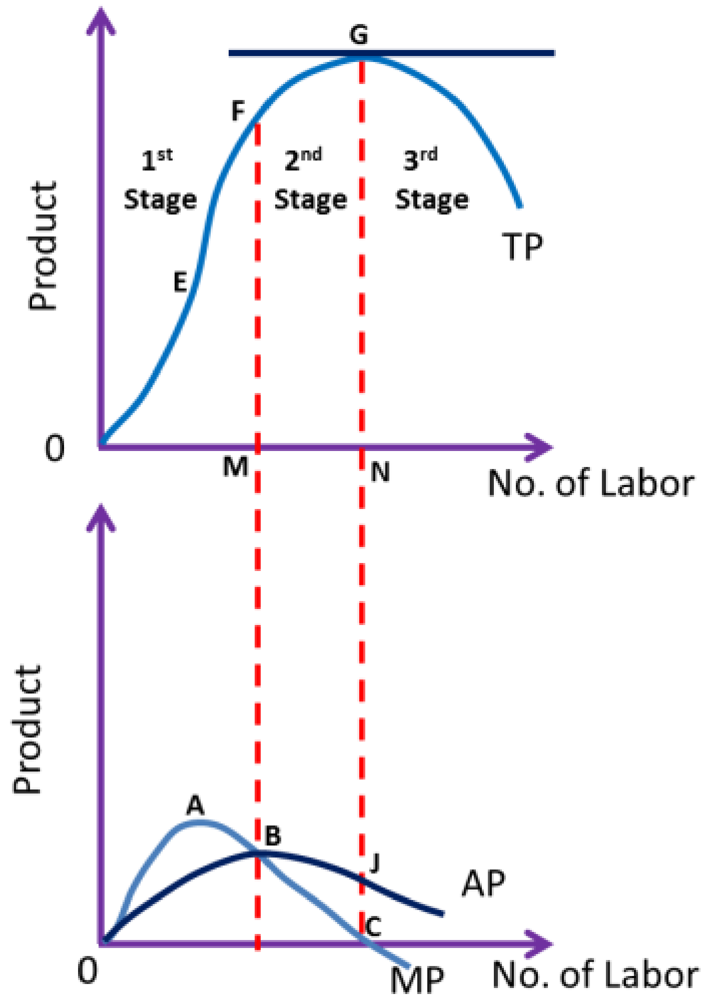

उत्पादन की इन तीन अवस्थाओं की निम्नलिखित विशेषताएं हैं

पहली अवस्था: यह अवस्था बिंदु O से शुरू हो जाती है तथा क्षैतिज अक्ष के बिंदु M तक रहती है। MF रेखा इसकी सीमा रेखा है इस अवस्था में (i) **कुल उत्पादन** शुरू में बिंदु E तक बढ़ती हुई दर पर बढ़ता है। बिंदु E तथा बिंदु F के बीच में यह घटती दर पर बढ़ता है। (ii) **सीमांत उत्पादन** भी शुरू में बढ़ता है तथा बिंदु A पर अधिकतम हो जाता है इसके बाद यह घटना शुरू हो जाता है तथा बिंदु B पर औसत उत्पादन के बराबर हो जाता है। (iii) **औसत उत्पादन** बढ़ते-बढ़ते बिंदु B पर अधिकतम हो जाता है पहली अवस्था की सीमा रेखा पर यह सीमांत उत्पादन के बराबर (AP=MP) हो जाता है।

दूसरी अवस्था: यह अवस्था क्षैतिज अक्ष के बिंदु M से शुरू हो जाती है और बिंदु N तक रहती है। NG रेखा इस अवस्था की सीमा रेखा है। इस अवस्था में (i) **कुल उत्पादन** घटती दर पर बढ़ता हुआ सीमा रेखा NG के बिंदु G पर अधिकतम हो जाता है। (ii) **सीमांत उत्पादन** घटता जाता है तथा बिंदु C पर शून्य हो जाता है। (iii) **औसत उत्पादन** घटता जाता है।

तीसरी अवस्था: तीसरी अवस्था क्षैतिज अक्ष के बिंदु N के पश्चात शुरू होती है। इस अवस्था में (i) **कुल उत्पादन** कम होना शुरू हो जाता है। (ii) **सीमांत उत्पादन** ऋणआत्मक होता है। (iii) **औसत उत्पादन** घटता रहता है परंतु धनात्मक रहता है।

5.3.2.1 उचित निर्णय की अवस्था: एक पूर्ण प्रतियोगी फर्म अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए इस नियम की दूसरी अवस्था में उत्पादन करेगी इसका कारण यह है कि (i) पहली अवस्था में यद्यपि परिवर्तनशील साधन से मिलने वाला प्रतिफल तो बढ़ रहा है परंतु स्थिर साधन का अनार्थिक प्रयोग अर्थात अक्षमता से कम प्रयोग हो रहा है। इसलिए इस अवस्था में जैसे-जैसे उत्पादन बढ़ता जाता है कुल लाभ भी बढ़ते रहते हैं। अतएव उत्पादक को पहली अवस्था से आगे अर्थात दूसरी अवस्था में उत्पादन करने की प्रेरणा प्राप्त होती है। (ii) विचारवान उत्पादक तीसरी अवस्था में कभी उत्पादन नहीं करेगा क्योंकि इस अवस्था में कुल उत्पादन कम हो जाता है। संक्षेप में एक विचारवान फर्म हमेशा दूसरी अवस्था में जिसमें घटते प्रतिफल प्राप्त होने शुरू हो जाते हैं उत्पादन करती है। एक पूर्ण प्रतियोगी फर्म पहली या तीसरी अवस्था में उत्पादन नहीं करेगी वह केवल दूसरी अवस्था में ही उत्पादन करेगी। दूसरी अवस्था में किए जाने वाले उत्पादन की वास्तविक मात्रा उत्पादन के साधनों तथा उत्पादन की कीमतों पर निर्भर करेगी।

5.4 सम उत्पाद वक्र विश्लेषण (Iso-Quant Curve Analysis)

अर्थशास्त्रियों के लिए उत्पादकों के व्यवहार का अध्ययन करने का एक महत्वपूर्ण कारण उत्पादकों की अनुकूलतम स्थिति संबंधी धारणा है। एक उत्पादक की अनुकूलतम स्थिति वह स्थिति है जिसमें उसे अधिकतम लाभ प्राप्त हो रहे होते हैं। प्रत्येक उत्पादक का उद्देश्य अधिकतम लाभ प्राप्त करना होता है। इसके लिए उत्पादकों के पास कई विकल्प उपलब्ध होते हैं। उसे यह निर्णय लेना होता है कि सर्वोत्तम विकल्प कौन सा है जिससे उन्हें अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके। अर्थशास्त्रि उत्पादकों की अनुकूलतम स्थिति का अनुमान लगाने के लिए सम-उत्पाद विश्लेषण अर्थात Iso-Quant Analysis का प्रयोग करते हैं। Iso-Quant या Iso-Product शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है Iso=Equal और Quant= Quantity या Product= Output। अतः इसका अर्थ है कि समान मात्रा अथवा समान उत्पादन। वस्तुओं के उत्पादन के लिए विभिन्न साधनों की आवश्यकता होती है। इन साधनों का एक दूसरे के लिए प्रतिस्थापन किया जा सकता है। उदाहरण के लिए 100 घड़ियों का उत्पादन पूंजी की 90 इकाइयों तथा श्रम की 10 इकाइयों की सहायता से किया जा सकता है अर्थात घड़ियों की इस संख्या अर्थात 100 घड़ियों का उत्पादन पूंजी तथा श्रम के एक दूसरे संयोग पूंजी की 60 इकाइयां तथा श्रम की 20 इकाइयों द्वारा अथवा पूंजी की 40 इकाइयां तथा श्रम की 30 इकाइयों से भी किया जा सकता है। यदि कुल उत्पादन की समान मात्रा पैदा करने के लिए दो साधनों के विभिन्न संयोग को एक वक्र के रूप में प्रस्तुत किया जाए तो ऐसी वक्र को सम-उत्पाद वक्र कहा जाएगा। अतः सम उत्पाद वक्र वह वक्र है जो दो उत्पादन साधनों के विभिन्न संभव संयोगों को प्रकट करती है जिन से समान मात्रा में उत्पादन होता है। सम-उत्पाद वक्र को समान उत्पादन या सम-उत्पाद या उत्पादन वक्र भी कहा जाता है। सम-उत्पादन वक्र को उत्पादन तटस्थता वक्र इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह उपभोग के सिद्धांत के तटस्थता वक्र विश्लेषण को उत्पादन के सिद्धांत पर लागू करता है।

सम-उत्पाद वक्रो की मुख्य मान्यताएँ

सम-उत्पाद वक्रों की मुख्य मान्यताएँ हैं-

1. उत्पादन के दो साधन -इन वक्रों को खींचते समय, सरलता की दृष्टि से, यह मान लिया जाता है कि उत्पादन के केवल दो साधन ही किसी वस्तु को उत्पादित करने के लिए प्रयोग में लाए जा रहे हैं। दोनों साधन परिवर्तनशील हैं।

2. स्थिर तकनीक -यह मान लिया जाता है कि उत्पादन की तकनीक स्थिर है या पहले से ज्ञात है।

3. विभाज्य साधन -यह मान लिया गया है कि उत्पादन साधन विभाज्य हैं या इनका छोटी मात्राओं में प्रयोग किया जा सकता है।

4. तकनीकी प्रतिस्थापन की संभावना -यह मान लेना अनिवार्य है कि दो साधनों के बीच प्रतिस्थापन तकनीकी रूप से संभव है। अर्थात् उत्पादन फलन 'स्थिर अनुपातों' के प्रकार का नहीं बल्कि 'परिवर्तनशील अनुपातों' के प्रकार का है।

5. कुशल संयोग -यह भी मान लिया गया है कि दी हुई तकनीक के अंतर्गत उत्पादन के साधनों का अधिकतम वुफशलता से प्रयोग किया जाता है।

व्याख्या (Explanation)

व्याख्या निम्नलिखित तालिका तथा वक्र जो उत्पादन के 1 दिए हुए स्तर के लिए दो साधनों श्रम और पूंजी के विभिन्न संयोगों को प्रकट कर रही है की सहायता से सम-उत्पाद वक्र की व्याख्या की जा सकती है। उपरोक्त तालिका प्रकट करती है कि 100 घड़ियां पूंजी तथा श्रम के निम्नलिखित संयोगों द्वारा बनाई जा सकती है;

A) यह पूंजी की 90 इकाइयों और श्रम की 10 इकाइयां,
B) पूंजी की 60 इकाइयां और श्रम की 20 इकाइयां
C) पूंजी की 40 इकाइयां और श्रम की 30 इकाइयां
D) D पूजी की 30 इकाइयां और श्रम की 40 इकाइयां

उपरोक्त तालिका में प्रकट पूंजी और श्रम के विभिन्न संयोगों को ग्राफ अथवा रेखा चित्र के रूप में भी व्यक्त किया जा सकता है। रेखा चित्र में पूंजी को OY-axis पर तथा श्रम को OX-axis पर दिखलाया गया है। A बिंदु यह प्रकट करता है कि 100 घड़ियों का उत्पादन पूंजी की 90 इकाइयों तथा श्रम की 10 इकाइयों के सहयोग के से किया जा सकता है जबकि बिंदु B यह संकेत देता है कि घड़ियों की समान मात्रा का निर्माण पूंजी की 60 इकाइयों तथा श्रम की 20 इकाइयों के सहयोग से किया जा सकता है; इसी तरह बिंदु C प्रकट करता है 100 घड़ियों का निर्माण पूंजी की 40 इकाइयों तथा श्रम की 30 इकाइयों का प्रयोग करके किया जा सकता है जबकि बिंदु D यह प्रकट करता है कि घड़ियों की समान संख्या का निर्माण पूंजी की 30 इकाइयों तथा श्रम की 40 इकाइयों के प्रयोग द्वारा भी संभव हो सकता है। अतः A,B,C तथा D पूंजी और श्रम के विभिन्न संयोग को प्रकट करते हैं जो समान मात्रा में उत्पादन जैसे 100 घड़िया करते हैं। इसलिए IQ वक्र जो A,B,C तथा D बिंदुओं को मिलाकर प्राप्त हो रही है सम-उत्पाद कहलाती है। यह सम-उत्पाद वक्र इस तथ्य को प्रकट करती है कि उत्पादन के निश्चित स्तर को उत्पादित करने के लिए साधनों के कई वैकल्पिक संयोग है।

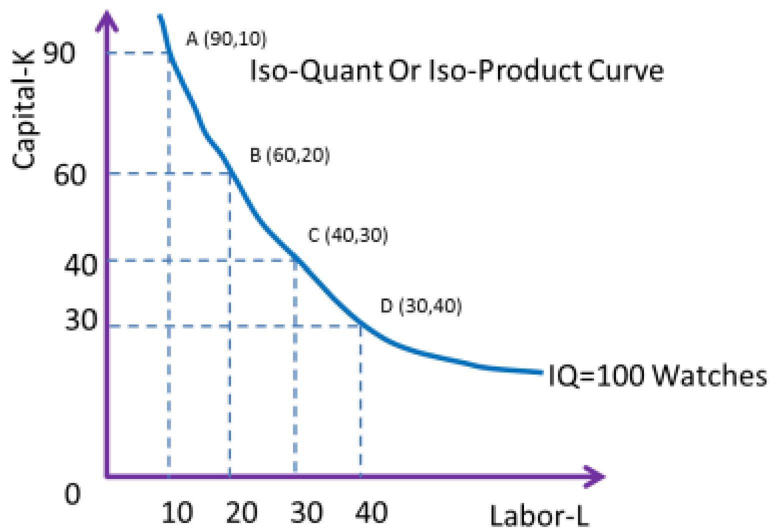

5.4.1 सम उत्पाद वक्र का ढलान अथवा तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर

सम-उत्पाद वक्र का ढलान एक साधन की दूसरे के लिए प्रतिस्थापन की दर है। यह बतलाता है कि उत्पादन को स्थिर रखते हुए एक साधन का दूसरे के लिए प्रतिस्थापन किया जाता है। सम-उत्पाद वक्र के ढलान द्वारा हमें एक साधन श्रम का दूसरे साधन पूंजी के लिए प्रतिस्थापन की तकनीकी संभावना के बारे में सूचना प्राप्त होती है। इसी कारण इसे (सम-उत्पाद वक्र के ढलान को) तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर कहा जाता है। साधन K के लिए साधन L की तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर वह दर है जिसमें उत्पादन के स्तर को स्थिर रखते हुए K का L के लिए प्रतिस्थापन किया जाता है। तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर वह दर है जिस पर एक साधन का दूसरे साधन के लिए प्रतिस्थापन किया जाता है जबकि उत्पादन स्थिर रहता है। यदि साधन K पूंजी है और साधन L श्रम है तब पूंजी के लिए श्रम की तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर वह दर है जिस पर उत्पादन के स्तर को स्थिर रखते हुए श्रम का पूंजी के लिए प्रतिस्थापन किया जा सकता है। रेखा चित्र में बिंदु A पर उदाहरण के लिए 100 इकाइयों का उत्पादन पूंजी की 90 इकाइयों तथा श्रम की 10 इकाइयों द्वारा होता है। बिंदु B पर पूंजी की 60 और श्रम की 20 इकाइयों के सहयोग द्वारा भी समान उत्पादन होता है। A और B के बीच सम-उत्पाद का ढलान पूंजी की 30 इकाइयों और श्रम की 10 इकाइयां है जिसका अभिप्राय यह है कि बिंदु A पर उत्पादन को बिना प्रभावित किए पूंजी की 30 इकाइयों के लिए श्रम की 10 इकाइयों का प्रतिस्थापन किया जा सकता है। गणितीय तरीके से हम $MRTS_{LK}$ को निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित कर सकते हैं। अन्य शब्दों में थोड़ा अधिक श्रम लगाने से उत्पादन में जो वृद्धि होती है वह थोड़ी कम पूंजी लगाने से उत्पादन में होने वाली हानि के बराबर होगी। श्रम की संख्या में होने वाली वृद्धि ∂L के फलस्वरुप उत्पादन में ∂TP के बराबर वृद्धि होती है। इसी प्रकार पूंजी की मात्रा ∂K में होने वाली कमी के कारण उत्पादन में ∂TP की कमी होगी। अतः तकनीकी प्रतिस्थापन की दर श्रम और पूंजी की सीमांत उत्पादों की दर के अनुपात के बराबर होगी। श्रम और पूंजी के बीच तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर में गिरने की प्रवृत्ति पाई जाती है। इसका तात्पर्य यह है कि पूंजी के लिए श्रम की तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर गिरती हुई है। पूंजी की प्रत्येक अतिरिक्त इकाई के लिए अधिक से अधिक श्रम का प्रतिस्थापन किया जाता है।

दो साधनों L और K के मामले में कुल उत्पादन फलन है

$$Q = f(L, K)$$

एक सम-उत्पाद वक्र का समीकरण है

$$Q = f(L, K) = k$$

जहां k एक स्थिरांक है। उत्पादन फलन का कुल अंतर (Total differential) है:

$$dQ = \frac{\partial Q}{\partial K} dK + \frac{\partial Q}{\partial L} dL = 0$$

$$dQ = MP_K dK + MP_L dL = 0$$

यह उत्पादन में कुल परिवर्तन को दर्शाता है क्योंकि दोनों साधनों की मात्रा में परिवर्तन होता है। K और L (लगभग) में परिवर्तन के कारण Q में कुल परिवर्तन, K में परिवर्तन को इसकी सीमांत उत्पादन से गुणा किया जाता है, साथ ही L में परिवर्तन को इसकी सीमांत उत्पादन से गुणा किया जाता है के योग के बराबर होता है ।

किसी विशेष सम-उत्पाद वक्र के साथ परिभाषा के अनुसार कुल अंतर शून्य के बराबर होता है। अत: किसी सम-उत्पाद वक्र के लिए

$$dQ = MP_K dK + MP_L dL = 0$$

पुनर्व्यवस्थित करने पर हमें प्राप्त होता है

$$-\frac{\partial K}{\partial L} = \frac{MP_L}{MP_K} = MRTS_{LK} \quad Or - \frac{\partial L}{\partial K} = \frac{MP_K}{MP_L} = MRTS_{KL}$$

ध्यान दें कि किसी एक बिंदु पर सम-उत्पाद वक्र का ढलान है

$$MRTS_{LK} = MRTS_{KL}$$

सम-उत्पाद वक्र मूल बिन्दु के उत्तल (convex) होते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि एक सम-उत्पाद वक्र का ढलान घटता है जैसे ही हम वक्र के साथ बाईं ओर से नीचे की ओर बढ़ते हैं: साधनों के प्रतिस्थापन की सीमांत दर कम हो रही है।

5.4.2 सम उत्पाद मानचित्र

सम-उत्पाद मानचित्र एक रेखा चित्र द्वारा प्रकट किए गए सम उत्पाद बकरों के समूह को सम उत्पाद मानचित्र कहा जाता है जैसा कि रेखा चित्र से प्रकट होता है कि यह सब उत्पाद बकरों के एक समूह को प्रकट करता है जिसमें उत्पादन के प्रत्येक स्तर के लिए एक वक्र होता है

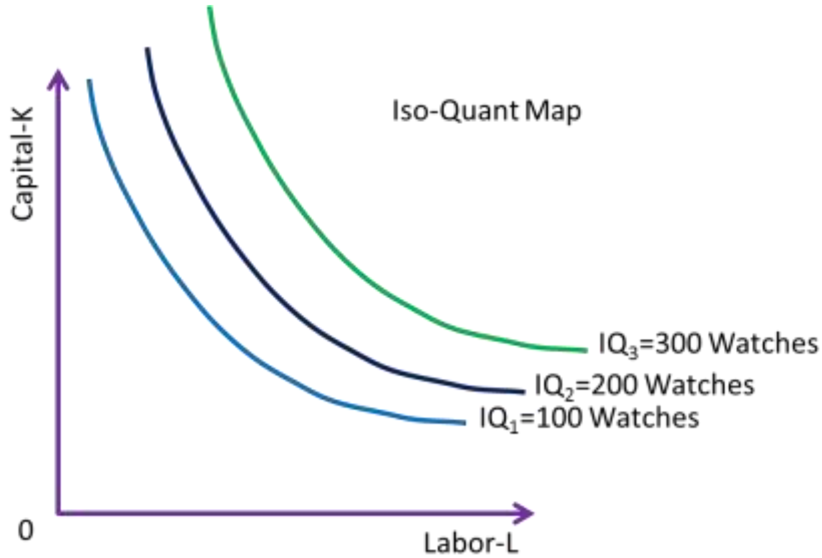

5.4.3 सम-उत्पाद वक्रों की विशेषताएँ

सम-उत्पाद वक्रों की विशेषताएँ तटस्थता वक्रों से मिलती जुलती हैं। ये विशेषताएँ हैं-

1. सम-उत्पाद वक्रों की ढलान उपर से नीचे की ओर होता है - इसका ढलान ऋणात्मक होता है। इसका कारण यह है कि एक साधन दूसरे का प्रतिस्थापन होता है। किसी वस्तु के उत्पादन की एक निश्चित मात्रा प्राप्त करने के लिए यदि हम एक साधन का अधिक उपयोग करेंगे तो दूसरे साधन का कम प्रयोग किया जाएगा। यदि दोनों साधनों का एक साथ अधिक या कम प्रयोग किया जाएगा तो कुल उत्पादन समान नहीं रहेगा, वह क्रमशः अधिक या कम हो जाएगा।

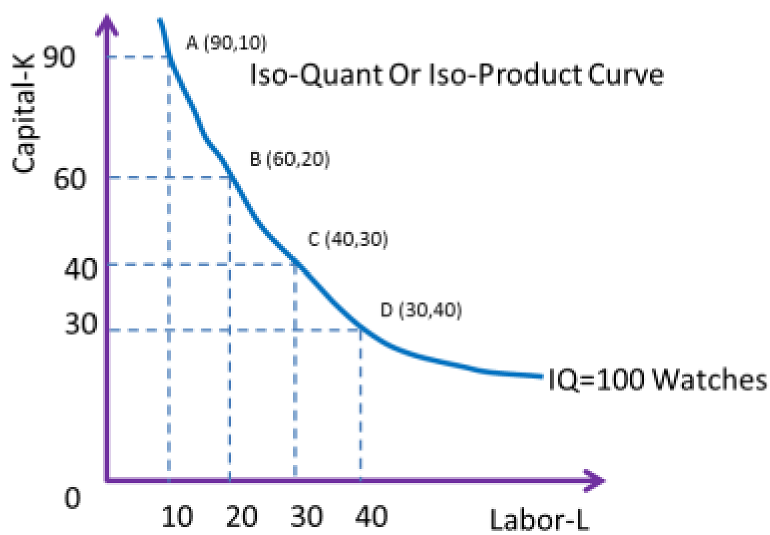

2. सम-उत्पाद वक्र मूल बिंदु की ओर उन्नतोदर होती है - सम-उत्पाद वक्र अपने मूल बिंदु व् की ओर सदा उन्नतोदर (convex) होती है इसका अभिप्राय है कि साधन पूर्ण स्थानापन्न नहीं है। इसका कारण यह है कि साधनों की तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर घटती हुई होती है।

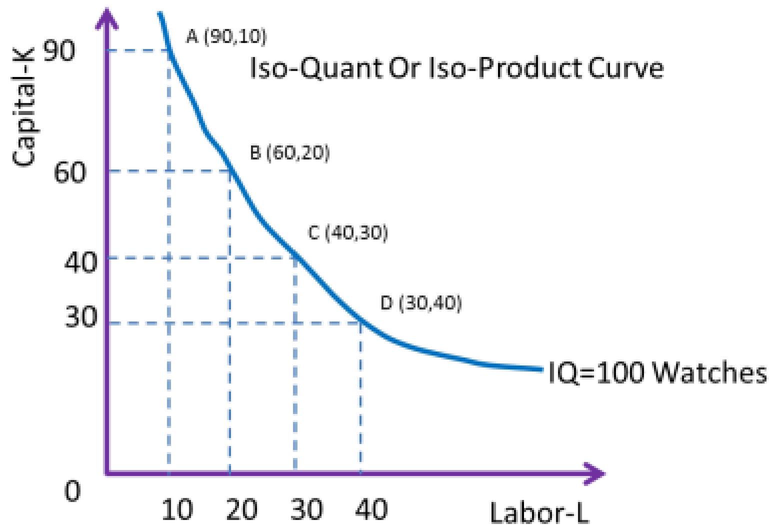

3.दो सम-उत्पाद वक्र कभी एक दूसरे को काट नहीं सकतीं -हम जानते हैं कि सम-उत्पाद वक्र उत्पादन के विशेष स्तर को व्यक्त करती है और उस पर प्रत्येक बिंदु उत्पादन के समान स्तर को बतलाता है। यदि दो सम-उत्पाद वक्र एक दूसरे को काटती हैं तब दोनों वक्रों पर समरूप समान बिंदु हमें प्राप्त होंगे। ये समान बिंदु उत्पादन के दो विभिन्न स्तरों को प्रकट करेंगे। यह सम-उत्पाद वक्र की मान्यता के विपरीत होगा। उत्पाद वक्र पर प्रत्येक बिंदु समान उत्पादन को प्रकट करता है।

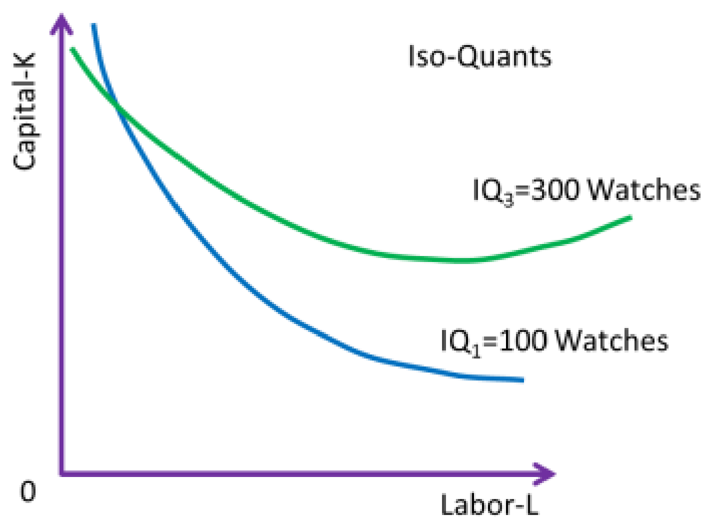

4.सम-उत्पाद वक्र जितना उँचा होता है उतना ही अधिक उंचे उत्पादन स्तर को प्रकट करता है -सम-उत्पाद वक्र जितनी एक दूसरे से उपर होती हैं उतनी ही उत्पादन की अधिक मात्रा को प्रकट करती हैं। इसका अर्थ यह है कि उंची सम-उत्पाद वक्र साधनों के उत्पादन के उंचे स्तर पर आधारित होती हैं।

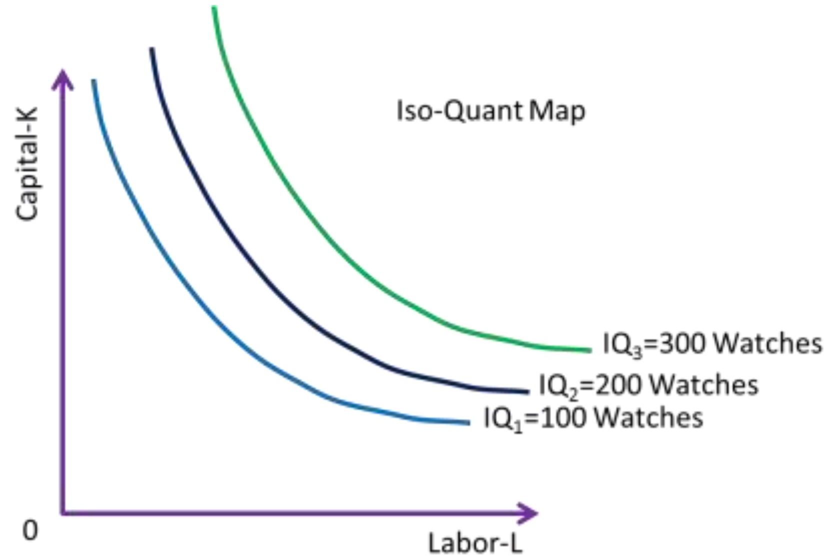

5.4.4 सम-उत्पाद वक्र तथा तटस्थता वक्र के बीच अंतर

मांग सिद्धांत में तटस्थता वक्रों का जो योगदान है वह ही सम-उत्पाद वक्रों का उत्पादन सिद्धांत में है। सम-उत्पाद वक्रों की विशेषताओं का अध्ययन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि ये वक्र लगभग तटस्थता वक्रों के समान ही हैं परंतु इन दोनों वक्रों में निम्नलिखित अंतर पाया जाता है

1. एक तटस्थता वक्र दो वस्तुओं के उन विभिन्न संयोगों को प्रकट करता है जिनसे उपभोक्ता को समान संतुष्टि प्राप्त होती है। इसके विपरीत एक सम-उत्पाद वक्र दो साधनों के उन विभिन्न संयोगों को प्रकट करता है जिससे किसी पफर्म को समान उत्पादन प्राप्त होता है।
2. सम-उत्पाद वक्र उत्पादन के समान स्तर को प्रकट करता है जिसे मापा जा सकता है। तटस्थता वक्र संतुष्टि के समान स्तर को व्यक्त करता है जिसे मापा नहीं जा सकता।
3. सम-उत्पाद वक्र परिवर्तनशील साधनों के संयोगों को प्रकट करता है जबकि तटस्थता वक्र वस्तुओं के संयोगों को व्यक्त करता है।
4. सम-उत्पाद वक्रों द्वारा उत्पादन के आर्थिक तथा अनार्थिक क्षेत्र का ज्ञान प्राप्त होता है। तटस्थता वक्र द्वारा उपभोग के आर्थिक तथा अनार्थिक क्षेत्र का ज्ञान प्राप्त नहीं होता।
5. एक सम-उत्पाद वक्र का ढलान उत्पादन के साधनों के बीच प्रतिस्थापन की तकनीकी संभावना द्वारा प्रभावित होता है। यह प्रतिस्थापन की तकनीकी सीमांत दर पर निर्भर करता है। जबकि एक तटस्थता वक्र का ढलान उपभोक्ता द्वारा उपभोग की गई दो वस्तुओं की प्रतिस्थापन की सीमांत दर पर निर्भर करता है।

वाटसन ने सही निष्कर्ष निकाला है कि, "सम-उत्पाद वक्र असल में तटस्थता वक्रों की भांति ही दिखाई देती हैं। इनकी रेखागणितीय विशेषताएँ एक समान हैं। इनका आर्थिक विश्लेषण समानांतर है परंतु एक बड़ा अंतर इनको एक दूसरे से अलग करता है। तटस्थता वक्र भावगत हैं, उपभोक्ता के मन में जो विचार आते हैं उन्हें मान लिया जाता है। इसके विपरीत सम-उत्पाद वक्र वस्तुनिष्ठ हैं, इनको सैद्धतिक तथा व्यावहारिक रूप में मापा जा सकता है।"

5.4.5 उत्पादन का आर्थिक क्षेत्र/ रिज रेखाएँ

समोत्पाद वक्र व्यावसायिक फर्म के लिये उसके उत्पादन का आर्थिक क्षेत्र ज्ञात करने में सहायक होते हैं। ये वक्र फर्म को यह बताते हैं कि किन सीमाओं के भीतर उत्पादन करना फर्म के लिये लाभदायक होगा। सामान्यतया समोत्पाद वक्र बायें से दायें नीचे की ओर ढाल वाले तथा मूल बिन्दु के प्रति उन्नतोदर होते हैं, लेकिन एक सीमा के पश्चात् ये वक्र पीछे की ओर मुड़ते हुए अर्थात् धनात्मक ढाल वाले हो जाते हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि यदि एक उत्पादक आवश्यकता से अधिक श्रम अथवा पूँजी अथवा दोनों का प्रयोग करता है, तो सीमान्त उत्पादन ऋणात्मक होने लगता है। अतः एक फर्म समोत्पाद वक्रों के उन्हीं क्षेत्रों में उत्पादन करना निश्चित करेगी जो मूल बिन्दु के उन्नतोदर या परिधि रेखाओं के बीच में स्थित हैं। इसे रेखाचित्र की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है।

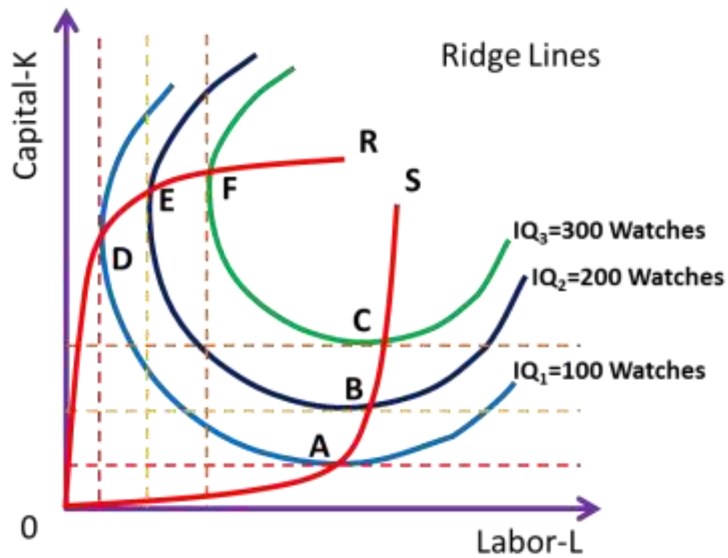

समोत्पाद वक्र के बिन्दुओं के मार्ग जिन पर साधनों की सीमान्त उत्पादकता शून्य होती है, रिज रेखाएँ बनाते हैं। उपर्युक्त वर्णित समोत्पाद मानचित्र में दो रिज रेखाएँ OR तथा OS हैं। उदाहरण के तौर पर रिज रेखा OABCS के बिंदु C पर उत्पादक पूंजी तथा श्रम के एक संयोग द्वारा 300 घड़ियों का उत्पादन करता है जो कि समोत्पाद वक्र IQ_3 के द्वारा स्पष्ट होता है। बिंदु C पर श्रम की सीमांत उत्पादकता शून्य हो जाती है। यदि उत्पादक इससे अधिक श्रम लगाता है तो उत्पादन बढ़ने की बजाए घट जाएगा तथा उत्पादक नीचे वाले सम उत्पाद वक्र IQ_2 पर आ जाएगा जिस पर घड़ियों का उत्पादन 200 घड़ियां है। तो इस प्रकार OABCS रिज रेखा उत्पादक के आर्थिक क्षेत्र को दर्शाती है। इसी प्रकार ODEFR रेखा पूंजी की सीमांत उत्पादकता को बताती है। उदाहरण के तौर पर बिंदु F से लेते हैं मान लीजिए बिंदु F पर उत्पादक श्रम तथा पूंजी की कुछ इकाइयों का संयोग उपयोग करके सम-उत्पाद वक्र IQ_3 के बिंदु F पर 300 घड़ियों का उत्पादन करता है। बिंदु F के पश्चात यदि उत्पादक और अधिक पूंजी का उपयोग करता है तो इस बिंदु के पश्चात पूंजी की सीमांत उत्पादकता शून्य हो जाती है तथा और अधिक पूंजी लगाने का कोई लाभ नहीं होगा। बल्कि और अधिक पूंजी लगाने से उत्पादक निचले सम-उत्पाद वक्र IQ_2 पर पहुंच जाएगा। जिससे घड़ियों का उत्पादन बढ़ने की बजाए घट जाएगा। तो इस प्रकार ODEFR रेखा उत्पादक के आर्थिक क्षेत्र को दर्शाती है।

रिज रेखाओं के बाहर के क्षेत्र उत्पादन के अनार्थिक क्षेत्र होते हैं। इनके बाहर साधनों की सीमान्त उत्पादकता ऋणात्मक होने लगती है तथा पूर्ववत् उत्पादन प्राप्त करने के लिये ही दोनों साधनों की अधिक मात्राओं की

आवश्यकता होती है। अतः कोई भी विवेकशील उत्पादक रिज रेखाओं के बाहर साधन संयोगों का चयन नहीं करेगा। अतः स्पष्ट है कि रिज रेखाओं के बीच का क्षेत्र ही उत्पादन का आर्थिक क्षेत्र होता है।

5.5 सम-लागत रेखा Iso-Cost Line

एक सम-लागत रेखा वह रेखा है जो उत्पादन के उन विभिन्न संयोगों को व्यक्त करती है जिनकी कुल लागत समान होती है। अन्य शब्दों में यह रेखा दो साधनों के उन विभिन्न संयोगों को प्रकट करती है जो एक फर्म समान लागत पर प्राप्त कर सकती है। जैसे विभिन्न सम-उत्पाद वक्र होते हैं, वैसे ही विभिन्न सम लागत रेखाएं भी होती है जो उत्पादन के विभिन्न स्तरों को व्यक्त करती है।

सम लागत रेखा की धारणा को निम्नलिखित तालिका तथा रेखा चित्र की सहायता से व्यक्त किया जा सकता है। मान लो उत्पादक के पास श्रम तथा पूंजी को खरीदने के लिए केवल ₹100 है। उत्पादक के लिए श्रम की लागत प्रति इकाई ₹10 और पूंजी की लागत प्रति इकाई ₹20 है उत्पादक के पास निम्नलिखित विकल्प है। श्रम पर अपना पूरा धन व्यय अर्थात ₹100 व्यय करके वह श्रम की 10 इकाइयां लगा सकता है। पूंजी पर अपना पूरा धन अर्थात ₹100 व्यय करके वह पूंजी की 5 इकाइयां खरीद सकता है। श्रम और पूंजी दोनों पर 100 रुपए व्यय करके वह श्रम और पूंजी के विभिन्न संयोग खरीद सकता है जैसा की तालिका में दिखाया गया है रेखा चित्र से स्पष्ट होता है कि;

Combination	Total Outlay	No. of Labor (L)	No. of Capital (K)
A	₹100	0	5
B	₹100	2	4
C	₹100	4	3
D	₹100	6	2
E	₹100	8	1
F	₹100	10	0

बिंदु ABC तथा DEF पूंजी और श्रम साधनों के विभिन्न संयोगों को प्रकट करते हैं जो ₹100 खर्च करके खरीदे जा सकते हैं। बिंदु A पूंजी की 5 इकाइयों तथा श्रम की शून्य इकाइयों को व्यक्त करता है। बिंदु F श्रम की 10 इकाइयों तथा पूंजी की शून्य इकाइयों को व्यक्त करता है। बिंदु B पूंजी की चार इकाइयों तथा श्रम की दो इकाइयों तथा बिंदु C शर्म की 4 इकाइयों तथा पूंजी की 3 इकाइयों को प्रकट करता है, इसी प्रकार बिंदु D पूंजी की दो इकाइयों और श्रम की 6 इकाइयों को व्यक्त करता है तथा बिंदु E पूंजी की एक और श्रम की 8 इकाइयों को व्यक्त करता है।

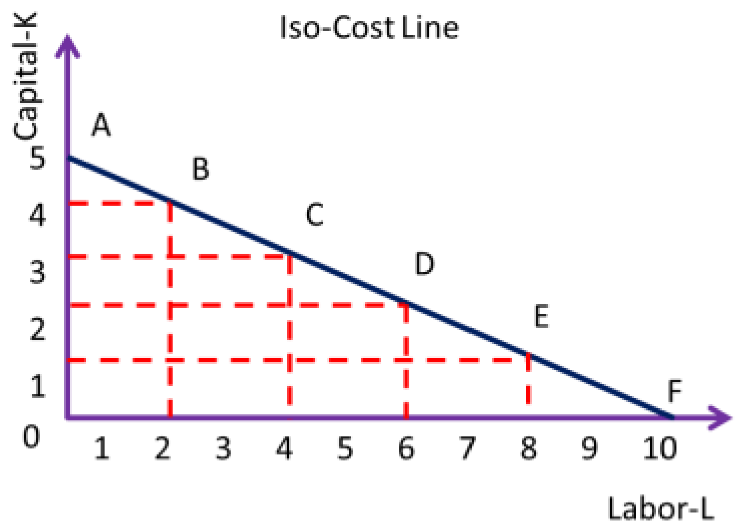

5.6 उत्पादक संतुलन अथवा साधनों का इष्टतम संयोग अथवा न्यूनतम लागत सयोग

हम जानते हैं कि एक सम-उत्पाद वक्र दो साधनों के उन विभिन्न संयोग को प्रकट करती है जिसका प्रयोग उत्पादन की एक दी हुई मात्रा को पैदा करने के लिए किया जा सकता है। जबकि उत्पादन के संदर्भ में सम-उत्पाद वक्र पर सभी बिंदु समान होते हैं परंतु लागत के संदर्भ में यह समान नहीं होते। यह देखने के लिए कि एक उत्पादक उत्पादन के एक निश्चित स्तर को उत्पादित करने के लिए न्यूनतम लागत विधि का अथवा साधनों के इष्टतम सहयोग का चुनाव कैसे करता है हमें यह जानना आवश्यक है कि (i) साधनों की कीमत क्या है। (ii) उत्पादक द्वारा किया जाने वाला कुल व्यय अथवा उत्पादक का बजट क्या है। यदि साधन कीमतों का ज्ञान हो जाता है और उत्पादक का बजट स्थिर रहता है तब विभिन्न साधनों जैसे श्रम तथा पूंजी के संभव सहयोग की लागत उत्पादक के लिए समान होगी। इसीलिए इन्हें सम-लागत संयोग Equal Cost Combination कहा जाता है। और इन संयोगों को व्यक्त करने वाली रेखा को सम-लागत रेखा Equal Cost Line और Iso-Cost Line कहा जाता है। साधनों का संयोग उस बिंदु द्वारा प्रकट होगा जिस पर सम-उत्पाद वक्र सम-लागत वक्र को स्पर्श कर रही होगी। सम-लागत रेखा का ढलान साधन कीमतों का अनुपात है। OL-अक्ष पर श्रम और OK- अक्ष पर पूंजी प्रकट करने वाली किसी भी सम-लागत रेखा का ढलान निम्न प्रकार से होगा।

सम-लागत रेखा का ढलान बराबर श्रम की कीमत बटे पूंजी की कीमत नोट श्रम की कीमत पूंजी की इकाइयों के रूप में और पूंजी की कीमत शर्म की इकाइयों के रूप में व्यक्त की जाती है

5.6.1 उत्पादक संतुलन अथवा साधनों का न्यूनतम लागत संयोग क्या है?

उत्पादक संतुलन से अभिप्राय उस स्थिति से है जिसमें एक उत्पादक अपने लाभ को अधिकतम करता है। अन्य शब्दों में उत्पादक उत्पादन की एक निश्चित मात्रा साधनों के न्यूनतम लागत संयोग की सहायता से उत्पादित करता है। साधनों के न्यूनतम लागत संयोग को साधनों का इष्टतम संयोग भी कहा जाता है। इष्टतम अथवा न्यूनतम लागत सहयोग वह संयोग है जिसमें या तो (i) साधनों के एक निश्चित स्तर से प्राप्त उत्पादन अधिकतम है अथवा (ii) एक निश्चित उत्पादन के पैदा करने के लिए लागत न्यूनतम है। उत्पादक के संतुलन अथवा साधनों के इष्टतम संयोग की स्थिति को रेखा चित्र की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है। मान लीजिए एक उत्पादक ₹100 के कुल निवेश के

द्वारा घड़ियों का उत्पादन करना चाहता है उसे घड़ियों का उत्पादन करने के लिए दो साधनों श्रम तथा पूंजी की आवश्यकता है श्रम की प्रति इकाई की कीमत ₹10 तथा पूंजी की प्रति इकाई कीमत ₹20 है वह या तो श्रम की 10 इकाइयों और पूंजी कि बिना किसी इकाई के अथवा पूंजी की 5 इकाइयों और श्रम कि बिना किसी इकाई के उत्पादन कर सकता है वह दोनों साधनों के उत्तम सहयोग को लगाना पसंद करेगा इष्टतम संयोग बिंदु e_2 से प्रकट होता है जब वह पूंजी की 3 इकाइयां तथा श्रम की 4 इकाइयों का प्रयोग करेगा बिंदु e_2 सम-उत्पाद वक्र IQ_2 तथा सम-लागत रेखा AF का स्पर्श बिंदु है। उत्पादक सम-उत्पाद वक्र IQ_2 तथा सम-लागत रेखा AF के स्पर्श बिंदु से ऊपर तथा नीचे की ओर जा सकता है यदि वह सम उत्पाद वक्र IQ_2 के बिंदु MN की ओर जाता है तो वह अपने आप को ऊंची सम-लागत रेखा CD पर पाएगा जिसका अर्थ है कि उसे पहले जितने उत्पादन के लिए निवेश के निश्चित स्तर की सीमा 100 से अधिक खर्च करना पड़ेगा अन्य शब्दों में 100 घड़ियों का उत्पादन करने की लागत ₹100 न्यूनतम है अतः बिंदु न्यूनतम लागत संयोग को प्रकट करता है इसके विपरीत यदि वह निचली सम-उत्पाद IQ_1 वक्र के बिंदु RS द्वारा प्रकट किए गए संयोग खरीदना चाहता है तो वह पहले जितनी लागत अर्थात ₹100 पर पहले से कम अर्थात 100 घड़ियों के स्थान पर 50 घड़ियों का उत्पादन कर पाएगा अन्य शब्दों में बिंदु उत्पादन लागत के एक निश्चित स्तर से प्राप्त अधिकतम उत्पादन को व्यक्त करता है उत्पादक केवल बिंदु e_2 पर ही संतुलन में होगा।

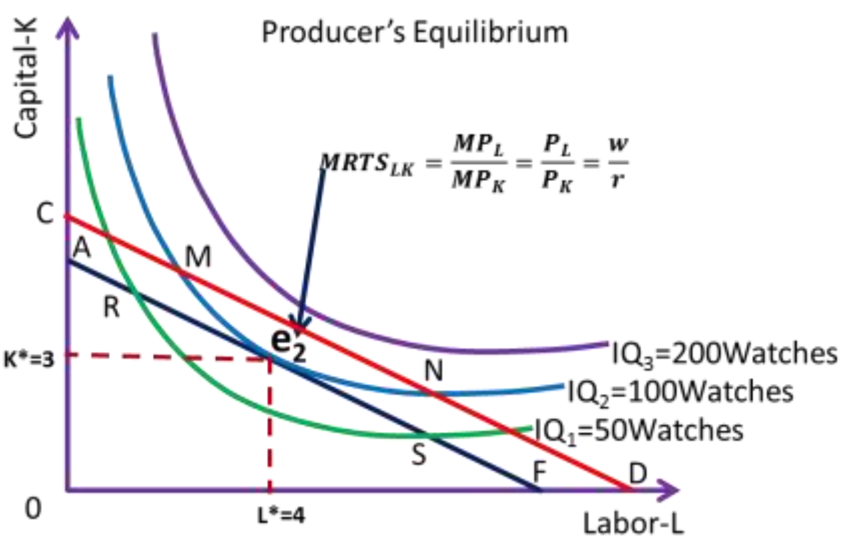

5.6.2 साधनों के इष्टतम सहयोग अथवा न्यूनतम लागत संयोग की शर्त

साधनों के इष्टतम संयोग न्यूनतम लागत संयोग अथवा उत्पादक संतुलन की निम्नलिखित शर्तें हैं;

(i) संतुलन बिंदु पर सम-लागत रेखा सम-उत्पाद वक्र का स्पर्श बिंदु होना चाहिए। सफर बिंदु पर सम लागत रेखा तथा सम उत्पाद वक्र दोनों का ढलान समान होता है। सम-लागत रेखा का ढलान साधनों की कीमतों की दर है। सम-उत्पाद वक्र का ढलान साधनों की सीमांत उत्पादों की दर है। इसे **तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर** भी कहा जाता है।

(ii) स्पर्श से बिंदु अर्थात E पर सम-उत्पाद वक्र मूल बिंदु की ओर उनतोदर हो अथवा $MRTS_{LK}$ गिर रहा हो। इस प्रकार हम साधनों के इष्टतम सहयोग की शर्तों को निम्न प्रकार से व्यक्त कर सकते हैं।

5.6.3 विस्तार पथ Expansion Path

यदि फर्म के वित्तीय साधनों में वृद्धि होती है तो वह उत्पादन की मात्रा को बढ़ाना चाहेगी। उत्पादन की मात्रा में वृद्धि तभी हो सकती है जब वित्तीय साधनों के बढ़ने से साधनों की कीमत और लागत में कोई वृद्धि नहीं होती। फर्म के वित्तीय साधन बढ़ने पर उसके कुल उत्पादन का स्तर बढ़ता है। तथा फर्म साधनों के विभिन्न संयोगों का प्रयोग करके विभिन्न स्तरों पर उत्पादन कर सकती है। उत्पादन के विभिन्न स्तरों पर फर्म साधनों के कौन से संयोगों का प्रयोग करेगी यह विस्तार पथ द्वारा ज्ञात होता है। विस्तार पथ उन सभी बिंदुओं के बिंदुपथ को बतलाता है जो उत्पादन के विभिन्न स्तरों के अनुसार साधनों के न्यूनतम लागत संयोग को दर्शाता है। अन्य शब्दों में विस्तार पथ से यह ज्ञात होता है कि जब फर्म अपने उत्पादन के पैमाने का विस्तार करती है तब वह साधनों का कौन से उत्तम संयोग का प्रयोग करती है क्योंकि फर्म का विस्तार उत्पादन के पैमाने पर आधारित होता है। इसलिए विस्तार पथ को स्तर रेखा Scale Line भी कहा जाता है। विस्तार पथ की व्याख्या निम्नलिखित रेखा चित्र के द्वारा की जा सकती है। फर्म की प्रारंभिक सम-लागत रेखा AB है यह बिंदु e_1 पर सम उत्पाद वक्र IQ_1 को स्पर्श करती है। बिंदु e_1 फर्म का प्रारंभिक संतुलन बिंदु है। मान लो श्रम तथा पूंजी की प्रति इकाई लागत में कोई परिवर्तन नहीं होता परंतु फर्म के वित्तीय साधनों में वृद्धि होती है। इसके फलस्वरूप फर्म की नई सम-लागत रेखा दाएं और सरक पर CD हो जाएगी। नई सम-लागत रेखा CD प्रारंभिक सम-लागत रेखा AB के समानांतर होगी और सम-उत्पाद वक्र IQ_2 को बिंदु e_2 पर स्पर्श करेगी जो नया संतुलन बिंदु होगा। यदि फर्म के वित्तीय साधन और भी बढ़ जाते हैं जबकि साधनों की लागत अपरिवर्तित रहती है तब नई सम-लागत रेखा GH होगी यह सम-उत्पाद वक्र IQ_3 को बिंदु e_3 पर स्पर्श करेगी जो फर्म का नया संतुलन बिंदु होगा। यदि संतुलन बिंदुओं E_1, E_2,E_3 को मिला दिया जाए तो जो रेखा प्राप्त होगी उसे विस्तार पथ या पैमाना रेखा Scale Line कहा जाएगा। संक्षेप में यदि साधन कीमतें और तकनीकी प्रतिस्थापन की दर दी हुई है तो एक फर्म का विस्तार पद या पैमाना रेखा से यह प्रकट होता है कि एक फर्म उत्पादन के विभिन्न क्षेत्रों पर साधनों का किस प्रकार संयोग करती है जिससे न्यूनतम लागत पर उत्पादन किया जा सके।

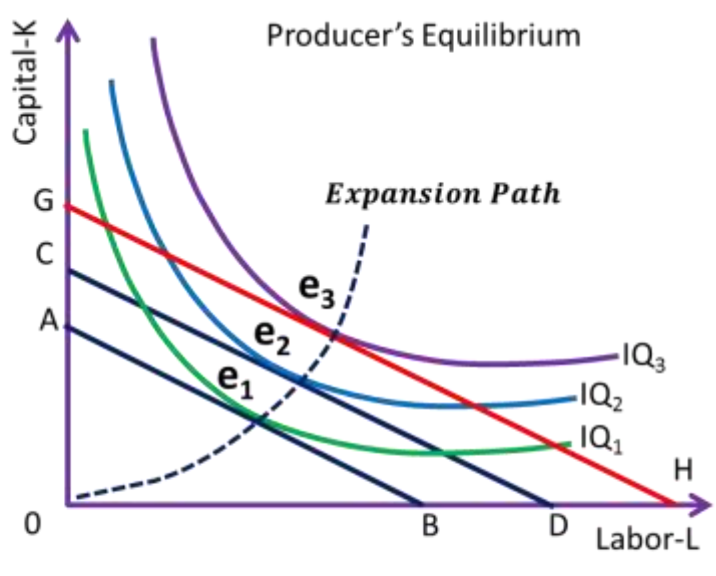

5.7 पैमाने के प्रतिफल के नियम तथा सम उत्पाद विश्लेषण Laws of Return to Scale and Iso-Product Curve Analysis

पैमाने के प्रतिफल की व्याख्या तथा चित्रण करने के लिए अर्थशास्त्रियों ने समुद्र पाद वक्र विश्लेषण का प्रयोग किया है हम जानते हैं कि पैमाने के प्रतिफल से अभिप्राय एक फर्म के उत्पादन के स्तर में होने वाले परिवर्तन से है जबकि एक दी हुई तकनीक में उत्पादन के सभी साधनों का समान अनुपात में परिवर्तन होता है पैमाने के प्रतिफल के तीन प्रकार है पैमाने का बढ़ता प्रतिफल पैमाने का घटता प्रतिफल और पैमाने का समान प्रतिफल पैमाने के प्रतिफल ओके 3 प्रकारों की व्याख्या सम उत्पाद तकनीक द्वारा निम्नलिखित ढंग से की जा सकती है

5.7.1 पैमाने के बढ़ते प्रतिफल (Increasing Returns to Scale)

पैमाने के बढ़ते प्रतिफल से अभिप्राय उस स्थिति से है जिसमें साधनों की वृद्धि की तुलना में उत्पादन में अनुपातिक की वृद्धि अधिक मात्रा में होती है अन्य शब्दों में यदि साधनों में एक निश्चित परिवर्तन के फल स्वरुप उत्पादन में अनुपातिक परिवर्तन अधिक मात्रा में होता है तो यह पैमाने के बढ़ते प्रतिफल की स्थिति है पैमाने के बढ़ते प्रतिफल की स्थिति में यदि साधनों में दुगनी वृद्धि हो जाती है तो उत्पादन के स्तर में दुगनी से अधिक वृद्धि होगी जैसा कि रेखा चित्र में दिखाया गया है श्रम और पूंजी की इकाइयां इकाइयों को दुगना कर के जैसे ही 2 से 4 इकाइयां की जाती है तो उत्पादन दुगनी से अधिक अर्थात 50 से इकाइयों से बढ़कर 120 इकाइयां हो जाता है पैमाने के बढ़ते प्रतिफल को पैमाने की बचते भी कहा जाता है

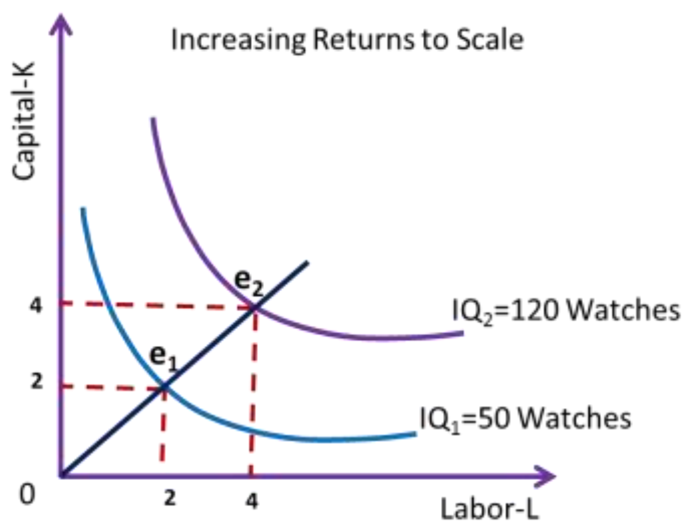

5.7.2 पैमाने के घटते प्रतिफल (Decreasing Returns to Scale)

पैमाने के घटते प्रतिफल से अभिप्राय उस स्थिति से है जिसमें साधनों में वृद्धि की तुलना में उत्पादन में अनुपातिक वृद्धि कम मात्रा में होती है अन्य शब्दों में यदि साधनों में एक निश्चित मात्रा में परिवर्तन के फल स्वरुप उत्पादन में अनुपातिक परिवर्तन कम मात्रा में होता है तो यह पैमाने के घटते प्रतिफल की स्थिति है जैसे कि यदि उत्पादन के साधनों की मात्रा को दुगना कर दिया जाए तो उत्पादन में डूबने से कम वृद्धि होती है जैसा कि रेखा चित्र में दिखाया गया है जब श्रम और पूंजी की इकाइयों में दुगनी वृद्धि होती है 2 से 4 इकाइयों इकाइयां की वृद्धि की जाती है तो उत्पादन में वृद्धि दुगने से कम अर्थात 50 इकाइयों से 80 काया होती है इसका कारण पैमाने का घटता प्रतिफल है पैमाने का खट्टा प्रतिफल पैमाने की हानियां हानियों के कारण होता है

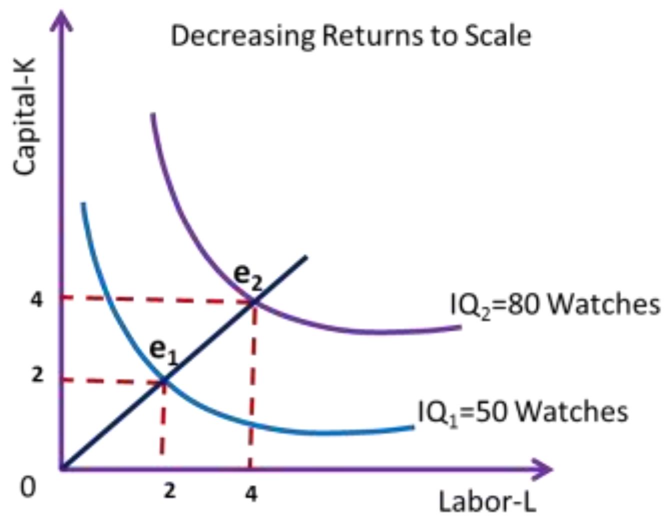

5.7.3 पैमाने के समान प्रतिफल (Constant Returns to Scale)

पैमाने का आसमान प्रतिफल उस स्थिति को व्यक्त करता है जिसमें उत्पादन में अनुपातिक विस्तार अवधि साधनों के अनुपात की विस्तार या वृद्धि के बराबर होती है अन्य शब्दों में पैमाने के समान प्रतिफल से अभिप्राय है कि साधनों की वृद्धि का आकार तथा उत्पादन वृद्धि का आकार एक ही अनुपात में होता है साधनों में दुगनी वृद्धि उत्पादन में भी दुगनी वृद्धि लाती है इसे निम्नलिखित रेखा चित्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है यहां साधनों तथा उत्पादन में वृद्धि एक ही अनुपात में हो रही है अर्थात जब साधनों में दुगनी वृद्धि दो से 4 इकाइयां की जाती है तो उत्पादन में भी दुगनी वृद्धि अर्थात 50 इकाइयों से 100 इकाइयां होती है

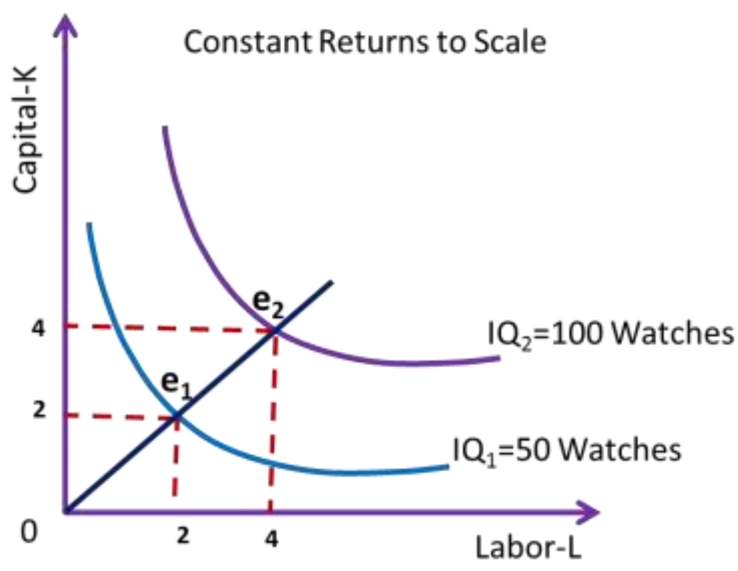

5.8 अपनी प्रगति की जाँच करें (Check Your Progress)

5.8.1 सही विकल्प चुनिए;

1. पैमाने के प्रतिफल लागू होते हैं

(A) अति अल्प काल में (B) अल्पकाल में (C) दीर्घकाल में (D) अति दीर्घकाल में

2. घटते बढ़ते प्रतिफल का नियम लागू होता है जब

(A) सभी साधन परिवर्तनशील है (B) कोई साधन परिवर्तनशील नहीं है (C) कम से कम एक साधन परिवर्तनशील है (D) दो साधन परिवर्तनशील है

3. आधुनिक विचारधारा के अनुसार घटते बढ़ते प्रतिफल का नियम लागू होता है

(A) कृषि में (B) उत्पादन के सभी साधनों में (C) उद्योग में (D) खानों में

4.उत्पादन फलन है

(A) लागतो का (B) उत्पादन के साधनों का (C) लाभ का (D) कीमतों का

5.परिवर्तनशील अनुपातों के नियम की प्रथम अवस्था वहां समाप्त होती है जहां

(A) सीमांत उत्पाद अधिकतम होता है (B) कुल उत्पाद अधिकतम होता है (C) औसत उत्पाद अधिकतम होता है (D) उपर्युक्त सभी

6. ऋणात्मक प्रतिफल की अवस्था में

(A) स्थिर साधनों की सीमांत उत्पादकता ऋणात्मक होती है (B) परिवर्तनशील साधन की सीमांत उत्पादकता ऋणआत्मक होती है (C) A और B दोनों (D) कोई नहीं

7.परिवर्तनशील अनुपातों का नियम प्रदर्शित करता है

(A) बढ़ते प्रतिफल (B) स्थिर प्रतिफल (C) घटते प्रतिफल (D) सभी

5.8.2 कोष्ठ में दिए गए शब्दों से में से रिक्त स्थान भरें;

1. पैमाने के प्रतिफल .... में लागू होते हैं (अल्पकाल/दीर्घकाल)

2. घटते-बढ़ते अनुपात का नियम .... में लागू होता है (अल्पकाल/दीर्घकाल)

3. घटते बढ़ते प्रतिफल का नियम अधिकतर .... पर लागू होता है (कृषि/उद्योग)

4. उद्योगों में अधिकतर .... प्रतिफल का नियम लागू होता है (समान/बढ़ते)

5. मुख्य रूप से उत्पादन में प्रकृति जो कार्य करती है उस पर .... प्रतिफल का नियम लागू होता है (बढ़ते/घटते)

6. यदि सीमांत उत्पादन घटता है तथा कुल उत्पादन बढ़ता है तो इस स्थिति में .... प्रतिफल का नियम लागू होता है (घटते/बढ़ते/समान)

5.9 सारांश (Summary)

उत्पादन के साधनों और उत्पादन की मात्रा के बीच के तुलनात्मक संबंध को उत्पादन फलन कहते हैं। यह एक दिए हुए समय के लिए उत्पादन की मात्रा तथा उत्पादन के साधनों में भौतिक संबंध को बताता है। जब उत्पादन में वृद्धि

करनी हो तो उत्पादन के साधनों में वृद्धि करनी पड़ती है। जब एक परिवर्तनशील साधन की मात्रा में वृद्धि की जाती है तो उसका उत्पादन पर जो प्रभाव पड़ता है उसे परिवर्तनशील अनुपातों के नियम के नाम से जाना जाता है। अल्पकाल में जब अन्य साधनों को स्थिर रखकर परिवर्तनशील साधन की मात्रा में वृद्धि की जाती है तो शुरू में कुल उत्पादन, औसत उत्पादन और सीमांत उत्पादन तीनों बढ़ते हैं, क्योंकि इस अवस्था में औसत उत्पादन लगातार बढ़ता है। इसलिए इस प्रथम अवस्था को बढ़ते औसत उत्पादन या बढ़ते प्रतिफल की अवस्था कहा जाता है। इसके बाद जब और उत्पादन किया जाता है तो औसत उत्पादन गिरने लगता है और कुल उत्पादन भी घटती दर से बढ़ता है। सीमांत उत्पादन पहले ही घटने लगता है। यह अवस्था घटते औसत उत्पादन या घटते प्रतिफल की अवस्था कहलाती है। अगर श्रम की ओर इकाइयों का प्रयोग किया जाता है तो कुल उत्पादन भी गिरने लगता है और सीमांत उत्पादन ऋणात्मक हो जाता है। यह अवस्था घटते कुल उत्पादन या ऋणात्मक प्रतिफल की अवस्था कहलाती है। एक उत्पादक दूसरी अवस्था अर्थात घटते प्रतिफल की अवस्था में उत्पादन करना पसंद करता है। एक या एक से अधिक साधनों का स्थिर रहना, उत्पादन के साधनों का अपूर्ण स्थानापन्न होना तथा साधनों की अविभाज्यता के कारण परिवर्तनशील अनुपात का नियम लागू होता है। यह अर्थशास्त्र का आधारभूत नियम है जो माल्थस के जनसंख्या सिद्धांत, रिकार्डो के लगान सिद्धांत, वितरण के सीमांत उत्पादकता सिद्धांत तथा अनेक आविष्कारों का आधार बना है।

5.10 कीवर्ड (Keywords)

कुल उत्पादन- एक परिवर्तनशील साधन का कुल उत्पादन वह अधिकतम मात्रा है जो उस साधन की एक दी हुई मात्रा का स्थिर साधनों के साथ प्रयोग करने पर उत्पन्न होती है।

औसत उत्पादन- परिवर्तनशील साधन के औसत उत्पादन से अभिप्राय उत्पादन की उस मात्रा से है जिसका अनुमान कुल उत्पादन को परिवर्तनशील साधन की प्रयोग की जाने वाली कुल इकाइयों से भाग देकर लगाया जाता है। यह परिवर्तनशील साधन का प्रति इकाई उत्पादन होता है ।

सीमांत उत्पादन- परिवर्तनशील साधन का सीमांत उत्पाद उस साधन की एक अतिरिक्त इकाई के अधिक या कम प्रयोग करने से कुल उत्पादन में होने वाला परिवर्तन है।

सम-लागत रेखा- एक सम-लागत रेखा वह रेखा है जो उत्पादन के उन विभिन्न संयोगों को व्यक्त करती है जिनकी कुल लागत समान होती है।

5.11 स्व-मूल्यांकन परीक्षण (Self-Assessment Test)

1. घटते बढ़ते अनुपात के नियम की व्याख्या करें एक तालिका तथा रेखा चित्र की सहायता से इस नियम की विभिन्न अवस्थाओं की व्याख्या करें

2. पैमाने के प्रतिफल से क्या अभिप्राय है इसके विभिन्न पहलुओं की व्याख्या करें रेखा चित्रों की सहायता से सम-उत्पाद वक्रों की परिभाषा दें

3. सम-उत्पाद वक्रों तथा पैमाने के प्रतिफल के बीच के संबंध की व्याख्या करें

4. सम-उत्पाद वक्र क्या है इसकी विभिन्न विशेषताओं का वर्णन करें

5. न्यूनतम लागत सहयोग क्या है विस्तार से व्याख्या करें

5.12 उत्तर आपकी प्रगति की जांच करने के लिए (Answers to Check Your Progress)

उत्तर 5.8.1 => 1. (C) दीर्घकाल में, 2. (C) कम से कम एक साधन परिवर्तनशील है,

उत्तर 5.8.2 => 1.दीर्घकाल, 2.अल्पकाल, 3. कृषि, 4. समान, 5. घटते, 6.घटते

5.13 संदर्भ/सुझाई गई पुस्तकें (References/ Suggested Readings)

आहूजा, एच. एल. उच्चतर आर्थिक सिद्धांत (व्यष्टि पर आर्थिक विश्लेषण) एस चांद पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली

झिंगन, एम. एल. (2015) व्यष्टि अर्थशास्त्र वृंदा पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली

मैनकीव, एन. ग्रेगरी व्यष्टि अर्थशास्त्र के सिद्धांत सेनगेज लर्निंग, अमेरीका

कौट्सोयियनिस, ए. आधुनिक व्यष्टि अर्थशास्त्र मैकमिलन प्रेस लिमिटेड, दिल्ली

विषय: अर्थशास्त्र (व्यष्टिगत अर्थशास्त्र के सिद्धांत)	
विषय क्रमांक: बीए BECO-101	**लेखक: डॉ. सोमनाथ परूथी**
अध्याय: 6	**वेट्टर:**
लागत एवं आगम विश्लेषण	

संरचना (Structure)

6.0 सीखने के उद्देश्य (Learning Objectives)

6.1 परिचय (Introduction)

6.2 उत्पादन लागत क्या है ? What is Production Cost?

6.2.1 कुल मौद्रिक लागत के प्रकार Types of Total Monetary Cost

6.2.1.1 स्पष्ट लागते (Explicit Costs)

6.2.1.2 निहित लागते (Implicit Costs)

6.3 उत्पादन प्रक्रिया के लिए उपलब्ध समय अवधि के आधार पर स्पष्ट लागतो के प्रकार (Types of Explicit Costs Based on Time Period Available to Production Process)

6.3.1 अल्पकाल में लागते (Short Run Costs)

6.3.1.1 कुल लागत (Total Cost)

6.3.1.1.1 कुल स्थिर लागतें या पूरक लागतें (Total Fixed Costs or Supplementary Cost)

6.3.1.1.2 कुल परिवर्तनशील लागतें या प्रमुख लागते (Total Variable Costs or Prime Costs)

6.3.1.1.3 कुल स्थिर लागत तथा कुल परिवर्तनशील लागत का जोड़ (Sum of Total Fixed Cost and Total Variable Cost)

6.3.1.1.4 स्थिर लागत तथा परिवर्तनशील लागत में अंतर का महत्व (Importance of Difference between Fixed Cost and Variable Cost)

6.3.1.2 औसत लागत Average Cost

6.3.1.2.1 औसत स्थिर लागत (Avergae Fixed Cost)

6.3.1.2.2 औसत परिवर्तनशील लागत (Average Variable Cost)

6.3.1.2.3 औसत कुल लागत/औसत लागत (Average Total Cost/Average Cost)

6.3.1.3 सीमांत लागत (Marginal Cost)

6.3.1.4 अल्पकाल में विभिन्न लागत वक्रों में संबंध (Relationship between Different Cost Curves in the Short Run)

6.3.2 दीर्घकाल में लागतें (Long Run Costs)

6.3.2.1 दीर्घकालीन कुल लागत (Long Run Total Cost)

6.3.2.2 दीर्घकालीन औसत लागत वक्र या लिफाफा वक्र (Long Run Average Cost Curve or Envelope Curve)

6.3.2.2.1 दीर्घकालीन औसत लागत वक्र U आकार की क्यों होती है? (Why Long Run Average Cost Curve is U Shaped?)

6.3.2.2.2 दीर्घकालीन तथा अल्पकालीन औसत लागत वक्रओं में संबंध (Relation between Long Run and Short Run Average Cost Curves)

6.3.2.3 दीर्घकालीन सीमांत लागत (Long Run Marginal Cost)

6.3.2.3.1 दीर्घकालीन सीमांत लागत तथा अल्पकालीन सीमांत लागत में संबंध (Relation between Long Run Marginal Cost and Short Run Marginal Cost)

6.4 आगम विश्लेषण Revenue Analysis

6.4.1 आगम का अर्थ (Meaning of Revenue)

6.4.1.1 कुल आगम (Total Revenue)

6.4.1.2 सीमांत आगम (Marginal Revenue)

6.4.1.3 औसत आगम (Average Revenue)

6.4.2 कुल आगम, औसत आगम और सीमांत आगम के बीच संबंध (Relationship between Total Revenue, Average Revenue and Marginal Revenue)

6.5 समविच्छेद बिंदु विश्लेषण Break Even Point Analysis

6.5.1 सम विच्छेद बिंदु विश्लेषण की मान्यताएं (Assumptions of Break Point Analysis)

6.5.2 फर्म के संतुलन की शर्तें (Conditions of a Firm’s Equilibrium)

6.5.3 समविच्छेद बिंदु के उपयोग (Uses of Break Even Point)

6.5.4 समविच्छेद बिंदु विश्लेषण की सीमाएँ (Limitations of Break Even Point)

6.6 अपनी प्रगति की जाँच करें (Check Your Progress)

6.7 सारांश (Summary)

6.8 कीवर्ड (Keywords)

6.9 स्व-मूल्यांकन परीक्षण (Self-Assessment Test)

6.10 उत्तर आपकी प्रगति की जांच करने के लिए (Answers to Check Your Progress)

6.11 संदर्भ/सुझाई गई पुस्तकें (References/ Suggested Readings)

6.0 सीखने के उद्देश्य (Learning Objectives)

प्रस्तुत इकाई में हम यह अध्ययन करेंगे कि

- लागत की विभिन्न अवधारणाएं कौन-कौन सी है।
- मौद्रिक लागतें क्या है तथा इसमें कौन-कौन से तत्व शामिल होते हैं।
- वास्तविक लागत की अवधारणा क्या है
- स्थिर तथा परिवर्तनशील लागतें क्या होती है
- औसत तथा सीमांत लागतें क्या होती है
- कुल लागत, औसत लागत तथा सीमांत लागत के बीच क्या संबंध होता है
- आगम की विभिन्न अवधारणाएं कौन-कौन सी है।
- कुल आगम, औसत आगम तथा सीमांत आगम क्या होते हैं।
- औसत आगम व सीमांत आगम में किस प्रकार का संबंध होता है।
- कीमत निर्धारण में आगम वक्र की क्या भूमिका होती है।
- पूर्ण प्रतियोगिता में औसत आगम तथा सीमांत आगम किस प्रकार के होते हैं।
- अपूर्ण प्रतियोगिता में आगम वक्र कैसे होते हैं।
- आगम तथा लागत विश्लेषण का समविच्छेद बिंदु से क्या संबंध है अर्थात समविच्छेद बिंदु क्या है।

6.1 परिचय (Introduction)

उत्पादक के दृष्टिकोण से लागत पक्ष अत्यंत महत्वपूर्ण है। उत्पादन शुरू करने से पहले उत्पादन के साधनों को इकट्ठा करना पड़ता है। उत्पादन के साधनों तथा स्वयं उत्पादन की उद्यमशीलता को एक निश्चित संयोग में मिलाएं बिना उत्पादन नहीं किया जा सकता। प्रत्येक उत्पादन के साधन का अपना अलग मूल्य होता है। तथा एक उत्पादन के साधन से दूसरे उत्पादन के साधन को एक सीमा तक प्रतिस्थापित भी किया जा सकता है। उत्पादन के साधनों में महंगे साधनों का प्रयोग निश्चित रूप से कुल उत्पादन लागत को बढ़ाता है। साथ ही सस्ते उत्पादन के साधनों से पैदा की जा रही वस्तु की उत्पादन लागत अपेक्षाकृत कम होती है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि किसी वस्तु के उत्पादन में प्रयोग होने वाले सारे के सारे सहायक साधनों को दिया जाने वाला भुगतान ही उत्पादन लागत है।

हम जानते हैं कि उत्पादक का लाभ उस पर आ रही उत्पादन लागत पर ही नहीं बल्कि वस्तु की बिक्री से प्राप्त होने वाले आगम पर भी निर्भर करता है। उत्पादक के लाभ उसके कुल लागत एवं कुल आगम के अंतर पर निर्भर करते हैं। इस अध्याय में हम उत्पादक के आगम पक्ष का भी विस्तृत अध्ययन करेंगे। आगम पक्ष उत्पादन के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। क्योंकि आगम पर ही लाभ निर्भर करता है। तथा लाभ व आगम का स्तर ही यह निर्धारित करता है कि उत्पादक को वर्तमान परिस्थितियों में अपना उत्पादन जारी अथवा बंद रखना चाहिए।

6.2 उत्पादन लागत क्या है? What is Production Cost?

प्रत्येक फॉर्म किसी वस्तु का उत्पादन करने के लिए उत्पादन के साधनों का प्रयोग करती है। उत्पादन के साधनों का प्रयोग करने के लिए जो रकम खर्च करनी पड़ती है उसे उत्पादन लागत कहा जाता है। उत्पादन लागत मुख्य रूप से उत्पादन की मात्रा पर निर्भर करती है। साधारणतः से उत्पादन के बढ़ने पर उत्पादन लागत बढ़ती है। अतः यह कहा जा सकता है कि उत्पादन लागत उत्पादन की मात्रा का फलन है।

$$C = f(Q)$$

किसी वस्तु का उत्पादन तथा बिक्री करने के लिए मुद्रा के रूप में जो धन खर्च करना पड़ता है उसे उस वस्तु की मौद्रिक लागत कहा जाता है। मान लीजिए 500 दर्जन कॉपियों का उत्पादन करने की लागत ₹2000 है तो इन ₹2000 को 500 कॉपियों की मौद्रिक लागत कहा जाएगा। साधारणतः लागत शब्द का प्रयोग मौद्रिक लागत के लिए ही किया जाता है। अर्थशास्त्र में लागत में निम्नलिखित खर्चे शामिल होते हैं (1) कच्चे माल की कीमत (2) ब्याज (3) लगान (4) मजदूरी (5) बिजली या चालक शक्ति का खर्च (6) घिसावट (7) विज्ञापन का खर्च (8) बीमा (9) पैकिंग (10) ट्रांसपोर्ट पर किया जाने वाला खर्च तथा (11) सामान्य लाभ। किसी वस्तु की एक निश्चित मात्रा का उत्पादन करने के लिए उत्पादन के साधनों को जो भुगतान किया जाता है उसे मौद्रिक उत्पादन लागत कहते हैं। एक वस्तु की बिक्री को बढ़ाने के लिए विज्ञापन आदि पर जो धन खर्च किया जाता है उसे **विक्रय लागत** (selling cost) कहा जाता है।

6.2.1 कुल मौद्रिक लागत के प्रकार Types of Total Monetary Cost

कुल मौद्रिक लागत दो प्रकार की होती है (1) स्पष्ट लागते (2) निहित लगते।

6.2.1.1 स्पष्ट लागते

एक फर्म को कई आगत इनपुट्स खरीदने या किराए पर लेने पड़ते हैं फर्म द्वारा उन बाहरी व्यक्तियों को जो उसे श्रम श्रम कच्चा माल इंधन यातायात चालक शक्ति आदि की आपूर्ति करते हैं मौद्रिक भुगतान करने पड़ते हैं फर्म द्वारा दूसरों को किए गए इन मौद्रिक भुगतान ओं को स्पष्ट लागते कहा जाता है फन के द्वारा दी जाने वाली मजदूरी कच्चे व अर्ध निर्मित माल के भुगतान ऋणों पर दिए जाने वाला ब्याज व गिरावट पर किए जाने वाले भुगतान आदि शपथ लागते कहलाती है इन्हें निरपेक्ष लागते उत्पादन लागत ए या वास्तविक लागते भी कहा जाता है

6.2.1.2 निहित लागते

एक फर्म के पास कई आगत आगत इनपुट्स ऐसे होते हैं जिनकी स्वामी वह स्वयं होती है तथा जिनका उपयोग भी वह स्वयं ही करती है इनके लिए फॉर्म को किसी बाहरी व्यक्ति को भुगतान नहीं करना पड़ता परंतु यदि पर उनका स्वयं उपयोग करती है तो उसे इनकी बिक्री करने या उन्हें किराए पर देने से प्राप्त होने वाली आय के अवसर का त्याग करना पड़ता है उदाहरण के लिए जब एक फर्म अपनी इमारत का स्वयं प्रयोग करती है तो उसे किसी और को किराए पर नहीं दे पाती परंतु इस इमारत को किसी अन्य व्यक्ति को किराए पर देने से जो किराया प्राप्त हो सकता था उसकी हानि उठानी पड़ेगी अर्थशास्त्र में एक फार्म के अपने साधनों के प्रयोग की अवसर लागत को निहित लागत कहा जाता है

6.3 उत्पादन प्रक्रिया के लिए उपलब्ध समय अवधि के आधार पर स्पष्ट लागतो के प्रकार (Types of Explicit Costs Based on Time Period Available to Production Process)

स्पष्ट लागतो को उत्पादन प्रक्रिया के लिए उपलब्ध समय अवधि के आधार पर दो भागों में बांटा जा सकता है

6.3.1 अल्पकाल में लागते

6.3.2 दीर्घकाल में लागत

6.3.1 अल्पकाल में लागते (Short Run Costs)

अल्पकालीन लागतो का क्योंकि अल्पकालीन उत्पादकता से घनिष्ठ संबंध है इसलिए अल्पकालीन उत्पादकता के प्रत्येक माप से संबंधित एक अल्पकालीन लागत होती है। जिस प्रकार स्थिर तथा परिवर्तनशील साधन होते हैं उसी प्रकार स्थिर तथा परिवर्तनशील लागत भी होती है। इसी तरह जिस प्रकार उत्पादकता के कुल, औसत तथा सीमांत माप होते हैं उसी प्रकार लागत के भी कुल, औसत तथा सीमांत माप होते हैं। संक्षेप में लागत तथा उत्पादकता में पारस्परिक संबंध पाया जाता है।

6.3.1.1 कुल लागत (Total Cost)

एक वस्तु के विभिन्न स्तरों का उत्पादन करने के लिए जो धन व्यय करना पड़ता है उसे कुल लागत कहते हैं। क्योंकि अल्पकाल में हम साधनों को स्थिर तथा परिवर्तनशील दो श्रेणियों में बांट लेते हैं इसी प्रकार फर्म के कुल उत्पादन लागत को भी दो श्रेणियों में बांटा जाता है। स्थिर साधन की लागत को कुल स्थिर लागत तथा परिवर्तनशील लागत की कुल लागत को कुल परिवर्तनशील लागतें कहा जाता है। अतः कुल लागत, कुल स्थिर लागत तथा कुल परिवर्तनशील लागत का जोड़ है। कुल लागत, उत्पादन के प्रत्येक स्तर पर कुल स्थिर लागत तथा कुल परिवर्तनशील लागत का जोड़ है। कुल लागत सदैव उत्पादन के साथ बढ़ती जाती है। इसका कारण यह है कि उत्पादन में वृद्धि करने के लिए सदैव अधिक साधनों की आवश्यकता पड़ती है।

6.3.1.1.1 कुल स्थिर लागतें या पूरक लागतें Total Fixed Costs or Supplementary Cost

अल्पकाल में स्थिर साधनों की लागत को स्थिर लागत कहा जाता है। स्थिर लागत, स्थिर साधनों की इकाइयों तथा उनकी कीमतों का गुणनफल है।

कुल स्थिर लागत =स्थित साधन की इकाइयां × स्थिर साधन की कीमत

यह लगते उत्पादन की मात्रा के साथ परिवर्तित नहीं होती। यदि उत्पादन शून्य हो या अधिकतम हो फिर लागते इतनी ही रहती है। कुल स्थिर लागत उद्यमी द्वारा लगाई जाने वाली कुल स्पष्ट लागतो तथा निहित अल्पकालीन लागतो का जोड़ है। कुल स्थिर लागते उत्पादन की मात्रा के साथ परिवर्तित नहीं होती। यदि एक फर्म कुछ समय के लिए उत्पादन करना बंद भी कर देती है तो भी उसे कुल स्थिर लागत का खर्चा उठाना पड़ता है। दरी के कारखाने में अधिक से अधिक 100 दरी प्रतिदिन बन सकती है। दरी बनाने की लागत ₹100 है उस कारखाने में चाहे किसी दिन एक भी दरी न बने स्थिर लागत ₹100 ही रहेगी। यदि दूसरे दिन 100 दरी बन जाए तो भी स्थिर लागत ₹100 ही रहेगी। इन्हें पूरक लगते या अप्रत्यक्ष लगते भी कहा जाता है। निम्नलिखित स्थिर लागत में शामिल होते हैं (1) किराया (2) दिसावर (3)का वेतन (4) लाइसेंस (6) बीमा आदि

कुल स्थिर लागत को रेखा चित्र 6.1 की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है चित्र 6.1 से स्पष्ट होता है कि चाहे उत्पादन कम हो या अधिक हो कुल स्थिर लागत में कोई परिवर्तन नहीं होगा। यह AC रेखा ऊर्ध्वाधर अक्स (vertical axis) को बिंदु F पर छू रही है। इससे ज्ञात होता है कि उत्पादन शून्य है तो भी बंधी लागत ₹10 ही होगी।

तालिका 6.1

Quantity of Output	Total Fixed Cost
0	₹10
1	₹10
2	₹10
3	₹10
4	₹10
5	₹10
6	₹10
7	₹10
8	₹10

चित्र 6.1

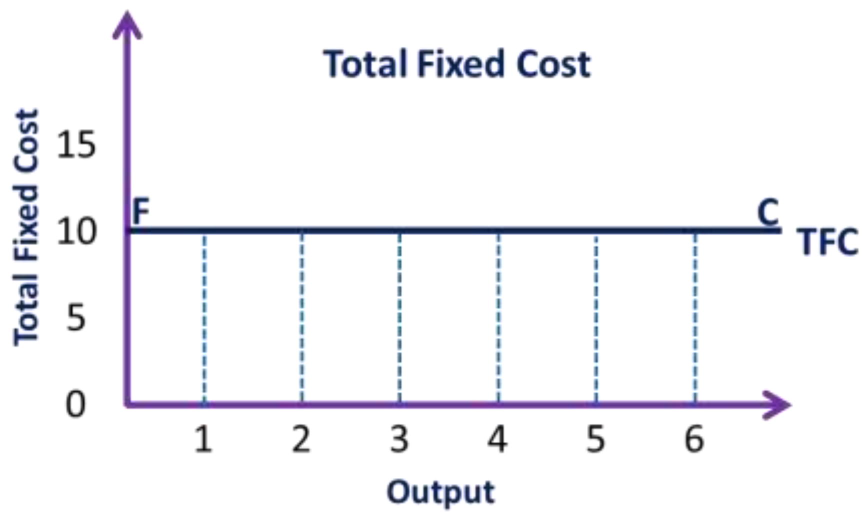

6.3.1.1.2 कुल परिवर्तनशील लागतें या प्रमुख लागते

परिवर्तनशील लागतें वे हैं जो उत्पादन के घटते बढ़ते साधनों के प्रयोग के लिए खर्च करनी पड़ती है घटती बढ़ती लागत वह लागत है जो उत्पादन की मात्रा में परिवर्तन होने पर परिवर्तित होती है उत्पादन में परिवर्तन आने से इन लागतो में भी परिवर्तन आता है यदि उत्पादन कम हो जाता है तो यह लगते कम हो जाती है और उत्पादन के बढ़ने पर यह लागते बढ़ जाती है यदि उत्पादन शून्य हो जाता है तो यह लागते भी शून्य हो जाती है इन लागतो को प्रमुख लगते या प्रत्यक्ष लागते भी कहा जाता है घटती बढ़ती लागत ए लागत में निम्नलिखित खर्च शामिल किए जाते हैं नंबर 1 कच्चे माल पर किए जाने वाला खर्च नंबर दो प्रत्येक श्रम की मजदूरी नंबर 3 चालक शक्ति जैसे बिजली का खर्च नंबर 4 टूट-फूट पर खर्च इत्यादि तालिका 6.2 तथा रेखाचित्र 6.2 द्वारा घटती-बढ़ती लागतो को स्पष्ट किया जा सकता है तालिका से स्पष्ट हो जाता है कि जैसे-जैसे उत्पादन की मात्रा बढ़ रही है घटती बढ़ती लागते भी बढ़ रही है यह उत्पादन शून्य था जब

उत्पादन शून्य था तो परिवर्तनशील लागत TVC शून्य थी इसके विपरीत जब उत्पादन बढ़कर एक इकाई हो गया तो परिवर्तनशील लागत भी बढ़कर ₹10 हो गई जब उत्पादन बढ़कर 6 इकाई हो जाता है तो परिवर्तनशील लागत भी बढ़कर 8:00 ₹30 हो जाती है इस तालिका से ज्ञात होता है कि उत्पादन की प्रत्येक इकाई की परिवर्तनशील लागत ओं में एक समान परिवर्तन नहीं होता उत्पादन की चार इकाइयों तक परिवर्तनशील लागतो में होने वाली वृद्धि पहले की तुलना में कम होती है चौथी और पांचवी इकाइयों की परिवर्तनशील लागतो में समान मात्रा में वृद्धि हुई है इसके पश्चात उत्पादन की प्रत्येक इकाई की परिवर्तनशील लागत बढ़ती जा रही है इसका मुख्य कारण घटते-बढ़ते अनुपात के नियम का लागू होना है

तालिका 6.2

Quantity of Output	Total Variable Cost
0	₹0
1	₹10
2	₹18
3	₹24
4	₹28
5	₹32
6	₹38
7	₹46
8	₹62

चित्र 6.2

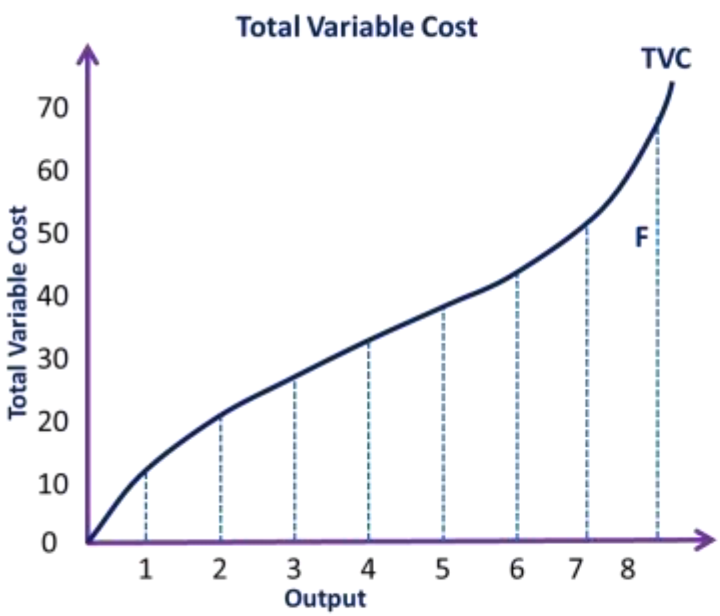

तालिका 6.3

Quantity of Output	Total Fixed Cost (TFC)	Total Variable Cost (TVC)	Total Cost TC=TFC+TVC
0	₹10	₹0	₹10
1	₹10	₹10	₹20
2	₹10	₹18	₹28
3	₹10	₹24	₹34
4	₹10	₹28	₹38
5	₹10	₹32	₹42
6	₹10	₹38	₹48
7	₹10	₹46	₹56
8	₹10	₹62	₹72

6.3.1.1.3 कुल स्थिर लागत तथा कुल परिवर्तनशील लागत का जोड़ (Sum of Total Fixed Cost and Total Variable Cost)

अल्पकाल में उत्पादन में विभिन्न स्तरों के लिए कुल स्थिर लागत तथा कुल परिवर्तनशील लागत के जोड़ को **कुल लागत** कहा जाता है। कुल लागत, स्थिर लागत तथा परिवर्तनशील लागत के संबंध को तालिका 3 तथा रेखा चित्र 6.3 द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। तालिका 6.3 में कुल लागत का अनुमान स्थिर लागत तथा घटती बढ़ती लागतो के जोड़ द्वारा लगाया गया है। उत्पादन की मात्रा के बढ़ने के साथ कुल लागत भी बढ़ती जा रही है। जब उत्पादन शून्य हैं तब भी कुल लागत लागते ₹10 है क्योंकि स्थिर लागत ₹10 है यद्यपि परिवर्तनशील लागत 10 है। जब उत्पादन बढ़कर 6 इकाई हो गया तो कुल लागत बढ़कर ₹48 (10+38) हो गई। कुल लागत को रेखाचित्र 3 द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। TFC बंदी लागत वक्र है। TVC परिवर्तनशील लागत वक्र है। तथा TC कुल लागत वक्र है। यह वक्र TFC तथा TVC परिवर्तनशील लागत के जोड़ को प्रकट कर रहा है। TC वक्र TFC वक्र के प्रारंभिक बिंदु से शुरू होती है बिंदु O पर उत्पादन शून्य हैं परंतु स्थिर लागत ₹10 है इसीलिए कुल लागत भी ₹10 है। कुल लागत तथा परिवर्तनशील लागत का अंतर एक समान रहा है। यह परिवर्तनशील लागतो के बराबर है। इसलिए कुल लागत वक्र तथा परिवर्तनशील लागत वक्र के मध्य में सदैव बराबर का फासला रहता है। इसीलिए यह दोनों वक्र अर्थात TVC और TC एक दूसरे के समानांतर रहती है।

चित्र 6.3

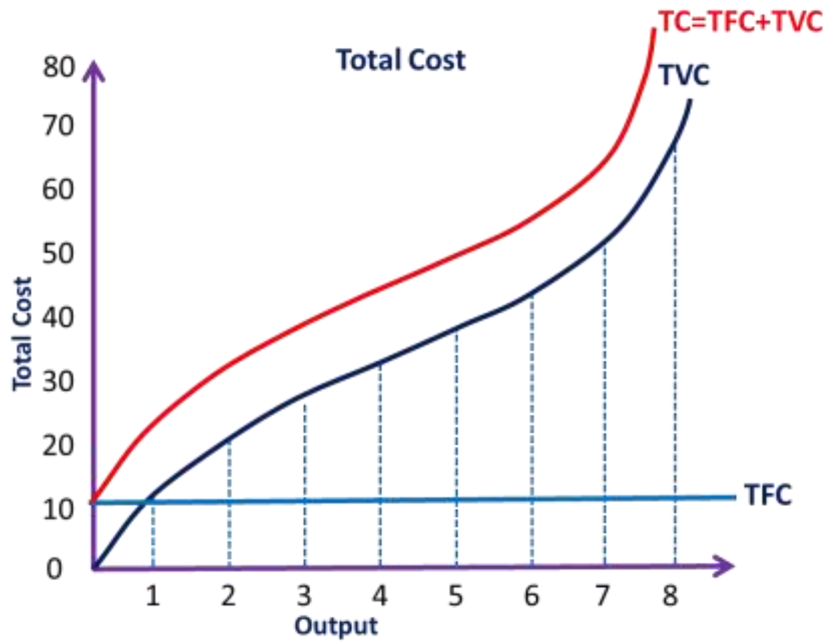

6.3.1.1.4 स्थिर लागत तथा परिवर्तनशील लागत में अंतर का महत्व (Importance of Difference between Fixed Cost and Variable Cost)

अल्पकाल में स्थिर लागत तथा परिवर्तनशील लागतो में पाए जाने वाले अंतर का निम्नलिखित महत्व है

1. **मंदी के समय उत्पादन निर्णय**: अल्पकाल में मंदी के कारण वस्तुओं की मांग तथा कीमत कम हो जाती है फर्म को यह निर्णय लेना पड़ता है कि मंदी के दौरान वह उत्पादन जारी रखें या उत्पादन बंद कर दे अल्पकाल में उत्पादन बंद करने पर भी फॉर्म को स्थिर लागत ए जैसे इमारत का किराया स्थिर पूंजी पर ब्याज आदि खर्च करने पड़ेंगे इसलिए फर्म को अल्पकाल में काम बंद करने का निर्णय लेने पर भी स्थिर लागतो की हानि उठानी ही पड़ेगी अतः यदि मंदी के समय वस्तु की कीमत कम होकर परिवर्तनशील लागत तो के बराबर भी हो जाती है तो भी फल उत्पादन जारी रखने का निर्णय लेगी वह स्थिर लागत की हानि सहन कर लेगी फर्म उस समय तक उत्पादन करती रहेगी जब तक उसे घटती बढ़ती लागते प्राप्त होती रहेगी परंतु यदि फर्म को परिवर्तनशील लागत की लागत भी प्राप्त नहीं होगी तो वह उत्पादन करना बंद कर देगी
2. **लागत पर नियंत्रण**: अल्पकाल में फर्म का स्थिर लागत पर कोई नियंत्रण नहीं होता चाहे उत्पादन कम करें या बढ़ा दे फिर लागते उसे अवश्य ही उठानी पड़ेगी इसके विपरीत परिवर्तनशील लागत ऊपर फर्म का नियंत्रण होता है इसीलिए फॉर्म इन लागतो को कम या अधिक कर सकती है अल्पकाल में एक फर्म एक निश्चित उत्पादन की मात्रा के लिए इष्टतम सहयोग की अवस्था प्राप्त नहीं कर सकती क्योंकि कुछ लागते फिर लागते होती है

6.3.1.2 औसत लागत Average Cost

किसी वस्तु की प्रति इकाई लागत को औसत लागत कहा जाता है कुल लागत को उत्पादन की मात्रा से भाग देने पर औसत लागत ज्ञात होती है कुल औसत लागत कुल लागत की तरह औसत लागत भी के भी तीन पहलू होते हैं (i) **औसत स्थिर लागत (Average Fixed Cost)** (ii) **औसत परिवर्तनशील लागत (Average Variable Cost)** (iii) **औसत कुल लागत/औसत लागत (Average Total Cost or Average Cost)**

6.3.1.2.1 औसत स्थिर लागत (Avergae Fixed Cost): औसत स्थिर लागत, प्रति इकाई स्थिर लागत है कुल स्थिर लागत को उत्पादन की मात्रा से भाग देने पर जो भजन फल आता है उसे औसत स्थिर लागत कहते हैं क्योंकि कुल स्थिर लागत स्थिर रहती है इसीलिए उत्पादन जितना अधिक होता है प्रति इकाई स्थिर लागत उतनी ही कम होती है इसे निम्नलिखित तालिका 6.4 और रेखा चित्र 6.4 द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है तालिका से ज्ञात होता है कि जब एक इकाई का उत्पादन किया जाता है तो औसत स्थिर लागत ₹10 है इसके विपरीत जब 5 इकाइयों का उत्पादन किया जाता है तो औसत स्थिर लागत कम होकर ₹2 हो जाती है औसत स्थिर लागत उत्पादन में होने वाली वृद्धि के साथ घटती जाती है रेखा चित्र में AFC रेखा औसत स्थिर लागत को प्रकट कर रही है यह रेखा दाहिनी तरफ नीचे की ओर झुकी हुई है औसत स्थिर लागत AFC वक्र के नीचे की तरफ गिरने की प्रवृत्ति से यह स्पष्ट है कि यह वक्र क्षैतिज अक्ष (OX- अक्ष) को कहीं ना कहीं अवश्य स्पर्श करेगा परंतु ऐसा संभव नहीं है क्योंकि जिस बिंदु पर AFC वक्र क्षैतिज अक्ष को स्पर्श करेगा वहां पर औसत स्थिर लागत शून्य होनी चाहिए लेकिन ऐसा कभी नहीं हो सकता क्योंकि AC औसत लागत शून्य नहीं हो सकती इससे सिद्ध होता है कि उत्पादन बढ़ने पर औसत स्थिर लागत लागते घटती जाती है औसत स्थिर लागत वक्र रैक्टेंगुलर हाइपरबोला rectangular hyperbola के आकार की होती है क्योंकि इसके प्रत्येक बिंदु पर कुल स्थिर लागत एक समान होती है

तालिका 6.4

Quantity of Output	Fixed Cost	Average Fixed Cost
1	₹10	₹10.00
2	₹10	₹5.00
3	₹10	₹3.30
4	₹10	₹2.50
5	₹10	₹2.00
6	₹10	₹1.70
7	₹10	₹1.40
8	₹10	₹1.20

रेखा चित्र 6.4

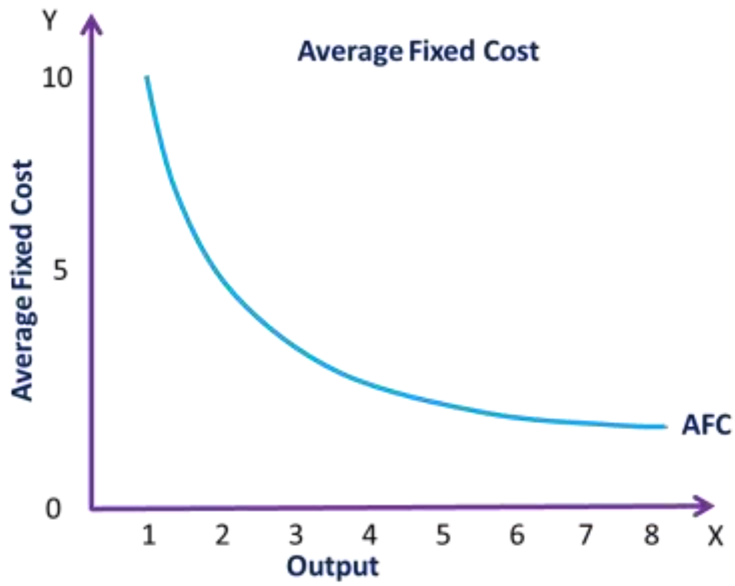

6.3.1.2.2 औसत परिवर्तनशील लागत (Average Variable Cost):

औसत परिवर्तनशील लागत (AVC) प्रति इकाई परिवर्तनशील लागत है इसका अनुमान कुल परिवर्तनशील लागत को उत्पादन की मात्रा से भाग देकर लगाया जाता है इसे भी निम्नलिखित तालिका 6.5 एवं रेखा चित्र 6.5 की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है तालिका से ज्ञात होता है कि उत्पादन के बढ़ने पर औसत परिवर्तनशील लागत छठी इकाई तक कम हो रही है परंतु सातवीं इकाई से बढ़नी शुरू हो जाती है इसका कारण यह है कि उत्पादन के आरंभ में बढ़ते प्रतिफल का नियम लागू होता है इसीलिए औसत परिवर्तनशील लागत कम होती जाती है एक सीमा के बाद उत्पादन पर घटते प्रतिफल का नियम लागू होने लगता है इसलिए यह लगते बढ़ने लगती है रेखा चित्र में क्षैतिज अक्ष (OX-अक्ष) पर उत्पादन की मात्रा तथा ऊर्ध्वाधर अक्ष (OY- अक्ष) पर उत्पादन लागत प्रकट की गई है AVC वक्र की आकृति अंग्रेजी भाषा के U शब्द की तरह है पहले यह वक्र 6 इकाइयों तक नीचे की ओर गिर रही है इसका अर्थ यह है कि उत्पादन की मात्रा बढ़ने पर औसत परिवर्तनशील लागत कम हो रही है सातवीं इकाई से यह वक्र ऊपर की और उठ रही है इसका अर्थ यह हुआ कि औसत परिवर्तनशील लागत बढ़ रही है रेखाचित्र 6.5 से ज्ञात होता है कि AVC रेखा U आकार की है अर्थात शुरू में औसत परिवर्तनशील लागत कम हो रही है इसके बाद एक न्यूनतम बिंदु पर पहुंच गई है तथा फिर सातवीं इकाई के बाद यह रेखा ऊपर की ओर उठने लगी है अर्थात परिवर्तनशील लागत बढ़ रही है औसत परिवर्तनशील लागत का U आकार का होना घटते-बढ़ते प्रतिफल के नियम पर निर्भर करता है किसी वस्तु के उत्पादन की प्रारंभिक अवस्था में औसत परिवर्तनशील लागत कम होती है इसके बाद समान हो जाती है तथा अंत में बढ़ने लगती है

तालिका 6.5

Quantity of Output	Total Variable Cost	Average Variable Cost
1	₹10	₹10
2	₹18	₹9
3	₹24	₹8
4	₹28	₹7
5	₹32	₹6.4
6	₹38	₹6.3
7	₹46	₹6.6
8	₹62	₹7.8

रेखाचित्र 6.5

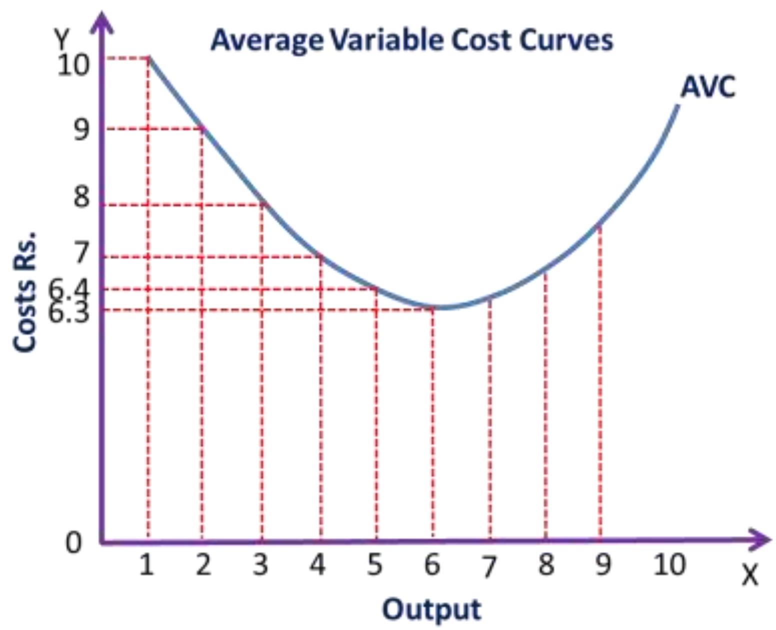

6.3.1.2.3 औसत कुल लागत/औसत लागत (Average Total Cost/Average Cost): किसी वस्तु की प्रति इकाई लागत को औसत लागत कहा जाता है हम औसत लागत को औसत स्थिर लागत तथा औसत परिवर्तनशील लागत के रूप में परिभाषित कर सकते हैं यह सभी स्थिर तथा परिवर्तनशील साधनों की प्रति इकाई औसत लागत का माप है अर्थात मान लीजिए किसी वस्तु की 6 इकाइयों की कुल लागत ₹180 है तो प्रति इकाई औसत लागत या औसत लागत 180/6 = ₹30 होगी औसत लागत को निम्नलिखित तालिका 6.6 तथा रेखा चित्र 6.6 की सहायता से समझा जा सकता है तालिका में औसत लागत, औसत परिवर्तनशील लागत तथा औसत स्थिर लागत को जोड़ने से औसत लागत का अनुमान लगाया गया है सातवीं इकाई तक औसत लागत कम हो रही है क्योंकि औसत स्थिर तथा औसत परिवर्तनशील लागत में भी कम हो रही है सातवीं इकाई की औसत लागत न्यूनतम हो गई है इसके पश्चात औसत लागत बढ़ रही है क्योंकि औसत परिवर्तनशील लागत भी बढ़ रही है औसत लागत को रेखा चित्र द्वारा भी

स्पष्ट किया जा सकता है रेखा चित्र में क्षैतिज अक्ष (OX- अक्ष) पर उत्पादन तथा ऊर्ध्वाधर अक्ष (OY- अक्ष) पर लागत प्रकट की गई है AC वक्र औसत लागत को प्रकट कर रही है यह वक्र अंग्रेजी भाषा के शब्द U की तरह है इससे प्रकट होता है कि उत्पादन की मात्रा बढ़ने पर आरंभ में औसत लागत कम होती है एक सीमा के बाद यह बढ़ना शुरू हो जाती है इसका कारण यह है कि शुरू में जब उत्पादन में वृद्धि की जाती है तो बढ़ते प्रतिफल या घटती लागत का नियम लागू होता है एक सीमा के बाद उत्पादन बढ़ने पर घटते प्रतिफल या बढ़ती लागत का नियम लागू हो जाता है इसलिए यह वक्र ऊपर की ओर उठने लगती है

तालिका 6.6

Output	AFC	AVC	AC=AFC+AVC
1	₹10.00	₹10	₹20
2	₹5.00	₹9	₹14
3	₹3.30	₹8	₹11.3
4	₹2.50	₹7	₹9.5
5	₹2.00	₹6.4	₹8.4
6	₹1.70	₹6.3	₹8
7	₹1.40	₹6.6	₹8
8	₹1.20	₹7.8	₹9

चित्र 6.6

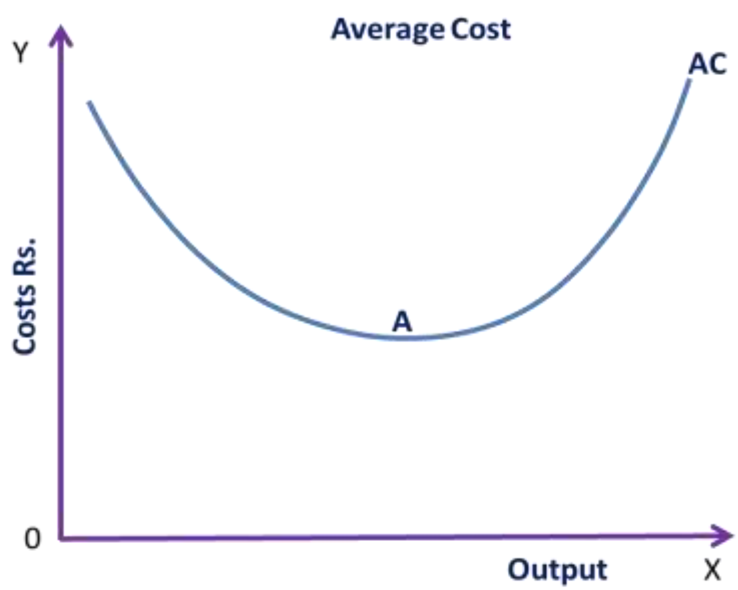

6.3.1.3 सीमांत लागत (Marginal Cost)

किसी वस्तु की एक अतिरिक्त इकाई का उत्पादन करने से कुल लागत में जो अंतर आता है उसे सीमांत लागत कहते हैं। इसे निम्नलिखित सूत्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। मान लीजिए 5 वस्तुओं की कुल लागत ₹135 है तथा 6 वस्तुओं की कुल लागत ₹180 है, अतएव छठी वस्तु की सीमांत लागत इस प्रकार निकाली जा सकती है;

$$Marginal\ Cost = ₹180 - ₹135 = ₹45$$

अतः छठी इकाई की सीमांत लागत ₹45 होगी। यह ध्यान रखना चाहिए कि क्योंकि स्थिर लागत में उत्पादन में होने वाले परिवर्तन के साथ परिवर्तन नहीं होता इसीलिए $\frac{\Delta TFC}{\Delta Q} = 0$ हमेशा शून्य के बराबर होती है। इसीलिए फर्म की सीमांत लागत पर उसकी स्थिर लागत का प्रभाव नहीं पड़ता। सीमांत लागत पर कुल परिवर्तनशील लागत TVC का प्रभाव पड़ता है। इसका अनुमान कुल परिवर्तनशील लागत में होने वाले परिवर्तन ΔTVC को उत्पादन की मात्रा में होने वाले परिवर्तन ΔQ से भाग देकर लगाया जा सकता है। सीमांत लागत की धारणा की व्याख्या निम्नलिखित तालिका 6.7 व रेखा चित्र 6.7 की सहायता से की जा सकती है। तालिका से पता लगता है कि पहली इकाई का उत्पादन करने से कुल लागत में ₹20 की वृद्धि होती है अतः पहली इकाई की सीमांत लागत ₹20 होगी। दूसरी इकाई की सीमांत लागत ₹28 - ₹20 = ₹8 होगी। अतः तीसरी इकाई की सीमांत लागत भी इसी प्रकार निकाली जा सकती है ₹34 - ₹28 = ₹6/- इस तालिका से स्पष्ट होता है कि उत्पादन के बढ़ने से पहले सीमांत लागत कम होती है इसके बाद यह बढ़ने लगती है। सीमांत लागत को रेखा चित्र 6.7 की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है रेखा चित्र में क्षैतिज अक्ष (horizontal axis –OX) पर उत्पादन तथा ऊर्ध्वाधर अक्ष (vertical axis-OY) पर सीमांत लागत प्रकट की गई है। MC वक्र सीमांत लागत वक्र है यह वक्र U के आकार का है इससे सिद्ध होता है कि उत्पादन के शुरू में सीमांत लागत कम हो रही है इसके बाद यह बढ़ रही है।

तालिका 6.7

Output	Total Cost	Marginal Cost
0	₹0	₹20-₹0
1	₹20	₹20-₹0 = ₹20
2	₹28	₹28-₹20 = ₹8
3	₹34	₹34-₹28 = ₹6
4	₹38	₹38-₹34 = ₹4
5	₹42	₹42-₹38 = ₹4
6	₹48	₹48-₹42 = ₹6
7	₹56	₹56-₹48 = ₹8
8	₹72	₹72-₹56 = ₹16

चित्र 6.7

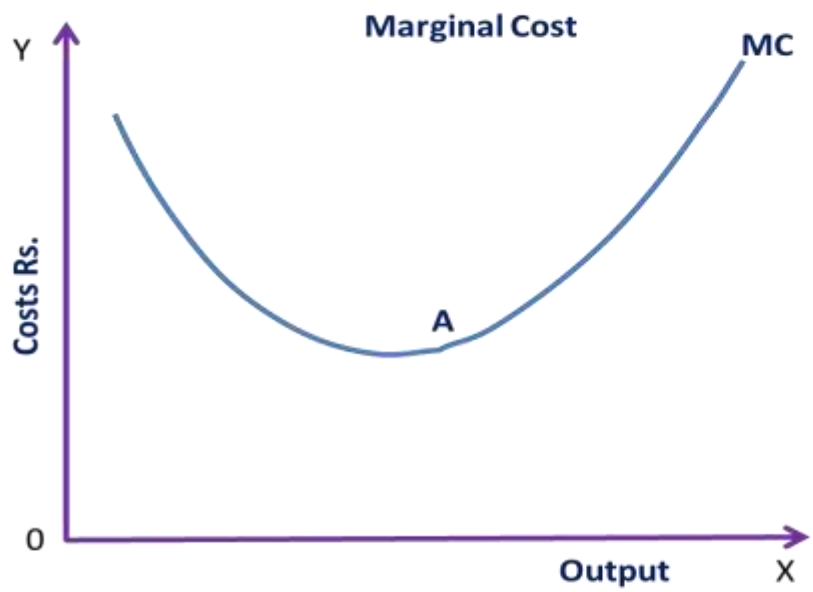

6.3.1.4 अल्पकाल में विभिन्न लागत वक्रों में संबंध (Relationship between Different Cost Curves in the Short Run)

अल्पकालीन लागतो जैसे बंधी लागत TFC, परिवर्तनशील लागत TVC, औसत बंधी लागत AFC, औसत परिवर्तनशील लागत AVC, औसत लागत AC तथा सीमांत लागत MC का एक साथ अध्ययन निम्नलिखित रेखा चित्र की सहायता से किया जा सकता है;

1. AFC औसत बंधी लागत वक्र है यह ऊपर से नीचे की ओर झुकी हुई है इसे ज्ञात होता है कि जैसे-जैसे उत्पादन बढ़ता जाता है AFC कम होती जाती है। आरंभ में यह तेजी से गिरती है इसके बाद इस में होने वाली कमी की दर बहुत धीमी होती जाती है।
2. AVC औसत परिवर्तनशील लागत वक्र है। यह बिंदु A तक नीचे की ओर गिर रही है। बिंदु A इसका न्यूनतम बिंदु है। बिंदु A के बाद यह वक्र ऊपर की ओर उठ रही है। यह U आकार की है।
3. AC औसत लागत वक्र है। यह भी U आकार की है। औसत परिवर्तनशील लागत वक्र AVC का न्यूनतम बिंदु A औसत लागत वक्र AC के निम्नतम बिंदु B से पहले आता है। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि औसत लागत तथा औसत परिवर्तनशील लागतों का अंतर धीरे-धीरे कम होता जाता है इसका कारण यह है कि यह अंतर औसत बंधी लागत के बराबर होता है औसत बंधी लागत जैसे-जैसे कम होती जाती है वैसे-वैसे इनका अंतर भी कम होता जाता है
4. सीमान्त लागत MC वक्र भी U आकार की होती है यह वक्र औसत परिवर्तनशील लागत AVC वक्र तथा औसत लागत AC वक्र को उनके न्यूनतम बिंदु पर काटती है

चित्र 6.8

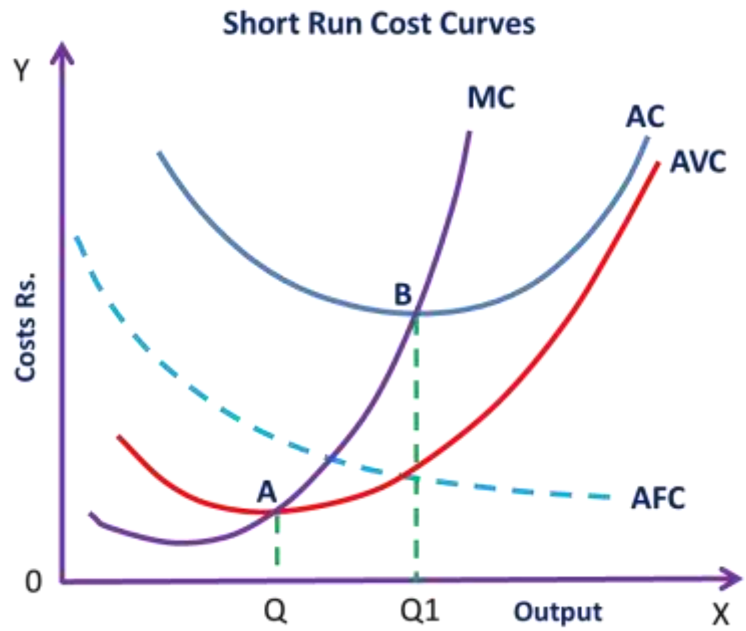

6.3.2 दीर्घकाल में लागतें (Long Run Costs)

दीर्घकाल समय कि वह अवधि है जिसमें सभी साधन परिवर्तनशील होते हैं। फर्म के पास सभी साधनों का आवश्यकता अनुसार प्रयोग करके न्यूनतम लागत पर उत्पादन करने के लिए पर्याप्त समय होता है। अन्य शब्दों में दीर्घकाल का एक और पहलू यह है कि इस अवधि में फर्म न्यूनतम लागत पर उत्पादन करने की योजना बना सकती है। दीर्घकाल में फर्म भविष्य की योजना बना सकती है। तथा अल्पकाल के विभिन्न उत्पादन विधियों में से यह चुनाव कर सकती है कि दीर्घकाल में कौन सी उत्पादन विधि अपनाएगी। एक प्रकार से दीर्घकाल में सभी अल्पकालीन उत्पादन विद्या उपलब्ध होती है जिनके जिनमें से फर्म चुनाव कर सकती है। संक्षेप में प्रत्येक फर्म उत्पादन की अल्पकालीन स्थिति में कार्य करती है परंतु वह उत्पादन संबंधी योजनाएं दीर्घकाल के लिए बनाती है। अतः एक फर्म की उत्पादन संबंधी योजनाओं का ज्ञान प्राप्त करने के लिए दीर्घकालीन लागतों का अध्ययन करना आवश्यक हो जाता है। अल्पकाल की तरह दीर्घकाल में भी लागत की तीन धारणाएं है **(1). दीर्घकालीन कुल लागत, (2). दीर्घकालीन औसत लागत, (3). दीर्घकालीन सीमांत लागत**

6.3.2.1 दीर्घकालीन कुल लागत (Long Run Total Cost)

अल्पकाल में हम तीन तरह की कुल लागत में अंतर कर सकते हैं **कुल स्थिर लागत, कुल परिवर्तनशील लागत** तथा **अल्पकालीन कुल लागत**। परंतु दीर्घकाल में एक ही प्रकार की कुल लागत होती है। दीर्घकालीन कुल लागत वह न्यूनतम लागत है जिस पर प्रत्येक स्तर का उत्पादन किया जा सकता है। दीर्घकाल में एक फर्म वस्तुओं की एक निश्चित मात्रा का न्यूनतम लागत पर उत्पादन कर सकती है। इसका कारण यह है कि फर्म के पास पर्याप्त समय होता है जिसमें वह (i) आदर्श आकार के प्लांट का चुनाव कर सकती है (ii) न्यूनतम लागत साधन अनुपात का चुनाव कर सकती है। इसका अभिप्राय यह है कि दीर्घकालीन कुल लागत सदैव अल्पकालीन कुल लागत से कम होगी या उसके बराबर होगी। परंतु दीर्घकालीन लागत अल्पकालीन लागत से कभी भी अधिक नहीं होगी। इस तथ्य को हम निम्नलिखित सूत्र से स्पष्ट कर सकते हैं;

$$LTC \leq STC$$

इसे पढ़ा जाएगा दीर्घकालीन कुल लागत LTC, अल्पकालीन कुल लागत STC से कम या इसके बराबर होती है। दीर्घकालीन कुल लागत वक्र उत्पादन की विभिन्न मात्राओं पर न्यूनतम लागतो को प्रकट करती है। अतः यह वह वक्र है जो अल्पकालीन कुल लागत वक्र के किसी एक बिंदु पर उसकी स्पर्श रेखा है। इसे निम्नलिखित रेखा चित्र 6.9 द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। रेखा चित्र में STC_1 तथा STC_2 दो विभिन्न आकार के प्लांट की अल्पकालीन कुल लागत वक्र है। दीर्घकालीन कुल लागत LTC वक्र विभिन्न अल्पकालीन लागत वक्रों के न्यूनतम बिंदुओं को मिलाकर खींची जाती है। उत्पादन की एक निश्चित मात्रा की दीर्घकालीन लागत न्यूनतम लागत है जिसका चुनाव सभी उपलब्ध प्लांटों में से किया जाता है। दीर्घकालीन कुल लागत वक्र अल्पकालीन कुल लागत वक्र की स्पर्श रेखा होती है। इसीलिए LTC वक्र STC वक्रों को ढक लेती है अर्थात Envelope कर लेती है। चित्र में दीर्घकालीन कुल लागत LTC वक्र प्रकट की गई है। यह वक्र उल्टे S (Inverse S) के आकार की होती है। इस वक्र की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित है;

1. दीर्घकालीन कुल लागत वक्र मूल बिंदु O से शुरू हो रही है जबकि अल्पकालीन कुल लागत वक्र जैसा की चित्र में दिखाया गया है कि OY-अक्ष के किसी भी बिंदु से शुरू होती है। इसका मतलब यह हुआ कि दीर्घकाल में सभी लागतो के परिवर्तनशील होने के कारण जब कुल उत्पादन की मात्रा शून्य होती है तो कुल लागत भी शून्य होती है। जबकि अल्पकालीन कुल लागत कभी भी सुने नहीं होती।
2. दीर्घकालीन कुल लागत वक्र का ढलान धनात्मक होता है इसका अभिप्राय यह है कि उत्पादन की अधिक मात्रा की लागत भी अधिक होती है।
3. दीर्घकालीन कुल लागत वक्र LTC पहले घटती दर पर इसके बाद समान दर पर तथा अंत में बढ़ती दर पर बढ़ रही है।

चित्र 6.9

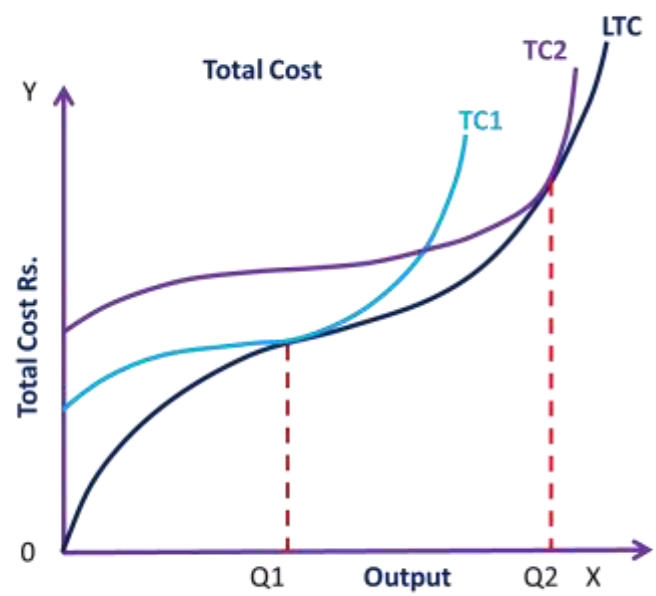

चित्र 6.10

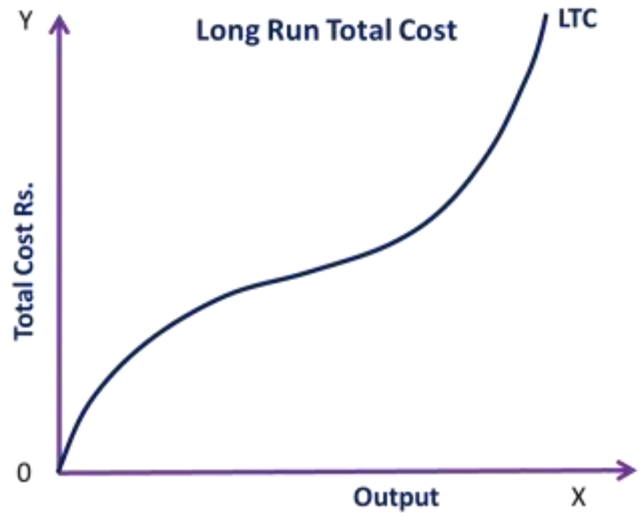

6.3.2.2 दीर्घकालीन औसत लागत वक्र या लिफाफा वक्र (Long Run Average Cost Curve or Envelope Curve)

दीर्घकालीन औसत लागत, दीर्घकाल में किसी वस्तु की विभिन्न मात्राओं को उत्पन्न करने की प्रति इकाई न्यूनतम संभव लागत होती है। इसका अनुमान दीर्घकालीन कुल उत्पादन लागत को उत्पादन की मात्रा से भाग देकर लगाया जाता है। यह न्यूनतम औसत लागत है जो उस समय प्राप्त होती है जब सभी साधन परिवर्तनशील होते हैं अर्थात जब किसी भी आकार के प्लांट का निर्माण किया जा सकता है। दीर्घकाल में प्रत्येक फर्म विभिन्न आकार के प्लांटों का प्रयोग कर सकती है। एक निश्चित उत्पादन की मात्रा के लिए एक विशेष प्रकार का प्लांट उपयुक्त रहता है क्योंकि उस प्लांट की सहायता से उत्पादन करने से औसत लागत न्यूनतम होती है। दीर्घकाल में एक उत्पादक उस प्लांट से उत्पादन करेगा जिससे औसत लागत न्यूनतम हो जाए। उत्पादन की मांग में परिवर्तन होने के साथ-साथ वह प्लांट के आकार में भी परिवर्तन करता जाएगा। प्रत्येक प्लांट की एक अल्पकालीन औसत लागत वक्र होती है। इसकी सहायता से हम दीर्घकालीन औसत लागत वक्र LAC का अनुमान लगा सकते हैं। मान लीजिए एक फर्म दो प्रकार के प्लांटों का प्रयोग कर सकती है; एक छोटा प्लांट है उसकी अल्पकालीन लागत वक्र SAC1 है, दूसरा बड़ा प्लांट है इसकी अल्पकालीन लागत वक्र SAC2 है। दीर्घकाल में फर्म इन दोनों प्लांटों में से सबसे लाभदायक प्लांट पर निवेश करने की योजना बना सकती है। उत्पादन की विभिन्न मात्राओं पर इन दोनों अल्पकालीन लागत वक्रों की सहायता से यह ज्ञात किया जा सकता है कि उत्पादन की विभिन्न मात्राओं पर कौन से प्लांट के द्वारा उत्पादन करने से औसत लागत न्यूनतम होगी।

चित्र 6.11

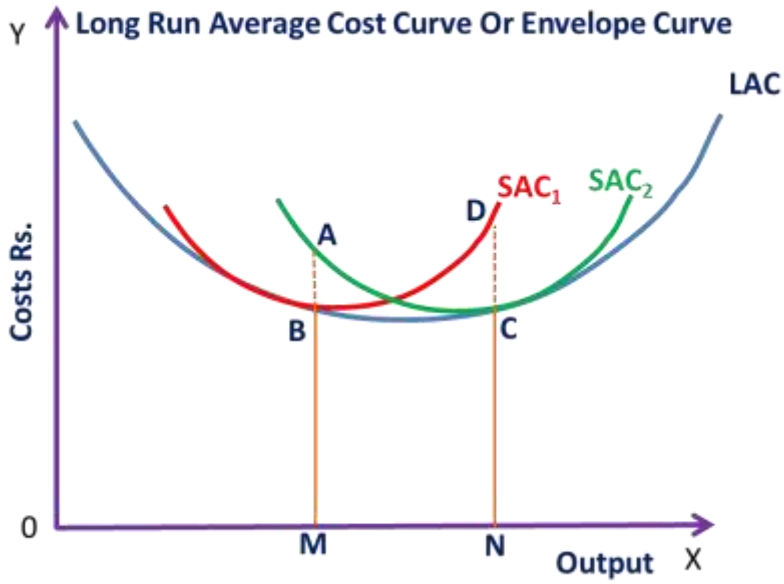

निम्नलिखित रेखा चित्र 6.11 में दो प्रकार के प्लांटों की अल्पकालीन औसत लागत वक्रें प्रकट की गई है SAC1 छोटे प्लांट की तथा SAC2 बड़े प्लांट की औसत लागत वक्र है। यदि फर्म OM मात्रा का उत्पादन करना चाहती है तो वह छोटे प्लांट को चुनेगी। इस प्लांट की सहायता से OM इकाइयों का उत्पादन न्यूनतम औसत लागत BM पर होगा जैसा कि SAC1 वक्र से ज्ञात होता है। इसके विपरीत OM इकाइयों का उत्पादन बढ़े प्लांट द्वारा करने से औसत लागत बढ़कर AM हो जाएगी। परंतु यदि फर्म ने ON इकाइयों का उत्पादन करना है तो फॉर्म बड़े प्लांट का प्रयोग करेगी। इस प्लांट के द्वारा ON इकाइयों का उत्पादन न्यूनतम औसत लागत CN के द्वारा किया जा सकेगा। जबकि छोटे प्लांट द्वारा ON मात्रा का उत्पादन करने पर औसत लागत बढ़कर DN हो जाएगी। यदि हम यह मान ले कि फर्म को विभिन्न आकारों के बहुत सारे प्लांट उपलब्ध है तो उन प्लांटों के प्रत्येक स्तर की न्यूनतम लागत को प्रकट करने वाली वक्र **दीर्घकालीन औसत लागत वक्र LAC** कहलाएगी। अतः वह OM मात्रा का न्यूनतम औसत लागत पर उत्पादन छोटे प्लांट SAC1 द्वारा किया जाएगा तथा ON मात्रा का न्यूनतम औसत लागत पर उत्पादन बड़े प्लांट SAC2 के द्वारा किया जाएगा।

चित्र 6.12

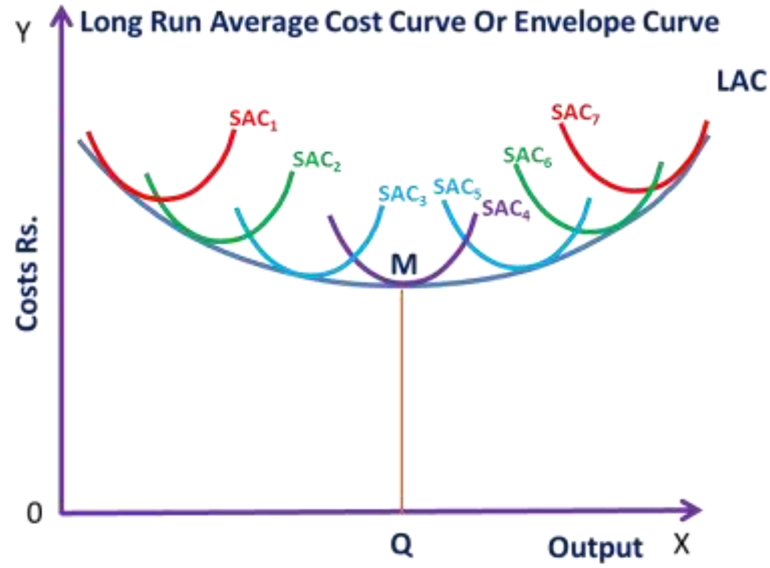

रेखा चित्र 6.12 में दीर्घकालीन औसत लागत LAC को प्रकट किया गया है। दीर्घकालीन औसत लागत वक्र प्रत्येक अल्पकालीन औसत लागत वक्र को किसी ने किसी बिंदु पर अवश्य स्पर्श करती है। दीर्घकालीन औसत लागत के न्यूनतम बिंदु M से बांयी और यह स्पर्शीयबिंदु अल्पकालीन औसत लागतो के नीचे की ओर गिरते हुए हिस्से पर है। इसका कारण यह है कि न्यूनतम बिंदु M तक दीर्घकालीन औसत लागत LAC वक्र का ढलान ऋणात्मक है। इसलिए अल्पकालीन औसत लागत SAC वक्र का ढलान भी ऋणात्मक होगा क्योंकि स्पर्शीय बिंदु पर दोनों वक्रों के ढलान बराबर होते हैं। न्यूनतम बिंदु M से ऊपर स्पर्शीय बिंदु औसत लागत वक्रों के ऊपर की ओर उठते हुए हिस्सों पर होगे। बिंदु M के बाद दीर्घकालीन औसत लागत वक्र ऊपर की और उठ रही है। बिंदु M पर दीर्घकालीन न्यूनतम औसत लागत तथा अल्पकालीन न्यूनतम औसत लागत एक दूसरे के बराबर होती है। **अतः यह ध्यान रखना चाहिए कि प्रत्येक अल्पकालीन औसत लागत वक्र का न्यूनतम बिंदु दीर्घकालीन औसत लागत वक्र का स्पर्शीय बिंदु होना आवश्यक नहीं है। एक अल्पकालीन औसत लागत वक्र का न्यूनतम बिंदु दीर्घकालीन औसत लागत वक्र का स्पर्शीयबिंदु केवल उस स्थिति में होगा जब दीर्घकालीन औसत लागत भी न्यूनतम होती है। अतः केवल M बिंदु पर ही अल्पकालीन प्लांट का आदर्श उपयोग होता है।**

दीर्घकालीन औसत लागत वक्र को निम्नलिखित नामों से भी पुकारा जाता है

1. **लिफाफा वक्र (Envelope Curve):** इस वक्र को लिफाफा वक्र भी कहा जाता है क्योंकि यह सब अल्पकालीन औसत लागत रेखाओं को ढक लेती है अर्थात envelope कर लेती है। इसका अर्थ यह हुआ कि दीर्घकाल में औसत लागत अल्पकालीन औसत लागत से अधिक नहीं हो सकती। क्योंकि दीर्घकाल में अविभाज्य साधनों (Indivisible Factors)की पूर्ण क्षमता का प्रयोग किया जा सकता है। इसीलिए दीर्घकालीन औसत लागत वक्र SAC वक्रों को घेरे रहेगी। वह उन्हें काटकर ऊपर नहीं चढ़ेगी।
2. **योजना वक्र (Planning Curve):** दीर्घकालीन औसत लागत वक्र को योजना वक्र भी कहते हैं। इस वक्र की सहायता से फॉर्म यह योजना बना सकती है कि वह उत्पादन की विभिन्न मात्राओं के लिए कौन से प्लांट का प्रयोग करें जिससे उत्पादन न्यूनतम लागत पर किया जा सके। ए. कौत्सायांनिस के अनुसार दीर्घकालीन औसत लागत वक्र एक योजना वक्र है क्योंकि यह भविष्य में उत्पादन के विस्तार की योजना के संबंध में निर्णय लेने के लिए एक उद्यमी का मार्गदर्शक है।

6.3.2.2.1 दीर्घकालीन औसत लागत वक्र U आकार की क्यों होती है?

दीर्घकालीन औसत लागत वक्र अंग्रेजी भाषा के U शब्द की तरह होती है। इसका अभिप्राय यह हुआ कि जब कोई फर्म उत्पादन शुरु करती है तो LAC ऊपर से नीचे की ओर गिर रही होती है। इस अवस्था में उत्पादन की मात्रा बढ़ने से LAC कम हो जाती है। इसके पश्चात LAC स्थिर रहती है। उत्पादन की एक निश्चित मात्रा के बाद LAC बढ़ना शुरू कर देती है। दीर्घकालीन औसत लागत वक्र भी उत्पादन के पैमाने की बचतों तथा हानियों के कारण U आकार की होती है।

1. **पैमाने की बचते:** एक फर्म की LAC वक्र के नीचे गिरते हुए भाग का मुख्य कारण उत्पादन में वृद्धि होने के फलस्वरूप प्राप्त होने वाले पैमाने की बचते हैं। यह बचते निम्नलिखित कारणों से उत्पन्न होती है
   - **(i)** **श्रम विभाजन तथा श्रम का विशिष्टकरण:** प्रोफेसर लेफ़्टविच के अनुसार एक बड़े प्लांट से अधिक संख्या में काम करने वाले श्रमिकों को विशिष्टकरण करने के लिए अपेक्षाकृत अधिक अवसर होते हैं। उत्पादन का पैमाना बड़ा होने के कारण काम को कई छोटे-छोटे भागों में बांटा जा सकता है। काम के प्रत्येक भाग को करने में एक श्रमिक विशिष्टकरण प्राप्त कर सकता है। इसके कारण श्रमिक उस विशेष कार्य में निपुणता प्राप्त कर लेता है। जिससे कार्य कुशलता में वृद्धि होती है। इसके अतिरिक्त एक विशेष काम में विशिष्ट करण करने से समय तथा पूंजी की बचत होती है। श्रम विभाजन के कारण नए अविष्कारों के अवसर भी बढ़ जाते हैं। इसके फलस्वरूप प्रति इकाई उत्पादन लागत कम हो जाती है प्रति। उत्पादन लागत कम हो जाती है।
   - **(ii)** **तकनीकी बचते**: दीर्घकाल में उत्पादन का पैमाना बढ़ने के फलस्वरूप कई प्रकार की तकनीकी बचते प्राप्त होती है जैसे स्वचालित मशीनों का अधिक प्रयोग, उन्नत तकनीक द्वारा उत्पादन लागत को कम किया जा सकता है। इसलिए तकनीकी बच्चों के कारण औसत लागत कम होती जाती है।
   - **(iii)** **अविभाज्यताओं की बचते और अविभाजन की बचते:** उत्पादन के साधनों की अविभाज्यताओं के फलस्वरूप भी उत्पादन में वृद्धि करने पर औसत लागत कम होने लगती है। उत्पादन के कई साधनों की एक निश्चित मात्रा का प्रयोग करना आवश्यक होता है चाहे उत्पादन कम हो या अधिक हो। उदाहरण के लिए एक बड़ी फर्म एक उत्पादन मैनेजर का उसकी पूर्ण क्षमता तक प्रयोग कर सकती है। परंतु एक छोटी फर्म उत्पादन मैनेजर की अक्षमता के दसवें भाग का भी प्रयोग नहीं कर सकती। अतः उत्पादन की मात्रा जैसे-जैसे बढ़ती है साधनों का उनकी पूर्ण क्षमता तक प्रयोग होता जाता है तथा औसत लागत कम होती जाती है।
2. **पैमाने की हानियां:** दीर्घकालीन औसत लागत के ऊपर की और उठते हुए भाग का मुख्य कारण उत्पादन में वृद्धि होने के कारण पैमाने की होने वाली हानियां है।एक फर्म का कुशल प्रबंध करने तथा समन्वय करने में प्रबंध की कार्यकुशलता की अपनी सीमाएं होती है। यह सीमाएं पैमाने की हानियां कहलाती है। एक फर्म के उत्पादन के पैमाने में जैसे-जैसे वृद्धि की जाती है प्रबंधक कार्यों के विभाजन तथा विशिष्ट करण के जरिए अधिक कार्यकुशल हो जाता है। परंतु एक सीमा के बाद फर्म का प्रबंध करने से संबंधित कठिनाई बढ़ने लगती है। मुख्य प्रबंधक का व्यवसाय के दैनिक कार्यों से संपर्क धीरे-धीरे दूर हो जाता है। इसके फलस्वरूप उत्पादन के विभिन्न विभागों के संचालन की कार्यकुशलता घटने लगती है। निर्णय करने की जिम्मेदारी अन्य व्यक्तियों को सोपनी पड़ती है। कागजी कार्रवाई, यात्रा व टेलीफोन आदि का खर्च बढ़ जाता है। कभी-कभी विभिन्न निर्णय लेने वाले कर्मचारियों की योजनाओं में परस्पर समन्वय नहीं हो पाता। इसके फलस्वरूप उत्पादन में कमी आ जाती है तथा औसत लागत बढ़ने लगती है।

6.3.2.2.2 दीर्घकालीन तथा अल्पकालीन औसत लागत वक्रओं में संबंध

दीर्घकालीन तथा अल्पकालीन औसत लागत वक्रों का संबंध रेखा चित्र नंबर 6.13 से स्पष्ट हो जाता है। इस चित्र से प्रकट होता है कि

चित्र 6.13

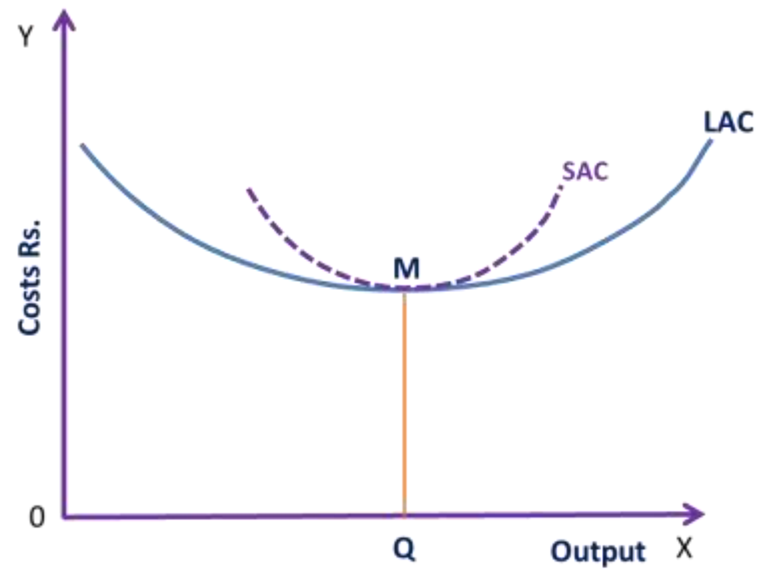

(1). SAC वक्र केवल एक ही प्लांट की लागतो को प्रकट करती है जबकि LAC वक्र भिन्न-भिन्न प्लांटों की औसत लागत को प्रकट करती है।

(2). LAC वक्र भी SAC वक्र की तरह U आकार की होती है। परंतु यह अपेक्षाकृत अधिक चपटी होती है। इसका अर्थ यह हुआ कि दीर्घकाल में लागतो में वृद्धि या कमी की दर अल्पकाल में लागतो में वृद्धि या कमी की दर की अपेक्षा कम होती है। इसका मुख्य कारण यह है कि LAC वक्र उत्पादन की विभिन्न मात्राओं की न्यूनतम औसत लागत को प्रकट करती है। इसलिए इसमें अधिक उतार-चढ़ाव की संभावना नहीं होती। इसके विपरीत अल्पकालीन औसत लागत वक्र उत्पादन की विभिन्न मात्राओं को प्रकट करती है। इन्हें एक फर्म बंदी लागत तथा घटती-बढ़ती लागत के जोड़ द्वारा उत्पन्न करती है। उत्पादन की मात्रा बढ़ने पर एक सीमा तक औसत परिवर्तनशील लागत AVC तथा औसत बंधी लागत AFC तेजी से गिरती है। न्यूनतम बिंदु के बाद AFC बहुत धीरे-धीरे घटती है। परंतु AVC तेजी से बढ़ने लगती है। इसीलिए यह वक्र अधिक ढलान वाली है।

(3). LAC एक निश्चित उत्पादन मात्रा पर SAC से अधिक नहीं हो सकती। इसका अभिप्राय यह है कि LAC वक्र SAC वक्र को स्पर्श करती है। SAC वक्र को काटती नहीं है।

(4). यह ध्यान रखना चाहिए कि LAC केवल एक SAC वक्र को छोड़कर सभी SAC वक्रों को उनके न्यूनतम बिंदु पर स्पर्श नहीं करती। यह केवल उसी SAC वक्र को न्यूनतम बिंदु पर स्पर्श करेगी जो कि LAC वक्र के न्यूनतम बिंदु को छू रही है। उत्पादन का यह स्तर आदर्श उत्पादन को प्रकट करता है।

6.3.2.3 दीर्घकालीन सीमांत लागत

दीर्घकाल में किसी वस्तु की एक अधिक या कम इकाई उत्पन्न करने से कुल लागत में जो अंतर आता है उसे दीर्घकालीन सीमांत लागत कहा जाता है। दीर्घकालीन सीमांत लागत उत्पादन की एक अधिक इकाई का प्रयोग करने से कुल लागत में होने वाली वृद्धि है जब सभी आगत क्रियात्मक रूप से समायोजित होते हैं। दीर्घकालीन

सीमांत लागत वक्र को चित्र 6.14 द्वारा स्पष्ट किया गया है। LMC दीर्घकालीन सीमांत लागत वक्र है। यह पहले गिरती हुई न्यूनतम हो जाती है तथा इसके बाद ऊपर की ओर उठने लगती है।

चित्र 6.14

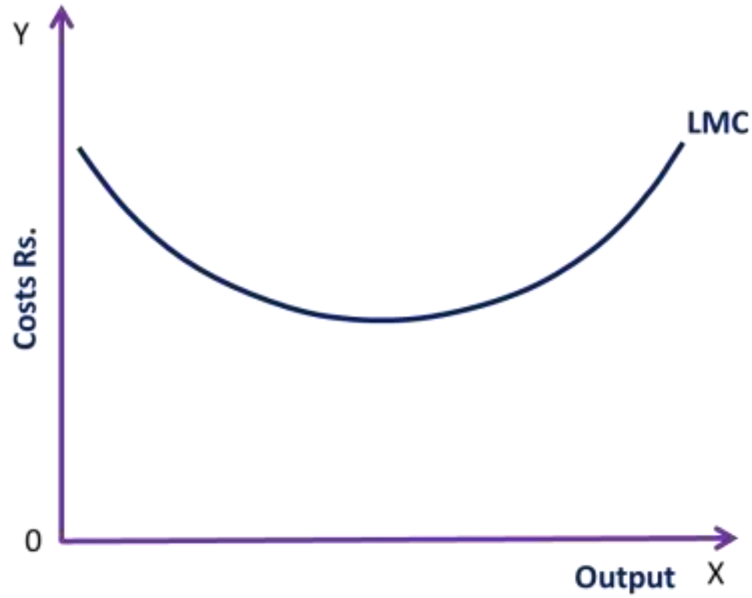

6.3.2.3.1 दीर्घकालीन सीमांत लागत तथा अल्पकालीन सीमांत लागत में संबंध

एक अल्पकालीन सीमांत लागत वक्र से यह ज्ञात होता है कि परिवर्तनशील साधनों में परिवर्तन से किसी वस्तु की एक अधिक या कम मात्रा का उत्पादन करने के फलस्वरुप कुल लागत पर क्या प्रभाव पड़ता है। इसके विपरीत एक दीर्घकालीन सीमांत लागत वक्र से यह ज्ञात होता है कि सभी साधनों में परिवर्तन होने से किसी वस्तु की एक अधिक या कम मात्रा का उत्पादन करने के फलस्वरुप कुल लागत पर क्या प्रभाव पड़ता है। हम यह जानते हैं कि दीर्घकाल में सभी साधन परिवर्तनशील होते हैं। दीर्घकालीन सीमांत लागत वक्र को अल्पकालीन सीमांत लागत वक्रों से ज्ञात किया जाता है। परंतु यह उनको घेरती नहीं है। उत्पादन के उच्च स्तर पर दीर्घकालीन सीमांत लागत LMC अल्पकालीन सीमांत लागत SMC के बराबर अवश्य होगी जिस पर SMC से संबंधित SAC दीर्घकालीन औसत लागत वक्र LAC की स्पर्श रेखा होती है। जब फर्म वस्तु की दी हुई मात्रा के उत्पादन के लिए एक प्लांट का एक उचित पैमाना बना लेती है तो उत्पादन की इस मात्रा पर अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन सीमांत लागत वक्र समान LMC=SMC हो जाती है। जैसा कि रेखा चित्र नंबर 6.14 से ज्ञात होता है कि उत्पादन OQ पर SMC=LMC है। यदि उत्पादन इष्टतम स्तर OQसे कम होगा तो SMC कम होगी तथा LMC उसकी अपेक्षा अधिक होगी। इसके विपरीत यदि उत्पादन इष्टतम उत्पादन स्तर OQ उससे अधिक होगा तो SMC अधिक होगी तथा LMC उसकी अपेक्षा कम होगी। दीर्घकालीन सीमांत लागत LMC अल्पकालीन सीमांत लागत SMC की तुलना में अधिक चपटी होती है।

चित्र 6.14

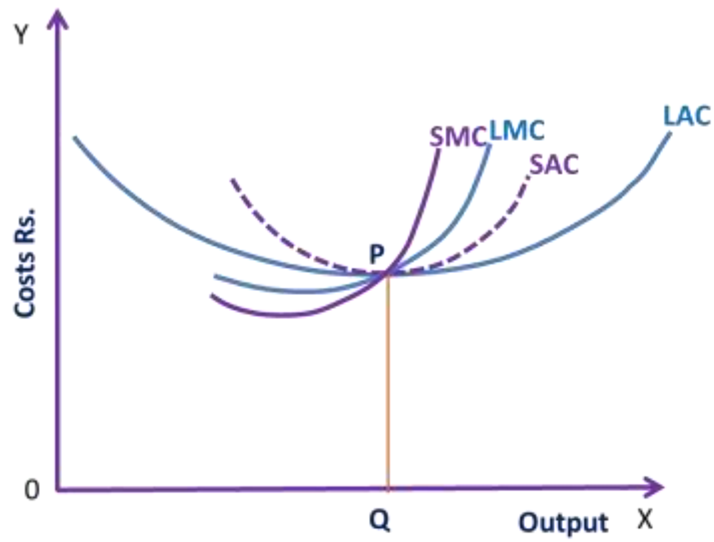

6.4 आगम विश्लेषण Revenue Analysis

हम जानते हैं कि एक फर्म का मुख्य उद्देश्य अपने लाभ को अधिकतम करना होता है। **लाभ** से हमारा अभिप्राय **आगम** तथा **लागत** के बीच के अंतर से है। यह अंतर जितना अधिक होगा लाभ भी उतना अधिक होगा। इसीलिए हमारे लिए यह आवश्यक हो जाता है कि हम लागत विश्लेषण के साथ-साथ आगम का भी विश्लेषण करें।

6.4.1 आगम का अर्थ (Meaning of Revenue)

यह एक फर्म द्वारा अपने उत्पादों या वस्तुओं को बेचकर प्राप्त धन को संदर्भित करता है। दूली के अनुसार "किसी उत्पाद की बिक्री से किसी फर्म का राजस्व उसकी बिक्री प्राप्तियां या धन प्राप्ति होती है।"

मान लीजिए, एक फर्म एक दिन में 500 यूनिट चॉकलेट का उत्पादन करती है और इन यूनिटों को बेचकर, फर्म को Rs.2500 मिलते हैं। इस प्रकार, 2500 रुपये की राशि को अर्थशास्त्र में राजस्व के रूप में माना जाता है जो एक फर्म को अपने उत्पादों को बेचकर प्राप्त होता है।

यहां, यह समझना बहुत महत्वपूर्ण है कि यह शब्द **लाभ** (Profit) से अलग है। चूंकि यह उत्पाद बेचने से प्राप्त धन है जबकि लाभ, राजस्व और लागत के बीच के अंतर को दर्शाता है। इसे इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है:

Profit = Revenue – Costs

इष्टतम निर्णय लेने के सीमांत विश्लेषण में कुल, औसत और सीमांत अवधारणाओं के बीच संबंध अत्यधिक उपयोगी है। कुल, औसत और सीमांत के बीच का संबंध सभी अवधारणाओं जैसे कि राजस्व, उत्पादन की लागत, लाभ, आदि के लिए उपयोगी है। हम यहां कुल, औसत और सीमांत राजस्व/आगम अवधारणाओं के बीच संबंध की व्याख्या की करेंगे परंतु उससे पहले हम इन अवधारणाओं का मतलब समझेंगे।

6.4.1.1 कुल आगम (Total Revenue):

एक फर्म अपने उत्पादन की निश्चित मात्रा बेचकर जो धनराशि प्राप्त करती है, उसे कुल आगम कहते हैं। उदाहरण के लिए, यदि फर्म तीन इकाइयाँ बेचकर 24 रुपये प्राप्त करती हैं तो कुल आगम 24 रुपये होगी। वस्तु की बेची गयी इकाइयों को मूल्य से गुणा करने पर कुल आगम प्राप्त होती है –

TR=Q.P

TR- कुल आगम, P- वस्तु की कीमत, Q-वस्तु की बेची गई मात्रा

6.4.1.2 सीमांत आगम (Marginal Revenue):

सीमांत आगम से अभिप्राय किसी वस्तु की एक अधिक या कम इकाई बेचने से कुल आगम में होने वाले परिवर्तन से है "सीमांत राजस्व कुल राजस्व में परिवर्तन है जो उत्पादन की एक या अधिक इकाई की बिक्री के परिणामस्वरूप होता है।"

मान लीजिए कि एक फर्म को 50 यूनिट चॉकलेट बेचकर कुल आगम TR के रूप में 500 रुपये मिलते हैं और यह 51 यूनिट चॉकलेट बेचकर 510 रुपये हो जाता है। फिर, अतिरिक्त आय की गणना इस प्रकार की जा सकती है:

$$MR = TR_{51} - TR_{50}$$

$$MR = ₹510 - ₹500 = ₹10$$

सीमांत आगम का अनुमान निम्नलिखित सूत्र के द्वारा भी लगाया जा सकता है;

$$MR = \frac{\Delta TR}{\Delta Q}$$

ΔQ=उत्पादन की बेची गई मात्रा में परिवर्तन, ΔTR=कुल आगम में परिवर्तन, MR=सीमांत आगम, TR_{51}=51 इकाइयों से प्राप्त कुल आगम, TR_{50} =50 इकाइयों से प्राप्त कुल आगम।

$\Delta Q = Q_{51} - Q_{50} = Q_1$

$\Delta Q = 51 - 50 = 1$

$$MR = \frac{\Delta TR}{\Delta Q} = \frac{₹10}{1} = ₹10$$

6.4.1.3 औसत आगम (Average Revenue):

"औसत आगम एक वस्तु की बिक्री से प्राप्त प्रति-इकाई आगम है।" औसत आगम का अनुमान कुल आगम को वस्तु की बेची गई कुल मात्रा से भाग देकर लगाया जाता है। मान लीजिए कि एक फर्म को एक दिन में 50 यूनिट चॉकलेट बेचकर आमदनी के रूप में 500 रुपये मिलते हैं। फिर;

$$AR = \frac{TR}{Q} = \frac{₹500}{50} = ₹10$$

AR= औसत आगम, TR= कुल आगम, Q= चॉकलेट की बेची गई कुल मात्रा

6.4.2 कुल आगम, औसत आगम और सीमांत आगम के बीच संबंध (Relationship between Total Revenue, Average Revenue and Marginal Revenue)

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि सीमांत आगम किसी वस्तु की एक अतिरिक्त इकाई की बिक्री से कुल आगम में होने वाला परिवर्तन है। इस प्रकार जब सीमांत आगम धनात्मक होता है तो कुल आगम बढ़ता है। और जब सीमांत आगम ऋणआत्मक होता है तो कुल आगम घटता है। और जब सीमांत आगम शून्य होता है तो कुल आगम अधिकतम स्तर पर होता है।इसे निम्नलिखित तालिका 6.8 की सहायता से समझा जा सकता है।

तालिका के पहले कॉलम में उत्पादित की गई अथवा बेची गई वस्तु की इकाइयां प्रकट की गई है। कॉलम 2 में कुल आगम कुल फलन दर्शाया गया है। तीसरे कॉलम में कुल आगम दर्शाया गया है। चौथे कॉलम में सीमांत आगम दर्शाया गया है। तथा पांचवें कॉलम में औसत आगम दर्शाया गया है। इस तालिका से हमें पता है लगता है कि जब वस्तु की बेची गई मात्रा या उत्पादित की गई मात्रा शून्य है तो कुल आगम भी शून्य है तथा सीमांत एवं औसत आगम भी शून्य हैं। जब वस्तु की एक इकाई बेची जाती है तो कुल आगम, आगम फलन के अनुसार ₹45 हो जाता है। जब दो इकाइयां बेची जाती है तो कुल आगम ₹80 हो जाता है। इसी प्रकार जैसे-जैसे अधिक इकाइयां बेची जाती है कुल आगम बढ़ता जाता है, परंतु यह केवल पांचवीं इकाई तक बढ़ता है उसके पश्चात कुल आगम घटना शुरू हो जाता है। पांचवीं इकाई पर उलागम ₹125 है तथा छठी इकाई पर कुल आगम ₹120 है और सातवीं इकाई पर उलागम ₹105 है। यदि हम सीमांत आगम की बात करें तो पहली इकाई का सीमांत आगम ₹45 है तथा दूसरी इकाई का सीमांत आगम अर्थात जो केवल दूसरी अतिरिक्त इकाई बेची गई है उस से प्राप्त आगम ₹35 है। इस कॉलम में हमें पता लगता है कि सीमांत आगम लगातार कम होता जाता है। यह पांचवीं इकाई तक धनात्मक रहता है। उसके पश्चात ऋणात्मक होना शुरू हो जाता है। जब तक सीमांत आगम धनात्मक रहता है कुल आगम बढ़ता रहता है। जब सीमांत आगम शून्य हो जाता है तो कुल आगम अधिकतम होता है। और जब सीमांत आगम नकारात्मक अर्थात -5 और -15 हो जाता है तो कुल आगम घटने लगता है। इस तालिका के पाँचवे कॉलम में औसत आगम दर्शाया गया है। औसत आगम का अनुमान कुल आगम को उत्पादन की बेची गई मात्राओं से भाग देकर लगाया जाता है। जब बेची गई मात्रा शून्य है तो कुल आगम भी और औसत आगम भी शून्य हैं। एक इकाई बेचे जाने का औसत आगम ₹45 है। दो इकाइयां बेचने से प्राप्त औसत आगम ₹40 है, क्योंकि ₹80 को जो कि कुल आगम है उत्पादन की दो इकाइयों से भाग देकर औसत आगम ₹40 प्राप्त किया गया है। इसी प्रकार तीन इकाइयों की बिक्री से प्राप्त कुल आगम ₹105 है, इस प्रकार औसत आगम ₹35 होगा। पाँचवे कॉलम से हमें ज्ञात होता है कि औसत आगम लगातार घट रहा है परंतु यह प्रत्येक स्तर पर सीमांत आगम से अधिक है। सीमांत आगम

तालिका 6.8

Output Q	Equation $TR=50Q-5Q^2$	TR	Marginal Revenue $MR=TR_n-TR_{n-1}$	Average Revenue AR=TR/Q
0	$50(0)-5(0)^2$ =	0	0	0
1	$50(1)-5(1)^2$ =	45	45	45
2	$50(2)-5(2)^2$ =	80	35	40
3	$50(3)-5(3)^2$ =	105	25	35
4	$50(4)-5(4)^2$ =	120	15	30
5	$50(5)-5(5)^2$ =	125	5	25
6	$50(6)-5(6)^2$ =	120	-5	20
7	$50(7)-5(7)^2$ =	105	-15	15

चूंकि सीमांत आगम उत्पादन की प्रत्येक क्रमिक इकाइयों द्वारा कुल आगम के अतिरिक्त है, कुल आगम (TR) आउटपुट की सभी पूर्ववर्ती इकाइयों (पिछले एक सहित) के सीमांत आगम को जोड़कर प्राप्त किया जा सकता है।

$$TR = \sum MR$$

चूंकि एक सीमांत आगम उत्पादन में एक इकाई परिवर्तन के परिणामस्वरूप कुल आगम में परिवर्तन का प्रतिनिधित्व करता है, यह इस प्रकार है कि जब सीमांत आगम, औसत आगम से अधिक होता है, तो औसत आगम बढ़ता है (अर्थात ऊंचा MR, AR को ऊपर खींचता है)। जब सीमांत आगम, औसत आगम से कम होता है, तो औसत आगम में गिरावट आती है। और जब सीमांत आगम, औसत आगम के बराबर होता है, तो औसत आगम अपरिवर्तित रहता है।

कुल आगम वक्र, सीमांत आगम वक्र तथा औसत आगम वक्र की चित्रमय प्रस्तुति

सीमांत आगम वक्र, कुल आगम वक्र की ढाल को प्रस्तुत करता है। जैसा कि हमें चित्र 6.15 से पता चलता है कि जब OQ1 मात्रा का सीमांत आगम Q1 m1 है तो बिंदु R पर कुल आगम वक्र की ढाल अधिक तीव्र है (जैसा कि कुल आगम वक्र TR की बिंदु R पर स्पर्शीय रेखा tt' से ज्ञात होता है)। जब बेची गई मात्रा और Q1 से बढ़कर OQ2 हो जाती है तो सीमांत आगम घटकर Q2m2 हो जाता है। और इस प्रकार कुल आगम वक्र का ढाल भी घट जाता है कम हो जाता है जैसा कि हमें बिंदु S से पता चलता है (जैसा कि कुल आगम वक्र TR की बिंदु S पर स्पर्शीय रेखा jj' से ज्ञात होता है)। जब सीमांत आगम OQ3 मात्रा पर शून्य हो जाता है तो कुल आगम कुल आगम अधिकतम होता है तथा इसका ढाल शून्य होता है जैसा कि बिंदु H से पता चलता है (जैसा कि कुल आगम वक्र TR की बिंदु H पर स्पर्शीय रेखा kk' से ज्ञात होता है)। बिंदु H के बाद कुल आगम घटना शुरू हो जाता है तथा OQ3 मात्रा के पश्चात सीमांत आगम ऋणात्मक हो जाता है अर्थात जब सीमांत आगम ऋणात्मक हो जाता है तो कुल आगम घटना शुरू हो जाता है। बिंदु r s t से हमें ज्ञात होता है कि औसत आगम वक्र सदैव सीमांत आगम वक्र से ऊपर रहता है तथा यह भी ऋणात्मक ढलान वाला होता है।

चित्र 6.15

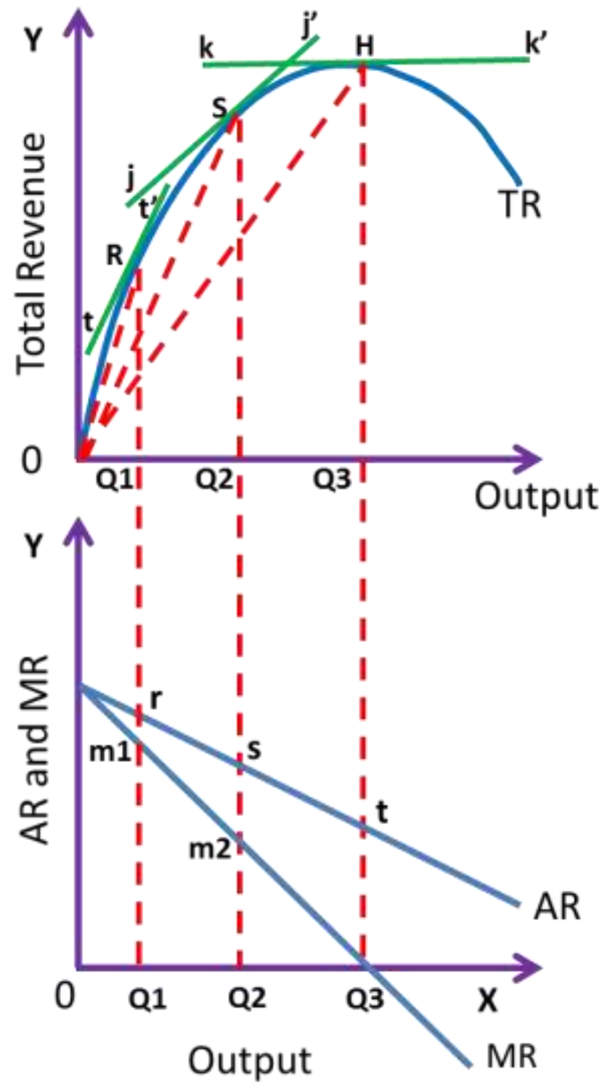

पूर्ण प्रतियोगिता की अवस्था में किसी वस्तु की कीमत उद्योग द्वारा निर्धारित होती है ना की किसी एक विक्रेता अथवा फर्म द्वारा। सारी फर्मों के समूह को उद्योग कहते हैं। पूर्ण प्रतियोगिता बाजार की वह स्थिति है जिसमें बहुत से क्रेता तथा विक्रेता होते हैं। वह एक ही कीमत पर किसी समरूप वस्तु को वस्तु की बिक्री करते हैं। उन्हें उद्योग में प्रवेश करने तथा छोड़ने की पूर्ण स्वतंत्रता होती है। वस्तु की कीमत फर्म द्वारा निर्धारित नहीं होती बल्कि उद्योग द्वारा निर्धारित होती है। यह ध्यान रखना चाहिए कि आम बोलचाल की भाषा में प्रतियोगिता शब्द का प्रयोग जिन अर्थों में किया जाता है अर्थशास्त्र में उनसे अलग अर्थों में इसका प्रयोग किया जाता है। आम बोलचाल की भाषा में प्रतियोगिता शब्द का प्रयोग फर्मों के बीच पाई जाने वाली प्रतिद्वंदिता (Rivalary) के लिए किया जाता है परंतु अर्थशास्त्र में प्रतियोगिता शब्द का प्रयोग बाजार के प्रतियोगी ढांचे के लिए किया जाता है। बाजार के प्रतियोगी ढांचे से अभिप्राय फर्म द्वारा बाजार कीमत को प्रभावित करने की शक्ति से है। एक फर्म की बाजार कीमत को प्रभावित करने की शक्ति जितनी कम होती है बाजार उतना ही अधिक प्रतियोगी होता है। जब फर्मों की बाजार कीमत को प्रभावित करने की शक्ति शून्य होती है तो बाजार ढांचा प्रतियोगी होता है। पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति में फर्मों के

बीच में कोई प्रतिद्वंदिता नहीं होती क्योंकि कोई भी फर्म अपने निर्णय द्वारा बाजार कीमत को प्रभावित नहीं कर सकती। एक उद्योग द्वारा वस्तु की संतुलन कीमत उस बिंदु पर निर्धारित होती है जिस पर उस वस्तु की बाजार मांग तथा उद्योग की पूर्ति बराबर होती है। अन्य शब्दों में संतुलन कीमत उस बिंदु पर निर्धारित हो जाती है जिस बिंदु पर कुल मांग पूर्ति के बराबर हो जाए। इसे हम निम्नलिखित तालिका 6.9 द्वारा समझ सकते हैं तालिका से ज्ञात होता है कि वस्तु X की कीमत ₹5 प्रति दर्जन है तो पूर्ति 50 दर्जन तथा मांग 10 दर्जन है क्योंकि पूर्ति मांग से अधिक है इसलिए X वस्तु के विक्रेताओं में प्रतियोगिता होगी। इसके फलस्वरूप X वस्तु की प्रतियोगी कीमत कम होगी। कीमत कम होने के कारण पूर्ति का संकुचन होगा तथा मांग का विस्तार होगा। जब कीमत कम होकर ₹3 प्रति दर्जन हो जाएगी तो मांग बढ़कर पूर्ति के बराबर हो जाएगी। अतः ₹3 प्रति दर्जन वस्तु X की संतुलन कीमत होगी। यदि कुछ कारणों से कीमत कम होकर ₹2 प्रति दर्जन हो जाती है तो मांग पूर्ति से अधिक हो जाएगी विक्रेताओं में प्रतियोगिता होगी तथा कीमत बढ़कर ₹3 प्रति दर्जन हो जाएगी। इस कीमत पर मांग तथा आपूर्ति में दोबारा संतुलन स्थापित हो जाएगा।

संतुलन बिंदु से ज्ञात होता है कि संतुलन कीमत ₹3 निर्धारित होगी। फर्म को जैसा की चित्र 6.16 में दिखाया गया है कि ₹3 कीमत पर ही अपना उत्पादन बेचना होगा। फर्म द्वारा बेची गई मात्रा अधिक हो या कम कीमत ₹3 ही रहेगी। फर्म वस्तु की प्रचलित कीमत अर्थात ₹3 में न तो वृद्धि कर सकती है और ना ही कमी। क्योंकि कीमत का निर्धारण फर्म द्वारा नहीं बल्कि उद्योग द्वारा किया जाता है। फर्म तो कीमत की स्वीकारक होती है न कि निर्धारक। अतएव फर्म की मांग वक्र क्षितिज अक्ष OX-अक्ष के समानांतर होती है। इससे सिद्ध होता है कि फर्म ₹3 कीमत पर वस्तु की कितनी भी मात्रा बेच सकती है। फर्म की मांग वक्र PP ही उसकी औसत आगम वक्र तथा सीमांत आगम वक्र होती है। पूर्ण प्रतियोगिता में औसत आगम तथा सीमांत आगम बराबर होते हैं AR=MR। पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति में AR = MR, इसलिए AR वक्र तथा MR वक्र एक समान होते हैं और एक दूसरे में विलीन होकर यह OX-अक्ष के समानांतर एक सीधी रेखा बन जाते हैं तथा कुल आगम वक्र (TR Curve) मूल बिंदु O से शुरू होकर एक सकारात्मक ढाल वाली सीधी रेखा बन जाती है। नीचे दी गई तालिका से यह बात स्पष्ट हो जाती है।

चित्र 6.16

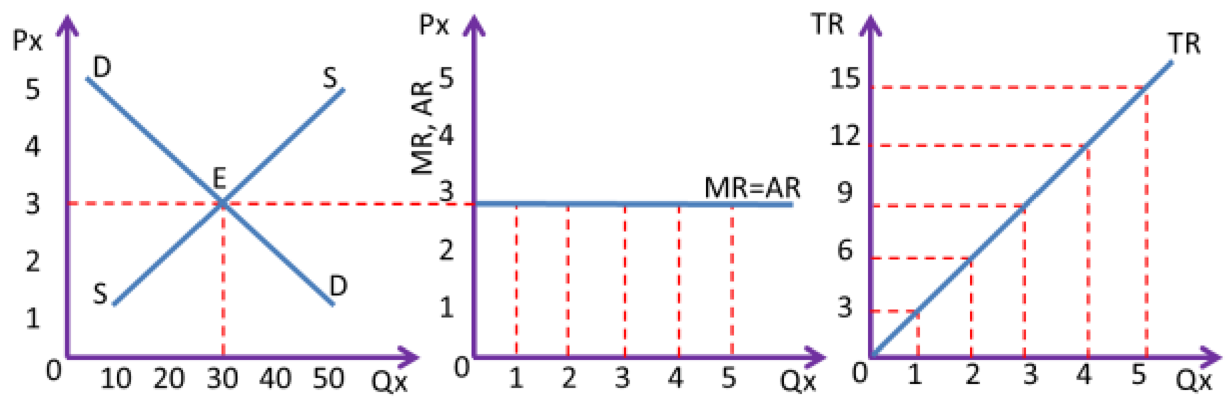

तालिका 6.9

Price P	Quantity Sold Q	TR=P.Q	MR=ΔTR/ΔQ	AR=TR/Q
₹3	1	₹3×1=₹3	₹3	₹3
₹3	2	₹3×2=₹6	₹3	₹3
₹3	3	₹3×3=₹9	₹3	₹3
₹3	4	₹3×4=₹12	₹3	₹3
₹3	5	₹3×5=₹15	₹3	₹3

6.5 समविच्छेद बिंदु विश्लेषण Break Even Point Analysis

समविच्छेद बिंदु को समझने के लिए हमें एक फर्म के संतुलन को समझना होगा। यहां पर हम पूर्ण प्रतियोगिता के अंतर्गत अल्पकाल में एक फर्म के संतुलन के माध्यम से समविच्छेद बिंदु को समझने का प्रयास करेंगे।

6.5.1 सम विच्छेद बिंदु विश्लेषण की मान्यताएं (Assumptions of Break Point Analysis):

(i) सभी लागतों को बंधी लागतो और परिवर्तनशील लागतो में विभाजित किया जा सकता है।
(ii) उत्पादन के विभिन्न स्तरों पर बंधी लागत स्थिर रहेगी।
(iii) परिवर्तनशील लागत में उत्पादन की मात्रा के अनुपात में सीधे रुप से उतार-चढ़ाव होगा।
(iv) बिक्री कीमत स्थिर रहेगी।
(v) उत्पाद मिश्रण अपरिवर्तित रहेगा।
(vi) प्रति श्रमिक उत्पादकता अपरिवर्तित रहती है।
(vii) जितनी इकाइयों का उत्पादन होता है वह सारी की सारी बिक जाती है इसलिए किसी प्रकार के स्टॉक की कोई संभावना नहीं है।

सबसे पहले हमें यह समझना होगा कि एक फर्म के संतुलन का क्या अर्थ होता है। एक फर्म उस समय संतुलन की स्थिति में होती है जब वह अपने वर्तमान उत्पादन की मात्रा से संतुष्ट होती है। उत्पादन में कमी करने की या वृद्धि करने की उसमें कोई प्रवृत्ति नहीं पाई जाती। यह अवस्था उस समय होगी जब या तो फर्म को अधिकतम लाभ प्राप्त होंगे या फर्म को होने वाली हानि न्यूनतम होगी। एक फर्म उस समय संतुलन में होगी जब उत्पादन में कमी करना या वृद्धि करना उसके लिए लाभकारी नहीं होगा। एक फर्म उस समय संतुलन में होगी जब उसके लाभ अधिकतम होंगे।

6.5.2 फर्म के संतुलन की शर्तें

एक फर्म के संतुलन की मुख्य शर्तें इस प्रकार है;

(1). **अधिकतम लाभ**: एक फर्म का लाभ (π) कुल आय/.आगम (TR) तथा कुल लागत (TC) के अंतर के बराबर होता है। इसलिए एक फर्म के संतुलन की शर्त यह है कि लाभ अधिकतम होना चाहिए।

(2). सीमांत लागत तथा सीमांत आगम बराबर होने चाहिए

(3). सीमांत लागत वक्र सीमांत आगम वक्र को नीचे से काटती है

(4). **स्थिर लागतो की न्यूनतम हानि**: अल्पकाल में एक फर्म तभी उत्पादन करेगी जब कुल आगम कुल परिवर्तनशील लागत से कम नहीं होता। अन्य शब्दों में स्थिर लागतो की न्यूनतम हानि फर्म उठा सकती है। संक्षेप में एक फर्म उस समय संतुलन में होगी जब वह न्यूनतम हानि उठा रही होती है। फर्म के संतुलन निर्धारण के उपरोक्त

नियम व शर्तें सभी बाजार स्थितियों अर्थात पूर्ण प्रतियोगिता, एकाधिकार तथा एकाधिकार प्रतियोगिता में लागू होती है। एक फर्म के संतुलन की उपरोक्त शर्तों को दो विधियों द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है;

(i) कुल आय आगम तथा कुल व्यय विधि

(ii). सीमांत आय तथा सीमांत विधि

यहां पर हम समविच्छेद बिंदु को समझने के लिए **कुल आय तथा कुल व्यय** विधि का उपयोग करेंगे।

(i) कुल आय आगम तथा कुल व्यय विधि

अल्पकाल में एक फर्म वस्तु की उस मात्रा का उत्पादन करेगी जिस पर उसके लाभ अधिकतम होंगे। इस स्थिति का वर्णन निम्नलिखित ढंग से किया जा सकता है;

$$\pi = TR - TC$$

एक फर्म संतुलन की स्थिति में उस समय होती है जब उसे अधिकतम कुल लाभ प्राप्त हो रहे हैं। एक फर्म के कुल लाभ का अनुमान कुल आगम (TR) में से कुल लागत (TC) को घटाकर लगाया जा सकता है अतएव एक फर्म उस समय संतुलन में होती है, जब वह किसी वस्तु की उच्च मात्रा का उत्पादन कर रही होती है जिस पर कुल आगम तथा कुल लागत का अंतर अर्थात कुल लाभ अधिकतम होते हैं। इस स्थिति को निम्नलिखित रेखा चित्र की सहायता से समझा जा सकता है

चित्र 6.16

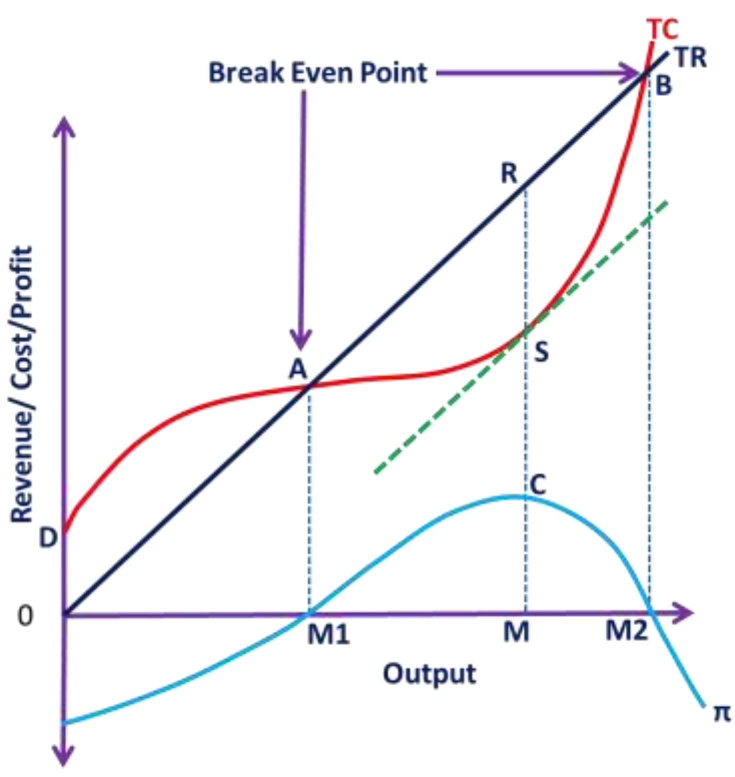

रेखा चित्र में क्षैतिज अक्ष OX-अक्ष पर वस्तु की मात्रा तथा ऊर्ध्वाधर अक्ष OY- अक्ष पर आगम, लागत और लाभ प्रकट किए गए हैं। TR कुल आगम वक्र है यह वक्र एक सीधी रेखा है जो मूल बिंदु O से शुरू हो कर धनात्मक ढाल वाली एक सीधी रेखा है जिससे सिद्ध होता है कि वस्तु की कीमत स्थिर है। यह स्थिति पूर्ण प्रतियोगिता में संभव होती है। TC कुल लागत वक्र है। π वक्र कुल लाभ वक्र है। (1) जब फर्म OM1 से कम उत्पादन करती है तो उसको हानि उठानी पड़ती है क्योंकि OM1 तक TC वक्र TR वक्र से ऊपर है अर्थात कुल लागत कुल आगम से अधिक है। (2) यदि फार्म OM1 मात्रा का उत्पादन करती है तो फर्म की हानि शून्य हो जाती है तथा उसके लाभ भी शून्य होंगे क्योंकि इस स्थिति में कुल आगम तथा कुल लागत बराबर TR=TC है। अर्थशास्त्र की भाषा में **बिंदु A** को जहां पर फर्म के कुल **लाभ शून्य** हैं तथा **हानि भी शून्य** है **समविच्छेद बिंदु Break Even Point** कहा जाता है। OM2 तक के उत्पादन के किसी स्तर पर भी फर्म को लाभ प्राप्त हो रहे हैं क्योंकि इस स्थिति में कुल आगम, कुल लागत से अधिक है। तथा M2 बिंदु पर फर्म के लाभ शून्य हो जाते हैं। अतएव **बिंदु B** को भी **समविच्छेद बिंदु Break Even Point** कहा जाता है। बिंदु B के पश्चात TC वक्र TR वक्र के ऊपर की ओर उठने लगती है। इस रेखा चित्र से पता चलता है कि फर्म OM मात्रा का उत्पादन कर रही है तो TR तथा TC का अंतर RS अधिकतम है। π वक्र से ज्ञात होता है कि उत्पादन की OM मात्रा पर फर्म को अधिकतम लाभ मिल रहे हैं। क्योंकि उत्पादन की OM मात्रा के बाद π वक्र नीचे की ओर गिरने लगता है।

6.5.3 समविच्छेद बिंदु के उपयोग (Uses of Break Even Point)

(i) यह बिक्री मूल्य के निर्धारण में मदद करता है जो वांछित लाभ देगा।

(ii) यह नियोजित पूंजी पर दिए गए प्रतिफल प्राप्त करने के लिए बिक्री की मात्रा के निर्धारण में मदद करता है।

(iii) यह मात्रा में परिवर्तन के परिणामस्वरूप लागत और लाभ का पूर्वानुमान लगाने में मदद करता है।

(iv) यह बिक्री मिश्रण में बदलाव के लिए सुझाव देता है।

(v) यह लाभप्रदता की अंतर-फर्म तुलना करने में मदद करता है।

(vi) यह उत्पादन के विभिन्न स्तरों पर लागत और आगम के निर्धारण में मदद करता है।

(vii) यह प्रबंधन के निर्णय लेने में सहायता है (जैसे, किसी उत्पाद को प्रस्तुत करना या बनाना), पूर्वानुमान, दीर्घकालिक योजना और लाभप्रदता बनाए रखना।

(viii) इससे बहुत कठिनाई और प्रयास के बिना व्यवसाय की लाभ कमाने की क्षमता का पता चलता है।

6.5.4 समविच्छेद बिंदु विश्लेषण की सीमाएँ (Limitations of Break Even Point):

1. समविच्छेद बिंदु विश्लेषण इस धारणा पर आधारित है कि सभी लागतों और खर्चों को स्पष्ट रूप से बंधी और परिवर्तनीय घटकों में अलग किया जा सकता है। हालांकि, व्यवहार में बंधी और परिवर्तनीय लागतों का स्पष्ट रूप से विभाजन प्राप्त करना संभव नहीं होता।

2. यह मानता है कि बंधी लागत उत्पादन के सभी स्तरों पर स्थिर रहती है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि बंधी लागत उत्पादन के एक निश्चित स्तर से परे बदलती हैं।

3. यह मानता है कि परिवर्तनीय लागत उत्पादन की मात्रा के साथ अनुपातिया रूप से बदलती है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि व्यावहारिक रूप से यह बदलती है परंतु यह आवश्यक नहीं कि यह आनुपातिक रूप से बदले

4. यह धारणा कि बिक्री मूल्य अपरिवर्तित रहता है, एक सीधी आगम रेखा देता है जो सच नहीं हो सकता है। किसी उत्पाद की बिक्री कीमत बाजार की मांग और आपूर्ति, प्रतिस्पर्धा आदि जैसे कुछ कारकों पर निर्भर करती है, इसलिए यह, शायद ही स्थिर रहती है।

5. यह धारणा कि केवल एक उत्पाद का उत्पादन किया जाता है या वह उत्पाद मिश्रण अपरिवर्तित रहेगा, व्यवहारिक प्रतीत नहीं होती।

6. उत्पादों की एक किस्म पर बंधी लागत का विभाजन एक समस्या बन जाती है।

7. यह मानता है कि व्यवसाय की स्थितियां बदल नहीं सकती हैं जो सच नहीं है।

6.6 अपनी प्रगति की जाँच करें (Check Your Progress)

6.6.1 कोष्ठकों में दिए गए शब्द में से रिक्त स्थान भरें;

1. भूमि, बीमा, प्रबंध आदि पर किए जाने वाले खर्च .... लागत कहलाते हैं। (बंधी/घटती-बढ़ती)
2. श्रमिकों, कच्चे माल पर किए जाने वाले खर्च .... लागत कहलाता है। (बंधी/घटती-बढ़ती)
3. औसत बंधी लागते उत्पादन के विभिन्न स्तर पर .... रहती है। (बढ़ती है/घटती है/स्थिति रहती है)
4. घटती-बढ़ती लागते उत्पादन के विभिन्न स्तर पर .... है। (स्थिर रहती है/बदलती रहती है)
5. कुल लागत को उत्पादन की मात्रा से .... पर औसत लागत ज्ञात की जाती है। (भाग देने/जोड़ने/गुणा करने)
6. औसत लागत वक्र .... होती है। (सरल रेखा/Uआकार की)
7. बंधी व घटती-बढ़ती लागत का अंतर .... में पाया जाता है। (अल्पकाल/दीर्घकाल)
8. जब औसत लागत घट रही होती है तो सीमांत लागत वक्र औसत लागत वक्र के .... रहता है। (नीचे/ऊपर)
9. औसत लागत वक्र के .... बिंदु पर औसत तथा सीमांत लागत बराबर होते हैं। (न्यूनतम/उच्चतम)
10. अतिरिक्त लागत का संबंध .... लागत से है। (कुल लागत/औसत लागत/सीमांत लागत)
11. श्रमिकों तथा कच्चे माल पर किया गया व्यय .... लागत कहलाती है। (बंधी/परिवर्तनशील)

6.6.2 सही विकल्प चुनिए;

1. पूर्ण प्रतियोगिता बाजार में औसत आगम तथा सीमांत आगम का स्वरूप होता है।

A. AR=MR B. AR>MR C. AR<MR D. AR=MC

2. सम-विच्छेद बिंदु से अभिप्राय है।

A. TR<TC B. TR>TC C. TR=TC D. MR=AR

3. पूर्ण प्रतियोगिता बाजार में प्रत्येक फर्म।

A. कीमत प्राप्तकर्ता एवं मात्रा निर्धारिक होती है B. मात्रा प्राप्तकर्ता एवं कीमत निर्धारक होती है C. केवल कीमत निर्धारक होती है D. केवल मात्रा प्राप्तकर्ता होती है।

6.7 सारांश (Summary)

इस अध्ययन में हमने उत्पादन लागत की अवधारणा के बारे में समझा है जिसमें हमने जाना की मौद्रिक लागत मुख्य रूप से दो प्रकार की होती है जिसमें स्पष्ट लगते और निहित लगते शामिल है। समय अवधि के आधार पर हमने लागतो को दो भागों में वर्गीकृत किया है, अल्पकालीन लागते और दीर्घकालीन लागते। इस अध्याय में हमने

अल्पकालीन लागतो से संबंधित विभिन्न अवधारणाओं को जैसे कि अल्पकालीन कुल लागत, अल्पकालीन औसत लागत, अल्पकालीन सीमांत लागत और ठीक इसी प्रकार से दीर्घकालीन कुल लागत, दीर्घकालीन औसत लागत और दीर्घकालीन सीमांत लागत के बारे में समझा है। अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन लागतो के संबंध को हमने इस अध्याय में समझा है। विभिन्न लागत वक्रों की आकार और प्रकार के बारे में हम पढ़ चुके हैं। कुल लागत के दो भाग होते हैं, स्थिर लागत, परिवर्तनशील लागत । इन दो भागों से ही औसत लागत के भी दो भाग सामने आते हैं, औसत स्थिर लागत तथा औसत परिवर्तनशील लागत। सीमांत लागत कुल लागत में कुल परिवर्तनशील लागत पर निर्भर करती है। उत्पादन में वृद्धि के साथ कुल लागत में प्रति इकाई स्थिर लागत का अंश घटता है। सीमांत लागत से अभिप्राय वस्तु की अंतिम इकाई के उत्पादन लागत से है।

इसी अध्याय में हमने आगम की विभिन्न अवधारणाओं को समझा तथा विभिन्न आगम वक्रों के आकार एवं प्रकार को समझते हुए उनमें आपसी संबंध को समझने का प्रयास किया। आगम की मुख्य रूप से तीन अवधारणाएं इस अध्याय में हमने पड़ी है, कुल आगम, औसत आगम, सीमांत आगम। अंत में लागत तथा आगम विश्लेषण का उपयोग करते हुए हमने एक पूर्ण प्रतियोगी फर्म का सम विच्छेद बिंदु की अवधारणा को विस्तार से समझा है।

6.8 कीवर्ड (Keywords)

उत्पादन लागत- उत्पादन के साधनों का प्रयोग करने के लिए जो रकम खर्च करनी पड़ती है उसे उत्पादन लागत कहा जाता है।

स्पष्ट लागत- एक फर्म को कई आगत इनपुट्स खरीदने या किराए पर लेने पड़ते हैं फर्म द्वारा उन बाहरी व्यक्तियों को जो उसे श्रम श्रम कच्चा माल इंधन यातायात चालक शक्ति आदि की आपूर्ति करते हैं मौद्रिक भुगतान करने पड़ते हैं फर्म द्वारा दूसरों को किए गए इन मौद्रिक भुगतान ओं को स्पष्ट लागते कहा जाता है।

निहित लागत- एक फार्म के अपने साधनों के प्रयोग की अवसर लागत को निहित लागत कहा जाता है।

औसत लागत- किसी वस्तु की प्रति इकाई लागत को औसत लागत कहा जाता है कुल लागत को उत्पादन की मात्रा से भाग देने पर औसत लागत ज्ञात होती है।

सीमांत लागत- किसी वस्तु की एक अतिरिक्त इकाई का उत्पादन करने से कुल लागत में जो अंतर आता है उसे सीमांत लागत कहते हैं।

कुल लागत- एक वस्तु के विभिन्न स्तरों का उत्पादन करने के लिए जो कुल धन व्यय करना पड़ता है उसे कुल लागत कहते हैं।

कुल आगम- एक फर्म अपने उत्पादन की निश्चित मात्रा बेचकर जो धनराशि प्राप्त करती है, उसे कुल आगम कहते हैं।

सीमांत आगम- सीमांत आगम से अभिप्राय किसी वस्तु की एक अधिक या कम इकाई बेचने से कुल आगम में होने वाले परिवर्तन से है

औसत आगम- औसत आगम एक वस्तु की बिक्री से प्राप्त प्रति-इकाई आगम है। औसत आगम का अनुमान कुल आगम को वस्तु की बेची गई कुल मात्रा से भाग देकर लगाया जाता है।

समविच्छेद बिंदु- वह बिंदु जहां पर फर्म के कुल लाभ शून्य हैं तथा हानि भी शून्य है समविच्छेद बिंदु Break Even Point कहा जाता है।

6.9 स्व-मूल्यांकन परीक्षण (Self-Assessment Test)

1. कुल लागत, औसत लागत तथा सीमांत लागत के क्या अर्थ है? औसत लागत तथा सीमांत लागत के आपसी संबंध की सचित्र व्याख्या कीजिए।

2. एक फर्म की दीर्घकालीन औसत लागत वक्र का निर्माण कैसे होता है? यह U आकार की क्यों होती है?

3. आगम की विभिन्न अवधारणाओं का वर्णन करते हुए रेखा चित्र की सहायता से इनके आपसी संबंध को समझाइए।

4. सम विच्छेद बिंदु से क्या अभिप्राय है चित्र सहित विस्तार से व्याख्या कीजिए।

6.10 उत्तर आपकी प्रगति की जांच करने के लिए (Answers to Check Your Progress)

उत्तर 6.6.1- 1.बंधी, 2.घटती-बढ़ती, 3.घटती है, 4.बदलती रहती है, 5.भाग देने, 6. Uआकार की, 7.अल्पकाल, 8.नीचे, 9.न्यूनतम, 10.सीमांत लागत, 11.परिवर्तनशील

उत्तर 6.6.2- 1.A, 2.C, 3.A

6.11 संदर्भ/सुझाई गई पुस्तकें (References/ Suggested Readings)

आहूजा, एच. एल. उच्चतर आर्थिक सिद्धांत (व्यष्टि पर आर्थिक विश्लेषण) एस चांद पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली

झिंगन, एम. एल. (2015) व्यष्टि अर्थशास्त्र वृंदा पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली

मैनकीव, एन. ग्रेगरी व्यष्टि अर्थशास्त्र के सिद्धांत सेनगेज लर्निंग, अमेरीका

कौट्सोयियनिस, ए. आधुनिक व्यष्टि अर्थशास्त्र मैकमिलन प्रेस लिमिटेड, दिल्ली